■ तेजस्वी प्रणः हर परिवार में सरकारी नौकरी, वक्फ कानून पर रोक का वादा - 12

■ एमसीएक्स में तकनीकी खराबी से 4 घंटे देर से खुला बाजार जांच शुरू - 12

■ पूर्वी एशिया में शांति, स्थिरता ओर आर्थिक समृद्धि को देंगे बढ़ावा - 13

■ पांच टी-20 मैचों की श्रृंखला : नई ऊर्जा और रणनीति के साथ खेलेगा भारत - 14

आज का मौसम | 29.0° अधिकतम तापमान | 19.0° न्यूनतम तापमान | सूर्योदय 06.22 | सूर्यास्त 05.30

एक सम्पूर्ण दैनिक अखबार

अमृत विचार

| बरेली |

www.amritvichar.com

2 राज्य | 6 संस्करण
■ लखनऊ ■ बरेली ■ कानपुर ■ मुरादाबाद ■ अयोध्या ■ हल्द्वानी

कार्तिक शुक्ल पक्ष सप्तमी 9:23 उपरांत अष्टमी विक्रम संवत 2082

बुधवार, 29 अक्टूबर 2025, वर्ष 6, अंक 339, पृष्ठ 14 ■ मूल्य 6 रुपये

आंध्र में तट से टकराया चक्रवात मोंथा, तूफान में तब्दील

- मछलीपट्टनम और काकीनाडा से देर रात टकराया, एनडीआरएफ की 45 टीमें तैनात
- 4 राज्यों से 50 हजार लोग हटाए, 120 ट्रेन और 52 फ्लाइट कैंसिल

नई दिल्ली/अमरावती, एजेंसी

प्रचंड चक्रवाती तूफान मोंथा मंगलवार देर रात आंध्र प्रदेश के तट से टकरा गया है। भारत मौसम विज्ञान विभाग (आईएमडी) ने मंगलवार देर शाम सोशल मीडिया मंच 'एक्स' के अपने आधिकारिक हैंडल पर किए एक पोस्ट में कहा कि तूफान की नवीनतम स्थिति के मुताबिक इसके तट से टकराने की प्रक्रिया शुरू हो गई है।

चक्रवाती तूफा के प्रभाव से समुद्र में लहरों की भारी उथल-पुथल जारी है। आईएमडी के मुताबिक कुछ घंटों में यह मौसम प्रणाली एक गंभीर चक्रवाती तूफान के रूप में मछलीपट्टनम और कलिंगपट्टनम के बीच काकीनाडा के आसपास आंध्र प्रदेश के तट को पार करेगी, जिसमें अधिकतम 90 से 100 किमी प्रति घंटे की गति से हवा चलेगी और यह गति 110 किमी प्रति घंटे तक हो सकती है। चक्रवात के कारण 4 राज्यों से 50 हजार लोग प्रभावित हुए, साथ ही 120 ट्रेन और 52 फ्लाइट कैंसिल की गईं। वहीं राष्ट्रीय आपदा मोचन बल (एनडीआरएफ) ने चक्रवात 'मोंथा' के मद्देनजर राहत और बचाव कार्यों के लिए बचाव कर्मियों की 45 टीम तैनात की हैं। यह चक्रवात मुख्य रूप से तटीय आंध्र प्रदेश और ओडिशा को प्रभावित करेगा तथा इसके कारण झारखंड और तमिलनाडु में भारी बारिश का पूर्वानुमान है।

एनडीआरएफ ने मंगलवार सुबह बताया कि इनमें से 25 दलों को विभिन्न राज्यों में पहले से तैनात किया गया है, जबकि शेष को 'बैकअप' के रूप में रखा गया है। आंध्र प्रदेश में 10 टीम, ओडिशा में छह, तमिलनाडु और तेलंगाना में तीन-तीन, छत्तीसगढ़ में दो और पुडुचेरी में एक टीम तैनात की गई है। थाई भाषा में 'मोंथा' का अर्थ सुगंधित फूल होता है।

आंध्र प्रदेश : चक्रवात मोंथा के कारण कृष्णा जिले के मंगिनापुडी तट पर समुद्र में मची उथल-पुथल।

ओडिशा में भारी बारिश से भूस्खलन, जनजीवन प्रभावित, 2,000 से अधिक आपदा केंद्र खोले

भुवनेश्वर। ओडिशा के तटीय और दक्षिणी जिलों में भीषण चक्रवाती तूफान 'मोंथा' की वजह से मंगलवार को भारी बारिश होने से भूस्खलन हुआ, घरों को नुकसान पहुंचा और कई जगह पेड़ भी उखड़ गए। दक्षिणी ओडिशा के आठ जिलों मलकानगिरी, कोरापुट, रायगढ़ा, गजपति, गंजम, कंधमाल, कालाहांडी और नवरंगपुर से नुकसान की प्रारंभिक खबरें प्राप्त हुई है। हालांकि, क्षेत्र के कुल 15 जिलों में जनजीवन प्रभावित हुआ है।

गजपति जिले के अनाका ग्राम पंचायत से प्राप्त जानकारी के अनुसार, पास की पहाड़ियों से बड़े-बड़े पत्थर गिरे, जिससे पांच गांवों की सड़कें अवरुद्ध हो गईं। विशेष राहत आयुक्त कार्यालय के एक अधिकारी ने बताया, चक्रवात के राज्य से गुजरने के बाद विभिन्न जिलों से हुए नुकसान की रिपोर्ट संकलित की जाएगी। ओडिशा के दक्षिणी जिलों में 2,000 से अधिक आपदा राहत केंद्र खोले गए हैं। मुख्यमंत्री ने कहा कि एनडीआरएफ, ओडीआरएए) और अग्निशमन सेवा के कर्मियों वाली 153 बचाव टीमें (6,000 से ज्यादा कर्मी) संवेदनशील स्थानों पर तैनात हैं।

ओडिशा में भूस्खलन से गजपति जिले के मार्ग पर फैला मलबा।

ब्रीफ न्यूज

प्रशांत किशोर का नाम दो राज्यों की मतदाता सूची में दर्ज, विवाद

पटना/कोलकाता। जन सुराज पार्टी के संस्थापक प्रशांत किशोर मंगलवार को उस समय विवादों में घिर गए जब यह सामने आया कि वह कथित तौर पर अपने गृह राज्य बिहार के साथ ही पड़ोसी राज्य पश्चिम बंगाल में भी मतदाता के रूप में पंजीकृत हैं। पश्चिम बंगाल में एक निर्वाचन अधिकारी ने बताया कि आधिकारिक रिकॉर्ड के अनुसार पश्चिम बंगाल में मतदाता के रूप में पंजीकृत किशोर का पता 121, कालीघाट रोड के रूप में दर्ज है, जो कोलकाता के भवानीपुर विधानसभा क्षेत्र में तृणमूल कांग्रेस मुख्यालय का पता है। भवानीपुर विधानसभा क्षेत्र बंगाल की मुख्यमंत्री और तृणमूल प्रमुख ममता बनर्जी का निर्वाचन क्षेत्र है।

राष्ट्रपति राफेल लड़ाकू विमान से भरेंगी उड़ान

नई दिल्ली। राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू बुधवार को हरियाणा में अंबाला वायु सेना अड्डे से राफेल लड़ाकू विमान में उड़ान भरेंगी। पहलगाम में 22 अप्रैल को आतंकवादी हमले के जवाब में भारत द्वारा शुरू किए गए ऑपरेशन सिंदूर के दौरान राफेल लड़ाकू विमानों का इस्तेमाल किया गया था। पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम और प्रतिभा पाटिल ने क्रमश: आठ जून 2006 और 25 नवंबर 2009 को पुणे के पास लोहेगांव स्थित वायुसेना अड्डे से सुखोई-30 एमकेआई लड़ाकू विमान से उड़ान भरी थी।

8वें वेतन आयोग के गठन सम्बंधी प्रावधानों को केंद्र ने दी मंजूरी

50 लाख कर्मी और 69 लाख पेंशनरों को होगा फायदा, सेवानिवृत्त जज रंजना प्रकाश को आयोग की कमान

नई दिल्ली, एजेंसी

केंद्र सरकार ने मंगलवार को आठवें केंद्रीय वेतन आयोग के गठन से संबंधित नियमों एवं शर्तों को मंजूरी दे दी। आयोग 18 महीने में अंतिम रिपोर्ट देगा लेकिन एक जनवरी, 2026 से ही उसकी सिफारिशें प्रभावी होने की संभावना है। इन सिफारिशों से केंद्र सरकार के करीब 50 लाख कर्मचारी और 69 लाख पेंशनभोगी लाभान्वित होंगे। इसके साथ ही इसकी अनुशंसाओं का प्रभाव राज्य सरकारों के कर्मचारियों के वेतन ढांचे पर भी पड़ेगा। उच्चतम न्यायालय की सेवानिवृत्त न्यायाधीश रंजना प्रकाश देसाई को आयोग की कमान सौंपी गई है।

आयोग अपनी अंतिम रिपोर्ट 18 महीनों में देगा, जबकि समय-समय पर अंतरिम रिपोर्टें भी देता रहेगा। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में हुई केंद्रीय मंत्रिमंडल की बैठक में आठवें वेतन आयोग के गठन से संबंधित नियमों एवं शर्तों को मंजूरी दी गई। सूचना प्रसारण मंत्री अश्विनी वैष्णव ने संवाददाताओं को इस फैसले की जानकारी दी। मंत्रिमंडल का यह निर्णय आयोग को स्थापित करने की जनवरी, 2025 में दी गई सैद्धांतिक मंजूरी के नौ माह बाद आया है। यह फैसला बिहार विधानसभा के लिए छह एवं 11 नवंबर को होने वाले मतदान के ऐन वक्त पहले लिया गया है। वैष्णव ने आयोग की सिफारिशें लागू होने की तारीख के बारे में पूछे जाने पर कहा, इसकी विशिष्ट तिथि अंतरिम रिपोर्ट आने के बाद ही तय की जाएगी, लेकिन ज्यादा संभावना है कि यह एक जनवरी, 2026 से प्रभावी हो जाएगी।

आमतौर पर हर 10 वर्ष के अंतराल पर केंद्रीय कर्मचारियों के लिए वेतन आयोग की सिफारिशें लागू की जाती हैं। इस परिपाटी को देखते हुए आठवें वेतन आयोग की सिफारिशों के भी जनवरी, 2026 से लागू किए जाने की संभावना है। मंत्रिमंडल ने न्यायमूर्ति देसाई को आयोग का प्रमुख बनाने के साथ भारतीय प्रबंध संस्थान (आईआईएम), बेंगलुरु के प्रोफेसर पुलक घोष को अंशकालिक सदस्य और पेट्रोलियम सचिव पंकज जैन को सदस्य-सचिव बनाने का भी फैसला किया। न्यायमूर्ति देसाई इस समय भारतीय प्रेस परिषद की चेयरमैन हैं। इससे पहले वह जम्मू-कश्मीर परिसीमन आयोग और उत्तराखंड समान नागरिक संहिता की मसौदा समिति की अध्यक्ष भी रह चुकी हैं।

उच्चतम न्यायालय से सेवानिवृत्ति के बाद यह उनका चौथा प्रमुख कार्यभार होगा। आधिकारिक बयान के मुताबिक, आयोग अपनी सिफारिशों को अंतिम रूप देते समय केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमों और निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए प्रचलित वेतन संरचना, लाभ एवं कार्य परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन करेगा।

- 18 महीने में आएगी रिपोर्ट, केंद्रीय मंत्रिमंडल की बैठक में लिए गए कई अहम फैसले

राज्यों और कर्मचारी संगठनों से परामर्श के बाद अंतिम रूप

आठवें वेतन आयोग के नियमों एवं शर्तों को विभिन्न मंत्रालयों, राज्यों और कर्मचारी संगठनों से परामर्श के बाद अंतिम रूप दिया गया है। आम तौर पर वेतन आयोगों की सिफारिशें हर 10 वर्ष में लागू होती हैं। पिछला यानी सातवां वेतन आयोग फरवरी, 2014 में गठित हुआ था और उसकी सिफारिशें एक जनवरी, 2016 से लागू की गई थीं। सरकार ने कहा कि आठवां वेतन आयोग देश में वित्तीय अनुशासन और कर्मचारी कल्याण के बीच संतुलन साधने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।

गैर-यूरिया उर्वरकों पर 37,952 करोड़ की सब्सिडी

नई दिल्ली। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने मंगलवार को चालू 2025-26 रबी सत्र के लिए गैर-यूरिया उर्वरकों फॉस्फोरस और सल्फर पर 37,952 करोड़ रुपये की सब्सिडी को मंजूरी दी। हालांकि, नाइट्रोजन और पोटाश के लिए सब्सिडी दर में बदलाव नहीं किया गया है। ये दरें एक अक्टूबर, 2025 से 31 मार्च, 2026 तक प्रभावी रहेंगी। प्रधानमंत्री मोदी की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल ने चालू रबी सत्र के लिए फॉस्फेट सब्सिडी को 43.60 रुपये प्रति किग्रा से बढ़ाकर 47.96 रुपये प्रति किग्रा कर दिया है।

जयपुर में हाईटेंशन लाइन के संपर्क में आई बस, पूरनपुर के पिता-पुत्री जिंदा जले

हादसे के बाद बस में आग लगने से उठता धुआं।

- जयपुर के मनोहरपुर में मंगलवार सुबह हुआ भीषण हादसा कई घायल
- हादसे की खबर से पूरनपुर के शेरपुर कलां में मचा कोहराम

संवाददाता, पीलीभीत/जयपुर

अमृत विचार : जयपुर से 50 किलोमीटर दूर मनोहरपुर इलाके में मंगलवार सुबह हादसे ने परिवारों की खुशियां छीन लीं। पूरनपुर कोतवाली क्षेत्र के गांव शेरपुर कलां के मोहल्ला नौगवां निवासी मजदूरों को लेकर जा रही डबल डेकर बस हाईटेंशन लाइन से छू गई थी।

करंट लगने के साथ ही बस में रखे गैस सिलेंडर फट गए और बस आग का गोला बन गई। इस हादसे में पूरनपुर क्षेत्र के गांव शेरपुर कला निवासी के नसीम मियां (45) और उनकी पुत्री सेनम (18) की मौके पर ही जलकर मौत हो गई, जबकि कई मजदूर झुलस गए। सूचना मिलते ही गांव में कोहराम मच गया। मृतकों के परिवार वाले जयपुर के लिए रवाना हो गए। बताते हैं कि हादसे में मजदूर सोमवार शाम पूरनपुर कस्बे के स्टेशन चौराहे से बरेली के बहेड़ी निवासी बस मालिक आरिफ की बस में सवार हुए थे। वह जयपुर के मनोहरपुर क्षेत्र के एक ईंट भट्ठे पर मजदूरी करने जा रहे थे। बस को एक ठेकेदार ने बुक कराया था।

मंगलवार सुबह जब बस ईंट भट्ठे से महज आधा किलोमीटर दूर थी, तभी वह हाईटेंशन लाइन से टकरा गई। इसके बाद सिलेंडर फटने लगे और पूरी बस आग की लपटों में घिर गई। कंडक्टर ने बस मालिक आरिफ को हादसे की जानकारी दी। बताया कि ठेकेदार के साथ भेजे गए युवक ने बस को खुद चलाने की जिद की थी और इसी दौरान यह हादसा हो गया।

डॉक्टरों का ध्यान रखना हमारी जिम्मेदारी, नहीं तो समाज माफ नहीं करेगा

- सुप्रीम कोर्ट ने की टिप्पणी, कहा- कोविड में मृत प्राइवेट डॉक्टरों को सरकारी बीमा का लाभ मिले

नई दिल्ली, एजेंसी

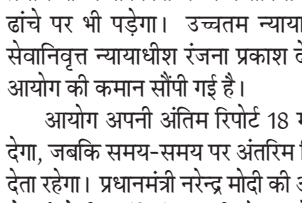

सुप्रीम कोर्ट ने निजी क्लीनिक, औषधालयों और गैर-मान्यता प्राप्त अस्पतालों में कोविड-19 से लड़ते हुए जान गंवाने वाले चिकित्सकों और स्वास्थ्य कर्मियों को बीमा पॉलिसी में शामिल नहीं किए जाने के खिलाफ दायर याचिका पर अपना फैसला सुरक्षित रखते हुए मंगलवार को कहा कि यदि न्यायपालिका चिकित्सकों का ध्यान नहीं रखेगी और उनके लिए खड़ी नहीं होगी तो समाज उसे माफ नहीं करेगा।

न्यायमूर्ति पीएस नरसिम्हा और न्यायमूर्ति आर महादेवन की पीठ ने कहा कि सरकार को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि बीमा कंपनियां वैध दावों का निपटारा करें और यह धारणा सही नहीं है कि निजी चिकित्सक मुनाफा कमाने के लिए काम कर रहे हैं। पीठ ने कहा, अगर हम अपने चिकित्सकों का ध्यान नहीं रखेंगे तो समाज हमें माफ नहीं करेगा। कहा, अगर आपके अनुसार यह शर्त पूरी होती है कि वे कोविड-19 से निपटने के लिए काम कर रहे थे और कोविड के कारण उनकी मौत हुई है तो आपको बीमा कंपनी को भुगतान करने के लिए बाध्य करना चाहिए। सिर्फ इसलिए कि वे सरकारी ड्यूटी पर नहीं थे, यह धारणा सही नहीं है कि वे मुनाफा कमा रहे थे। केंद्र को पीएम बीमा योजना के अलावा उपलब्ध अन्य समान या समानांतर योजनाओं के आंकड़े और जानकारी उपलब्ध कराने का निर्देश दिया।

पीठ ने योजानाओं के मांगे आंकड़े

पीठ ने कहा, हमें आंकड़े और प्रधानमंत्री योजना के अलावा उपलब्ध अन्य समानांतर योजनाओं के बारे में कुछ जानकारी दीजिए। हम सिद्धांत निर्धारित करेंगे और उसके आधार पर बीमा कंपनी से दावे किए जा सकेंगे। बीमा कंपनी को हमारे फैसले के आधार पर विचार करना और आदेश पारित करना है। शीर्ष अदालत मुंबई उच्च न्यायालय के नौ मार्च 2021 के आदेश के खिलाफ दायर प्रदीप अरोड़ा और अन्य की याचिका पर सुनवाई कर रही थी।

46 आईएएस अधिकारियों का तबादला

- यूपी में बड़ा प्रशासनिक फेरबदल, कई मंडलायुक्त, जिलाधिकारी बदले

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

अमृत विचारः प्रदेश सरकार ने मंगलवार को प्रशासनिक महकमे में बड़ा फेरबदल किया है। कार्मिक विभाग द्वारा जारी शासनादेश में कुल 46 आईएएस अधिकारियों का स्थानांतरण किया गया है। इनमें कई मंडलायुक्त, जिलाधिकारी और सचिव स्तर के अधिकारी शामिल हैं।

शासन के अनुसार मंडलायुक्त विन्ध्याचल बाल कृष्ण त्रिपाठी को सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग बनाया गया है। राजेश प्रकाश को महानिदेशक मत्स्य से मंडलायुक्त विन्ध्याचल और धनलक्ष्मी के. को सचिव मानवाधिकार आयोग से महानिदेशक मत्स्य बनाया गया है। संजय कुमार को महानिदेशक सार्वजनिक उद्यम के साथ मानवाधिकार आयोग के सचिव का अतिरिक्त प्रभार मिला है। डॉ. रूपेश को ऊर्जा विभाग के प्रबंध निदेशक से मंडलायुक्त सहारनपुर और अटल कुमार राय को सहारनपुर मंडलायुक्त से सचिव गृह विभाग बनाया गया है। भानु चंद्र गोस्वामी को सचिव राजस्व से मंडलायुक्त मेरठ और डॉ. हृषिकेश भास्कर को मेरठ मंडलायुक्त से सचिव राजस्व, राहत आयुक्त एवं चकबंदी आयुक्त बनाया गया है।

सीएसए के कुलपति ने दिया त्यागपत्र

कानपुर। चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय (सीएसए) कानपुर के कुलपति डॉ. आनंद कुमार सिंह ने त्यागपत्र दे दिया है। मंगलवार को कुलाधिपति एवं राज्यपाल आनंदी बेन पटेल ने उनके त्यागपत्र को स्वीकार कर लिया और मंडलायुक्त के विजयेंद्र पांडियन को कार्यभार सौंपा है।

पिछले माह दीक्षांत समारोह के दौरान संस्थान में अव्यवस्था को लेकर राज्यपाल ने सवाल खड़े किए थे। बताया जा रहा है कि कुलपति इस बात से नाराज थे और उन्होंने त्यागपत्र दे दिया। कुलपति ने त्यागपत्र की वजह पारिवारिक कारण बताया है।

दिल्ली में कृत्रिम बारिश का पहला परीक्षण

- आईआईटी-कानपुर के सहयोग से कुछ इलाके में कराई गई बारिश

नई दिल्ली, एजेंसी

आईआईटी-कानपुर के सहयोग से मंगलवार को राष्ट्रीय राजधानी के कुछ हिस्सों में कृत्रिम बारिश का पहला परीक्षण किया गया।

अगले कुछ दिनों में इस तरह के और परीक्षण किए जाने की योजना है। कृत्रिम बारिश की खातिर रसायनों का छिड़काव करने के लिए विमान ने कानपुर से दिल्ली के लिए उड़ान भरी और मेरठ की हवाई पट्टी पर उतरने से पहले बुराड़ी, उत्तरी करोल बाग और मयूर विहार जैसे क्षेत्रों में छिड़काव किया। दिल्ली के पर्यावरण मंत्री मनजिंदर सिंह सिरसा ने कहा, सेसना विमान ने कानपुर से उड़ान भरी। इसने 8 चरणों में रसायनों का छिड़काव किया।

100 किलोमीटर के क्षेत्र में कराई जा सकती है बारिश

आईआईटी कानपुर के निदेशक प्रो. मणीन्द्र अग्रवाल के मुताबिक दिल्ली ट्रायल का परीक्षण हो चुका है। अब केवल बादलों का इंतजार है, जैसे ही अनुकूल मौसम बनेगा, दिल्ली की हवा को राहत देने के लिए कृत्रिम बारिश करा दी जाएगी। कृत्रिम बारिश के लिए सिल्वर आयोडाइड और नमक जैसे रसायनों को मिलाकर विशेष मिश्रण तैयार किया जाता है। इसे विमान के उपकरणों में भरकर बादलों के बीच छोड़ा जाता है। इस तकनीक से लगभग 100 किलोमीटर के क्षेत्र में बारिश कराई जा सकती है।

समीक्षा | मुख्यमंत्री ने रामनगरी को विश्व की आध्यात्मिक राजधानी के रूप में विकसित करने का दिया निर्देश

अयोध्या बनेगी आस्था, भव्यता और आधुनिकता का आदर्श मॉडल

- मुख्यमंत्री योगी ने की अयोध्या महायोजना-2031 की समीक्षा अनियोजित बसावट पर सख्त निर्देश

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

अमृत विचारः मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने मंगलवार को अयोध्या महायोजना-2031 की समीक्षा बैठक में कहा कि अयोध्या का विकास भव्यता, आस्था और आधुनिकता का संतुलित मॉडल होना चाहिए।

महायोजना का उद्देश्य अयोध्या को विश्व की आध्यात्मिक राजधानी और सस्टेनेबल सिटी के रूप में विकसित करना है, जहां सांस्कृतिक विरासत और आधुनिक शहरी संरचना का समुचित संतुलन हो। योगी ने अनियोजित बसावट पर सख्त निर्देश भी दिए।

मुख्यमंत्री ने अधिकारियों को निर्देश दिए कि सभी परियोजनाएं पर्यावरणीय दृष्टि से सस्टेनेबल हों तथा सरयू नदी तट और हरित पट्टियों का संरक्षण सर्वोच्च प्राथमिकता पर रखा जाए। उन्होंने कहा कि अयोध्या का विकास धार्मिक पर्यटन के साथ-साथ आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से प्रेरक उदाहरण बने।

मुख्यमंत्री ने कहा कि हाल के वर्षों में अयोध्या में तेज विकास के बीच अनियोजित प्लाटिंग और बसावट देखने को मिली है। उन्होंने चेतावनी दी कि अब हर विकास कार्य योजना और नियमों के अनुरूप ही होना चाहिए। मुख्यमंत्री योगी ने कहा कि अयोध्या आज केवल एक शहर नहीं, बल्कि भारत की आत्मा का प्रतीक है। इसे ऐसा विकसित किया जाए कि यह आने वाली पीढ़ियों के लिए आस्था, सौंदर्य और समृद्धि का संगम बने।

अयोध्या महायोजना 2031 के महत्वपूर्ण बिंदु

- 18 जोनों में विभाजित अयोध्या विकास क्षेत्र
- 23.94 लाख जनसंख्या के हिसाब से संतुलित भूमि उपयोग
- 14.31% हरित क्षेत्र, 52.56% आवासीय क्षेत्र
- सौर ऊर्जा आधारित नगरी और आधुनिक नागरिक सुविधाएं

8,594 करोड़ रुपये की 159 परियोजनाएं क्रियान्वयन को तैयार

बैठक में बताया गया कि अयोध्या में 8,594 करोड़ रुपये के निवेश से 159 परियोजनाएं क्रियान्वित होने जा रही हैं। मुख्यमंत्री ने कहा कि इन परियोजनाओं से स्थानीय युवाओं के लिए रोजगार के अवसर बढ़ेंगे और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को नई गति मिलेगी। उन्होंने कहा कि अयोध्या में स्मार्ट टाउनशिप, रिंग रोड, ग्रीनफील्ड एक्सप्रेसवे, बहुस्तरीय पार्किंग, होटल, सौर ऊर्जा संयंत्र और आधुनिक नागरिक सुविधाएं विकसित की जाएंगी।

अमृत विचार

बरेली, बुधवार, 29 अक्टूबर 2025

पीलीभीत

न्यूज ब्रीफ

हादसे की रिपोर्ट दर्ज

बीसलपुर, अमृत विचार : नगर के मोहल्ला दुर्गाप्रसाद निवासी सोनू ने पुलिस को दी तहरीर में बताया उसका भाई पंकज कश्यप 9 सितंबर को बाइक से रामलीला मैदान से बारह पत्थर चौराहे की तरफ जा रहा था। एक मोबाइल दुकान के पास पहुंचते ही अज्ञात वाहन ने बाइक में टक्कर मार दी। जिसमें उसकी मौत हो गई। पुलिस ने अज्ञात चालक के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज की है।

महिला से की मारपीट

पीलीभीत,अमृत विचार : कोतवाली क्षेत्र के मोहल्ला देशनगर निवासी मुकेश यादव ने पुलिस को तहरीर देकर बताया कि 25 अक्टूबर की दोपहर करीब तीन बजे मोहल्ले का अंशु पुत्र पंकज,उसकी मां प्रभा और अनिल मौर्य ने घर में घुसकर पत्नी नीलम के साथ मारपीट की। जान से मारने की धमकी दी गई। पुलिस रिपोर्ट दर्ज कर जांच कर रही है।

युवक को पीटा, रिपोर्ट

पीलीभीत,अमृत विचार : थाना जहानाबाद क्षेत्र के ग्राम बारनवादा निवासी प्यारेलाल ने पुलिस को तहरीर देकर बताया कि 21 अक्टूबर को रात शाम 8 बजे गांव के ही पन्नालाल ने उसे और गांव के ही श्रीराम, संपतराम और केसरीलाल के यूकेलिप्टिस के पेड़ काट दिए। जब उसने जानकारी की तो मारने की धमकी दी। करीब एक हजार पेड़ काटकर पांच लाख रुपये का नुकसान किया। पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की है।

महिला को घर से निकाला

पीलीभीत,अमृत विचार : ग्राम लालपुर निवासी पूनम गंगवार ने पुलिस को तहरीर देकर बताया कि उसका विवाह ढाई वर्ष पूर्व राजीव गंगवार निवासी नवाबगंज जिला बरेली से हुआ था। आरोप है कि दहेज में दो लाख रुपये और चार पहिया वाहन की मांग पूरी न होने पर पति राजीव गंगवार, ससुर कांताप्रसाद, सास कृतिका देवी, तहेरे ससुर विद्याराम, नंद खुशबू, सुनीता देवी, नंदोई बृजमोहन आदि ने 30 अगस्त को मारपीट कर घर से निकाल दिया। पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की है।

किशोरी लापता, रिपोर्ट

बीसलपुर, अमृत विचार : एक युवक किशोरी को प्रेम जाल में फंसाकर उसे घर से लेकर भाग गया। पीड़ित पिता ने आरोपी के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कराई। कोतवाली में दी गई तहरीर में एक महिला ने बताया 24 अक्टूबर की रात 11 बजे मोहल्ला हबीबुल्लाह खां जनूबी निवासी दिलशाद उसकी 15 वर्षीय पुत्री को भगाकर ले गया। दो लाख रुपये और जेवरात भी किशोरी ले गई है। पुलिस रिपोर्ट दर्ज कर जांच कर रही है।

पहले दिन भागवत की महिमा का किया वर्णन

बरखेड़ा, अमृत विचार: गांधी आश्रम परिसर में चल रही श्रीमद् भागवत कथा में पहले दिन सोमवार शाम को कथा प्रवक्ता आचार्य पंडित ध्रुव मिश्रा ने भागवत की महिमा का वर्णन करते हुए परीक्षित के जन्म का प्रसंग सुनाया।

उन्होंने कहा कि आज के समय में प्रायः करके व्यक्ति बहुत ज्यादा सीमित विचारों से युक्त हो गया है। जिनके विचार सीमित होते हैं वह व्यक्ति समाज के प्रति, देश के प्रति अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण नहीं कर पाता। जिसकी दृष्टि व सोच विशाल है, जो संपूर्ण राष्ट्र को अपना घर मानता है और संपूर्ण राष्ट्र वासियों को अपना मानता है। वहीं समाज का हित सोच सकता है। भागवत हमारा स्वयं से परिचय करवाते

कथा सुनाते आचार्य पंडित ध्रुव मिश्रा।

हैं। हम अपने आप को भूल चुके हैं। भागवत के माध्यम से व्यक्ति को स्वयं को पहचानने की दृष्टि प्राप्त होती है। व्यक्ति को कपट पूर्ण व्यवहार करने वाले लोगों से दूरी बनाकर रखना चाहिए। कपटी व्यक्ति बहुत खतरनाक होता है भगवान भी कहते हैं कि मैं सब प्रकार के पापियों को मुक्त करता हूं।

पीटीआर में सैलानियों के लिए जंगल सफारी हो सकता है महंगा

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

- बढ़ सकता है सफारी वाहनों का किराया, बाघ संरक्षण फाउंडेशन की बैठक में होगा निर्णय
- पर्यटन सत्र में सैलानियों के लिए प्रत्येक बुधवार को बंद रहेगा पीटीआर

अमृत विचार: पीलीभीत टाइगर रिजर्व में पर्यटन सत्र के दौरान जंगल सफारी के शौकीनों को इस बार जेबें ढीली करनी पड़ सकती हैं। आगामी पर्यटन सत्र में सफारी वाहनों का किराया बढ़ सकता है। हालांकि इसका अंतिम निर्णय बाघ संरक्षण फाउंडेशन की होने वाली बैठक में लिया जाएगा। वहीं टाइगर रिजर्व के वन्यजीवों के सुकून के लिए टाइगर रिजर्व इस बार प्रत्येक बुधवार को बंद रहेगा। इधर आने वाले पर्यटन सत्र को लेकर तैयारियां लगभग अंतिम दौर में पहुंच चुकी हैं।

पीलीभीत टाइगर रिजर्व का पर्यटन सत्र 1 नवंबर से शुरू होने जा रहा है। टाइगर रिजर्व प्रशासन की ओर से पर्यटन सत्र को लेकर

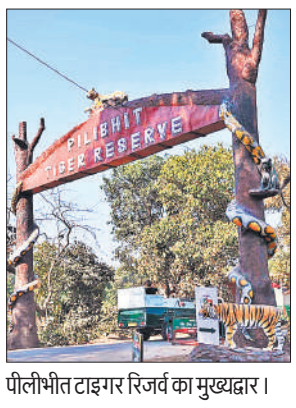

पीलीभीत टाइगर रिजर्व का मुख्यद्वार।

बुधवार को पीटीआर के दरवाजे रहेंगे बंद

पर्यटन सत्र के दौरान पीलीभीत टाइगर रिजर्व के कोर एरिया में सुबह-शाम सफारी वाहनों की आवाजाही और सैलानियों से वन्यजीवन भी प्रभावित हो रहा है। ऐसे में राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण (एनटीसीए) ने बाघ अभ्यारणों को सप्ताह में एक दिन के लिए सैलानियों के लिए बंद करने का निर्णय लिया है। इसी क्रम में प्रधान मुख्य वन संरक्षक वन्यजीव अनुराधा वेमुरी ने भेजे गए प्रस्ताव के क्रम में फील्ड डायरेक्टर विजय सिंह को पीलीभीत टाइगर रिजर्व को प्रत्येक बुधवार के लिए सैलानियों के बंद रखने के निर्देश दिए हैं। इस संबंध में पीलीभीत टाइगर रिजर्व के डिप्टी डायरेक्टर मनीष सिंह ने बताया कि आगामी पर्यटन सत्र में प्रत्येक बुधवार को टाइगर रिजर्व सैलानियों के लिए बंद रहेगा। पर्यटन सत्र से जुड़ी अन्य तैयारियां लगभग अंतिम दौर में पहुंच चुकी है। प्रत्येक कार्य पर नजर रखी जा रही है, ताकि पर्यटन सत्र के दौरान कोई अव्यवस्था न हो।

की जा रही तैयारियां अंतिम दौर में पहुंच चुकी है। सफारी मार्गों को दुरुस्त करने के साथ चूका बीच, सप्त सरोवर को आकर्षक लुक दिया जा रहा है। पर्यटन सत्र के दौरान सैलानियों की सुविधा के लिए अभी तक मुस्तफाबाद गेट और महोफ गेट पर बुकिंग काउंटर खोले गए है। इन्हीं दोनों गेटों के माध्यम से अभी तक पीलीभीत टाइगर रिजर्व में सैलानियों के सफारी वाहनों की इंट्री होती है। मगर, इस बार सैलानियों की सुविधाओं में इजाफा करते हुए तीसरे बराही रेंज गेट को खोलने का निर्णय लिया गया है। अब टाइगर रिजर्व आने वाले सैलानी तीन गेटों से प्रवेश कर सकेंगे। सैलानियों को टाइगर रिजर्व ले जाने की लिए सफारी वाहनों की व्यवस्था की गई है। इन्हीं सफारी वाहनों के माध्यम से सैलानी चूका बीच, सप्त सरोवर समेत अन्य टूरिज्म प्वाइंटों तक पहुंचते हैं। मगर, आने वाले पर्यटन सत्र में सैलानियों को जंगल में सफारी करना थोड़ा महंगा हो सकता है। दरअसल टाइगर रिजर्व प्रशासन ने सफारी वाहनों का किराया बढ़ाने का फैसला लिया है। हालांकि अभी इस पर अंतिम निर्णय नहीं लिया जा सकता है। टाइगर रिजर्व प्रशासन का कहना है कि इस पर अंतिम निर्णय पहली नवंबर को होने वाली बाघ संरक्षण फाउंडेशन की बैठक में लिया जाएगा।

उगते सूर्य को अर्घ्य देने के साथ पूरी हुई आराधना, मांगी मनौतियां

नदी घाटों, तालाबों पर उमड़ी भीड़, छठ मइया के भजनों से गुलजार रहे पूजा स्थल

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार : सूर्य उपासना का महापर्व छठ मंगलवार को उगते सूर्य को अर्घ्य देने के साथ पूरा हो गया। माथे से नाक तक दमकते सिंदूर के साथ व्रती महिलाएं पूरे उल्लास के साथ सूप में जलता दीपक लेकर घाट पहुंची। यहां उन्होंने उगते सूर्यदेव को अर्घ्य दिया और पूजा अर्चना कर व्रत का पारायण किया।

पूर्वांचल की तरह जनपद में भी छठ पर्व आस्था और श्रद्धा के साथ मनाया गया। सोमवार शाम व्रती महिलाओं ने नदी तट और घाटों पर पहुंचकर अस्ताचल सूर्य को अर्घ्य देकर छठ मैया की आराधना की। सुबह होने तक महिलाओं ने जागरण कर छठ मैया का गुणगान किया। मंगलवार भोर से लोगों के शहर के बरहा रेलवे क्रासिंग के समीप स्थित घाट पर पहुंचने का सिलसिला शुरू हो गया। व्रती महिलाएं नए वस्त्र धारण कर बांस के सूप व टोकरियों में फल, मेवा, अनाज, नारियल, मिष्ठान व गन्ना आदि लेकर पहुंचीं। पूजा स्थल पर विधि विधान से पूजा अर्चना की और पानी में खड़े होकर पल-पल सूर्य के निकलने की प्रतीक्षा की।

जलाशय में छठ पूजा का विहंगम दृश्य। ● अमृत विचार

यह दीगर बात रही कि आसमान में मंगलवार को बादलों के बीच छिपे सूर्यदेव ने दर्शन नहीं दिए। सूर्यदेव के उदय होने का समय शुरू होते ही घंटा घड़ियाल और शंख बजने लगे। शंखनाद के बीच व्रती महिलाओं ने सूर्य को अर्घ्य दिया और पति, पुत्र और परिवार की मंगलकामना के लिए प्रार्थना की। पूरी रात जागरण के बाद भी व्रतियों के चेहरों पर आस्था का उल्लास देखा गया। छठी मइया के गीत गाती और हाथ में लिए सूप और दीपक की लौ को जलाए रखने का जतन करती हुई घाट पहुंची थीं। इससे पूर्व जब व्रती महिलाएं घरों से निकली तो उनका हौंसला बढ़ाने के लिए परिवार वालों के साथ ही पास पड़ोस के लोग भी संग हो लिए। रेलवे कॉलोनी से घाट की ओर जाने वाला रास्ता छठ मइया के गीतों से गुलजार रहा। अर्घ्य देने के बाद घर लौटकर व्रती महिलाओं ने बड़े बुजुर्गों का आशीर्वाद लिया और मीठा खाकर व्रत का पारायण किया।

मझोला में भी पूजा पाठ कर की मंगलकामना

मझोला, अमृत विचार: क्षेत्र के देवहा फीडर के समीप छठ महापर्व हर्षोल्लास एवं श्रद्धा के साथ संपन्न हुआ। मंगलवार सुबह सूर्योदय से पहले ही महिलाओं ने पूजा की थाली सजाई और नदी के स्वच्छ जल में खड़े होकर सूर्यदेव

पुरुषों ने उठाया डाला और सूप

गन्ना, नारियल, पत्ते वाली हल्दी, मौसमी, शरीफा सहित कई तरह के फल गाजर, नीबू, गंगाफल, मूली, अदरक आदि से सजे डाला व सूप को घर से घाट तक लाने का कार्य पति और पुत्रों ने किया। सूर्य आराधना के गीत गाती व्रती महिलाएं नंगे पैर ही घाट की ओर उत्साह से जाती हुई दिखीं। इस दौरान श्रद्धालुओं में काफी उत्साह देखने को मिला।

पूजा के दौरान परिजनों की तस्वीर लेती बच्ची। ● अमृत विचार

बरहा रेलवे क्रासिंग पर सूर्य को अर्घ्य देने के लिए कतार में खड़ी महिलाएं।

बरहा रेलवे क्रासिंग पर सूर्य को अर्घ्य देतीं व्रतधारी महिलाएं।

को अर्घ्य अर्पित किया। व्रतियों ने अपने परिवार की सुख-शांति, संतान की दीर्घायु और समृद्धि की कामना की। उगते सूर्य को अर्घ्य देने के बाद व्रती महिलाओं ने पारण कर चार दिनों से चले आ रहे निर्जला व्रत का समापन किया। इस दौरान घाट पर श्रद्धालुओं की भारी भीड़ उमड़ पड़ी और छठ मैया की जय के जयघोष से पूरा वातावरण भक्तिमय हो उठा। यहां भाजपा जिलाध्यक्ष संजीव प्रताप सिंह, नगर पंचायत चेयरमैन निशांत प्रताप सिंह, बैजनाथ यादव, धीरेंद्र गुप्ता, राधा गुप्ता, सुनीता गुप्ता समेत बड़ी संख्या में श्रद्धालु मौजूद रहे।

ब्लॉक प्रमुख मरौरी के बहाल किए जाए वित्तीय अधिकार

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार: मरौरी ब्लॉक के क्षेत्र पंचायत सदस्यों ने ब्लॉक प्रमुख सभ्यता देवी वर्मा के सीज किए गए अधिकार बहाल करने की मांग की है। इसे लेकर डीएम को ज्ञापन सौंपा है।

क्षेत्र पंचायत सदस्यों ने डीएम को सौंप गए ज्ञापन में बताया कि मरौरी ब्लॉक प्रमुख सभ्यता देवी वर्मा की छवि धूमिल करने के लिए झूठे आरोप लगाए गए हैं। जिन बिंदुओं पर उनकी शिकायत की गई है, सभी बेबुनियाद है। 59 हजार रुपये का फर्जी हस्ताक्षर कर रुपये का जो आरोप लगा, वह प्रत्येक क्षेत्र पंचायत सदस्य, प्रधान को बैठक में शामिल होने पर मानदेय के रुप में दिए जाते हैं। जिसको बीडीओ और ब्लॉक के सचिव समेत अन्य कर्मचारियों द्वारा नामित किया जाता

कलेक्ट्रेट में ज्ञापन देने पहुंचे क्षेत्र पंचायत सदस्य। ● अमृत विचार

- क्षेत्र पंचायत सदस्यों ने डीएम को सौंपा ज्ञापन

है। किसी भी बीडीसी सदस्य ने ये शिकायत नहीं की है कि उसे मानदेय नहीं मिला। एक जनप्रतिनिधि पर आरोप लगाया कि वह बीडीसी सदस्यों पर दबाव बनाते हैं। इसके अलावा स्मृति द्वार को लेकर लगाए गए आरोपों को भी गलत बताया। कहा कि जिस समिति को कार्रवाई के लिए गठित किया गया है, उसमें एक शिकायतकर्ता है जबकि दूसरा ठेकेदार। ऐसे में ब्लॉक प्रमुख के अधिकार बहाल करने की मांग की है। पत्र देने वालों में रविंद्र वर्मा, मुकेश कुमार, कांता प्रसाद, नेतराम, धर्मपाल सिंह, आशा देवी, सतीश कुमार, नगीना, राजरानी आदि क्षेत्र पंचायत सदस्य हैं।

लापरवाही पर पांच सचिवों का एक-एक दिन का वेतन रोका

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार: डीपीआरओ की वीडियो कांफ्रेंसिंग में शामिल न होना पांच पंचायत सचिवों को महंगा पड़ गया। डीपीआरओ ने पांच सचिवों का एक-एक दिन का वेतन काटने की कार्रवाई की है।

डीपीआरओ रोहित भारती द्वारा बीते सोमवार को केंद्रीय वित्त आयोग एवं राज्य वित्त आयोग के अंतर्गत खर्च होने वाली धनराशि में कम प्रगति वाली ग्राम पंचायत की समीक्षा को वीडियो कांफ्रेंसिंग के जरिए बैठक ली थी। जिसमें संबंधित ग्राम पंचायतों के पंचायत सचिवों को शामिल होना था। बताते हैं कि समीक्षा के दौरान पूरनपुर ब्लॉक के पंचायत सचिव पंकज आर्या, अमरिया ब्लॉक के मनेंद्र सिंह, राधेश्याम यादव, बीसलपुर ब्लॉक के रितेश शुक्ला और बिलसंडा ब्लॉक के पंचायत सचिव धर्मेंद्र कुमार वीडियो

- वीडियो कांफ्रेंसिंग में शामिल होने पर डीपीआरओ ने की कार्रवाई

कांफ्रेंसिंग से नदारद रहे। सचिवों द्वारा बरती जा रही लापरवाही के चलते जनपद की स्थिति प्रदेश में और सीएम डैशबोर्ड पर अत्यंत खराब प्रदर्शित हो रही है। सचिवों की इस लापरवाही पर डीपीआरओ रोहित भारती ने पांचों लापरवाह पंचायत सचिवों का एक-एक दिन का वेतन काटने की कार्रवाई की है। समय से कार्य पूरा नहीं किए जाने पर उन पर अन्य विभागीय कार्रवाई भी अमल में लाई जाएगी। डीपीआरओ की ओर से संबंधित सचिवों को भेजे गए नोटिस में पंचायतों में व्यय प्रतिशत में प्रगति करने के निर्देश हैं। ग्राम पंचायतों में प्रगति न मिलने पर कार्रवाई की चेतावनी दी गई है। डीपीआरओ ने बताया कि लापरवाही पर पांच सचिवों का वेतन काटा गया है।

अंश ने प्रियांशु को 30-15 से हराया

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार: खेल प्रतिभाओं को मंच देने के उद्देश्य से योनेक्स सनराइज अप स्टेट सब जूनियर अंडर-15 और अंडर-17 मेजर रैंकिंग बैडमिंटन प्रतियोगिता की मंगलवार से गांधी स्टेडियम में शुरुआत हुई। प्रदेश स्तरीय प्रतियोगिता का उद्घाटन डीएम ज्ञानेंद्र सिंह ने शटलकॉक से शॉर्ट लगाकर कराया। बतौर अतिथि चेयरमैन डॉ. आस्था अग्रवाल भी शामिल हुई।आजमगढ़ के अंश यादव ने बिजनौर के प्रियांशु पांडे को 30-15 से हराया। वाराणसी के आदित्य राज ने लखनऊ के आदित्य प्रताप को 30-26 से हराया। अंडर-17 में गाजियाबाद के करण प्रताप, लखनऊ के प्रांजल गुप्ता, मथुरा के मयंक चौधरी, गाजियाबाद के विशाल चौधरी, पीलीभीत के प्रांजल कुमार, लखनऊ के अभय रस्तोगी, और गोरखपुर के वार्षिक गोद सहित

खिलाड़ियों से परिचय प्राप्त करतीं चेयरमैन डॉ .आस्था अग्रवाल। ● अमृत विचार

- पीलीभीत में मेजर रैंकिंग प्रतियोगिता की डीएम ने कराई शुरुआत, चेयरमैन भी पहुंची

कई खिलाड़ियों ने मैच जीते। अंडर-15 में कानपुर के दिव्यांश बत्रा, गाजियाबाद के निशांत, लखनऊ के अमन मेहरोत्रा, आगरा के आदित्य चतुर्वेदी, पीलीभीत के औजस दीप सिंह, वाराणसी के आदित्य राज और प्रयागराज के देवांश जायसवाल ने जीत हासिल कर अगले चरण में प्रवेश किया। अंडर-17 में लखनऊ की सारा अली, शाहजहांपुर के ओम अरोड़ा, लखनऊ की अपराजिता घोषाल और झांसी की आरुषि गर्ग ने जीत दर्ज की। इस मौके पर सीडीओ राजेंद्र कुमार श्रीवास, सिटी मजिस्ट्रेट विजय बर्तन तोमर, अधिशासी अभियंता विद्युत पंकज भारती, जिला क्रीड़ा अधिकारी जयवीर सिंह , जिला बैडमिंटन संघ के अध्यक्ष अनिल महेंद्रू, साकेत सक्सेना आदि मौजूद रहे।

पराली जलाने के नुकसान बताएगा फसल प्रबंधन प्रचार वाहन

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार: शासन-प्रशासन की तमाम सख्ती के बाद भी जनपद में पराली जलाने की घटनाएं थमने का नाम नहीं ले रही है। ऐसे में अब ग्रामीणों को पराली जलाने के कुप्रभावों के प्रति जागरुक करने के लिए गांव-गांव फसल प्रबंधन प्रचार वाहन भेजा जाएगा। मंगलवार को डीएम ने हरी झंडी दिखाकर प्रचार वाहन को रवाना किया। कृषि विभाग के अधिकारियों के मुताबिक पहले दिन प्रचार वाहन को कलीनगर तहसील भेजा गया है।

जनपद में बड़े पैमाने पर धान की पैदावार की गई है। धान कटाई का कार्य लगभग पूरा हो चुका है। धान की कटाई के बाद किसान खेतों में ही पराली को जला देते

फसल प्रबंधन प्रचार वाहन को झंडी दिखाकर रवाना करते डीएम ज्ञानेंद्र सिंह।

- डीएम ने कलेक्ट्रेट परिसर से प्रचार वाहन को झंडी दिखाकर किया रवाना
- पराली जलाने की घटनाओं की रोकथाम को लेकर प्रशासन सख्त, दौड़ रही टीमें

हैं, ताकि अगली फसल की बुवाई जल्द की जा सके। हालांकि पराली जलाना दंडनीय अपराध है, हर साल ही इसको लेकर सख्ती बरती जाती है। पराली जलाने वाले किसानों से जुर्माना भी वसूला जाता है, इसके बावजूद पराली जलाने की घटनाएं प्रकाश में आती रहती है। इधर, डीएम ज्ञानेंद्र सिंह ने फसल अवशेष प्रबंधन एवं फसल अवशेष जलाने से होने वाले प्रदूषण की रोकथाम की व्यवस्था की है। वहीं 15 सितंबर से सैटेलाइट के माध्यम से जनपद में पराली जलाने की घटनाओं की निगरानी जा रही है। निगरानी के लिए सभी तहसीलों और ब्लॉकों में अधिकारियों को जिम्मेदारी दी गई है। इसके साथ ही डीएम ने किसानों ने फसल अवशेष को न जलाकर मृदा स्वास्थ्य को बेहतर बनाने एवं पराली प्रबंधन करने के लिए अधिक से अधिक पराली को मिट्टी में मिलाकर कंपोस्ट खाद बनाकर तथा गोशालाओं या गोसेवकों को उपलब्ध कराने का अनुरोध भी किया है। इधर, तमाम सख्ती के बावजूद जनपद में पराली जलाने की घटनाएं प्रकाश में आ रही है। 15 सितंबर से अब तक 17 पराली जलाने की घटनाएं सामने आ चुकी है। संबंधित किसानों से जुर्माना भी वसूला जा चुका है। जबकि गत वर्ष पराली जलाने पर जनपद के 18 किसानों से 72500 रुपये का जुर्माना वसूला गया था।

इधर पराली जलाने के बढ़ते मामले को देखते हुए अब गांव-गांव किसानों को पराली जलाने से होने वाले नुकसान के प्रति आगाह करने के लिए फसल प्रबंधन प्रचार वाहन भेजने का निर्णय लिया है। प्रचार वाहन के संचालन को लेकर रोस्टर भी बनाया गया है। मंगलवार को डीएम ज्ञानेंद्र सिंह ने कलेक्ट्रेट परिसर में हरी झंडी दिखाकर प्रचार वाहन का रवाना किया। इस मौके पर उप कृषि निदेशक राममिलन परिहार, उप संभागीय कृषि प्रसार अधिकारी कौशल किशोर, जेई अनिल कुमार आदि मौजूद रहे।

मारपीट के मामले दो पर रिपोर्ट

पीलीभीत, अमृत विचार : तीन दिन पूर्व शहर के बरातघर में हुई मारपीट के मामले में कोतवाली पुलिस ने दो आरोपियों के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज की है।

थाना गजरौला क्षेत्र के ग्राम सिरसा सरदाह निवासी आसिफ खां ने सदर कोतवाली में तहरीर देकर बताया कि वह सेना का जवान है और मेघालय में कार्यरत है। 25अक्टूबर को वह अपनी भतीजी की शादी में हिना मैरिज हाल नकटादाना चौराहे पर आया था। रात करीब 10 बजे नौगवां पकड़िया निवासी इकबाल व हारून से उसकी कहासुनी हो गई थी। इस बात को लेकर आरोपियों ने अचानक उस पर हमला कर दिया। जिससे वह घायल हो गया। आरोपी जान से मारने की धमकी देते हुए चले गए। पुलिस ने घायल का मेडिकल कराकर आरोपियों के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कर ली है।

पालिका शिकायतों की जांच करेंगी एडीएम न्यायिक

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

- मंडलायुक्त ने दिए आदेश, 14 सभासदों ने लगाए हैं कई आरोप

अमृत विचार : नगरपालिका में बढ़ती गुटबाजी और गंभीर आरोपों के बीच अब जांच की बारी आ ही गई। सभासदों द्वारा की गई शिकायत का संज्ञान लेते हुए मंडलायुक्त ने एडीएम न्यायिक रोशनी यादव को जांच सौंपी है।

सभासदों ने नगर पालिका के जिम्मेदारों पर अभद्रता करने, कर्मचारियों के शोषण, आउटसोर्सिंग मानदेय में गड़बड़ी, नाला निर्माण और नेहरू पार्क में वित्तीय अनियमितताओं के आरोप लगाए हैं। शिकायती करने वालों में चैतन्य गंगवार, पुष्पा उपाध्याय, सुनीता सिंह, माया देवी, एहतिशाम वली खां, महनाज बेगम, सुरेश लोधी, रत्ना शुक्ला, शिखा वर्मा, शिवम श्रीवास्तव, ऊषा देवी, राजेंद्र कुमार भारती आदि सभासद हैं। उनका कहना है कि नगरपालिका में पिछले दस वर्षों से कार्यरत आउटसोर्सिंग सफाई कर्मचारियों के ईपीएफ और पीपीएफ में बड़े पैमाने पर गड़बड़ी की जा रही है। कर्मचारियों को शासन से तय 466 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से मानदेय भी नहीं दिया जा रहा है। शिकायत में यह भी कहा गया है कि नेहरू पार्क में 1.97 करोड़ रुपये की परियोजना, नौ करोड़ की लागत से बने नालों, और तीन करोड़ रुपये से खरीदी गई लाइटों में भी अनियमितताएं हैं।

शहर में आज

- सॉलिटेयर होटल में युवा सम्मेलन दोपहर 1 बजे।
- गांधी प्रेक्षागृह में भाजपा का महिला सम्मेलन दोपहर 2 बजे।
- पुलिस लाइन समेत चार स्थानों पर परिवार परामर्श केंद्र शिविर सुबह 10 बजे से।

न्यूज ब्रीफ

चोर समेट ले गए नकदी और जेवरात

बीसलपुर, अमृत विचार : चोर एक घर में धावा बोलकर नकदी-समेत जेवर समेट ले गए। मकान मालिक ने अज्ञात के खिलाफ चोरी की तहरीर दी। ग्राम खनंका उचसिया निवासी रामसरन ने पुलिस को दी तहरीर में बताया वह रविवार को अपने परिवार के साथ मकान की दूसरी मंजिल पर सो रहे थे। देर रात किसी समय चोर मकान में पीछे की दीवार में नकब लगाकर घुस गए। अलमारी व संदूक का ताला तोड़कर उसमें रखे सोने चांदी के जेवर और नकदी चोरी कर ले गए। सोमवार को घटना का पता चला। पुलिस मामले की जांच कर रही है।

घर में घुसकर युवक ने वृद्ध से की अभद्रता

बिलसंडा, अमृत विचार : एक दबंग किस्म के एक युवक ने घर में घुसकर एक वृद्ध से गाली -गलौज करते हुए अभद्रता की। मोहल्ला पक्का तालाब निवासी सुरेंद्र वर्मा ने पुलिस को दी तहरीर में बताया कि वह बुजुर्ग हैं। 27 अक्टूबर की शाम वह खाना खा रहे थे। इस बीच पड़ोसी हंसिया और लोहे की रॉड लेकर हमला करने आया। मारने के लिए पहुंच गया। दरवाजे पर प्रहार कर गाली गलौज करने लगा। डायल 112 पर सूचना के बाद पहुंची पुलिस को देखकर युवक भाग गया। एसओ सिद्धांत शर्मा ने बताया कि जांच कराई जा रही है।

जमीन के विवाद में युवक को पीटा

बिलसंडा, अमृत विचार : थाना करेली क्षेत्र के ग्राम विलासपुर निवासी अमित मिश्रा पुत्र मुरारीलाल ने पुलिस को दी तहरीर में बताया कि 14 अक्टूबर की सुबह 7 बजे वह घर के बाहर खड़े थे। सामने की तरफ स्थित जगह में प्रशांत और बंटू मिट्टी डाल रहे थे। जगह को लेकर कोर्ट में वाद विचाराधीन है। मिट्टी डालने का विरोध करने पर आरोपियों ने अपने साथी सुशील और मुनीष कै साथ मिलकर हमला कर दिया। लाठी डंडे से पिटाई की। बचने को भागे तो दोबारा पीटा। गांव के ही कुछ लोगों ने बचाया। 25 अक्टूबर को जब घर के बाहर खड़े थे तो भी धमकाया। पुलिस रिपोर्ट दर्ज कर जांच कर रही है।

केंद्र पर किसान न कोई रसीद फिर भी धान की तौल

डिप्टी आरएमओ और मंडी सचिव ने निरीक्षण कर परखे हालात, कमियां मिलने पर केंद्र प्रभारी पर जताई नाराजगी

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार : सरकारी क्रय केंद्रों पर धान खरीद की सुस्त चाल और अन्य व्यवस्थाओं को लेकर विवाद बढ़ने के बाद अधिकारियों ने निरीक्षण कर हकीकत परखी। इस दौरान किसानों से भी संवाद किया गया। वहीं, पीसीयू के मंडी समिति पीलीभीत में स्थापित चार क्रय केंद्रों पर पहुंचते ही अव्यवस्थाओं का भंडार उजागर हो गया। बिना किसान और कागजात के क्रय केंद्र प्रभारी धान की तौल करा रहे थे। संदेह की स्थिति बनी तो जमकर फटकार भी लगाई गई। हालांकि कुछ देर बाद एक किसान के पहुंचने पर उसी का धान बताया गया। डिप्टी आरएमओ ने पीयीयू के जिला प्रबंधक को संबंधित चारों क्रय केंद्रों पर पहुंचकर व्यवस्था दुरुस्त कराने और स्टॉक की जांच कराने के निर्देश दिए, रिपोर्ट भी तलब की गई है।

3 अक्टूबर से धान की खरीद की जा रही है। मंडी समिति पीलीभीत में दीपावली की छुट्टी के बाद क्रय केंद्र खुलते ही धान का अंबार लगा है। किसान कई दिन से परेशान धान बिक्री का इंतजार कर रहे हैं। क्रय केंद्रों पर अव्यवस्थाएं दूर नहीं हो पा रही है। सोमवार रात को हल्की बूंदाबांदी हुई। हालांकि इससे कोई खास नुकसान धान का नहीं हुआ। मगर, मंगलवार को भी बादल छाए रहे। बारिश के आसार बने हुए हैं। ऐसे में किसान की चिंता बरकरार है। मंगलवार सुबह डिप्टी आरएमओ वीके शुक्ला, मंडी सचिव प्रवीण कुमार अवस्थी ने टीम के साथ क्रय केंद्रों पर पहुंचकर स्थिति जानी। एक क्रय केंद्र पर धान की तौल बंद थी और केंद्र प्रभारी नदारद थे। मौजूदा कर्मचारियों ने बताया सुबह एक ट्रॉली धान की तौल हो चुकी है। किसी काम से अभी कुछ देर पहले ही क्रय केंद्र प्रभारी चले गए थे। इस पर अधिकारियों ने कड़ी नाराजगी जताई। मौसम खराब होने का हवाला देते हुए धान की तौल तेजी से करने के निर्देश दिए। फिर कुछ देर बाद क्रय केंद्र के प्रभारी भी आ गए और वाहन से जुड़े कार्य से जाने की बात कही। इस पर उन्हें दोबारा लापरवाही न बरतने की चेतावनी दी गई। एक क्रय केंद्र पर दूसरे के नंबर की पर्ची वाला धान तौल होते मिला। इस पर भी फटकार लगाई गई। इसके बाद चार नंबर टिनशेड की तरफ अधिकारी पहुंचे। यहां पर पीसीयू के केंद्र नंबर 11 पर धान की तौल चल रही थी। मगर, यहां पर कोई किसान मौजूद नहीं था। जब केंद्र प्रभारी से धान से जुड़े कागजात मांगे गए तो वह भी उनके पास नहीं थे। ऐसे में बिचौलिये का धान होने का संदेह भी गहराया। जिसके बाद कार्रवाई की चेतावनी देते हुए फटकारा। हालांकि बाद में एक किसान पहुंचा और कागजात दिखा अपना धान बताया। इसी से सटे पीसीयू क्रय केंद्र नंबर आठ और नौ पर भी अव्यवस्थाएं मिली। यहां बोरियों पर छापा (मोहर) नहीं लगाई जा रही थी। क्रय केंद्र प्रभारी को चेतावनी दी गई। पीसीयू के जिला प्रबंधक को निर्देश दिए कि जल्द ही अव्यवस्थाएं दूर हों। इसके अलावा संबंधित चारों क्रय केंद्रों का स्टॉक चेक करते हुए रिपोर्ट तलब की गई है।

एक क्रय केंद्र पर निरीक्षण के दौरान अभिलेख देखते अधिकारी। ● अमृत विचार

नाराजगी जताते डिप्टी आरएमओ वीके शुक्ला व मंडी सचिव प्रवीण कुमार अवस्थी।

- चार नंबर टिनशेड में पीसीयू के चार केंद्रों को लेकर जिला प्रबंधक से स्टॉक जांच कराकर मांगी रिपोर्ट

हाथ में धान लेकर आए किसान ने सुनाया दुखड़ा

अधिकारी निरीक्षण कर वापस लौट रहे थे। इस बीच एक किसान हाथ में पकड़ी थैली में धान लेकर पहुंचा। उसका कहना था कि वह दो दिन पहले धान लेकर आया था। उस वक्त नमी की मात्रा 17 प्रतिशत से कम थी। मगर, धान की तौल नहीं हो सकी। बीती रात हुई बूंदाबांदी में धान भीग गया। अब नमी दो प्रतिशत बढ़ गई है। इस पर धान सुखाने के बाद बिक्री कराने की सलाह अधिकारियों ने दी। ये भी बताया कि बूंदाबांदी से बचाव के लिए मंडी स्तर से इंतजाम किए जा रहे हैं।

मंडी सचिव भी दिखे सख्त, अधूरे अभिलेख पर लगाई फटकार

क्रय केंद्र पर बिना किसान और कागजात के धान की तौल पर डिप्टी आरएमओ पीसीयू के केंद्र प्रभारी की फटकार लगा रहे थे। एक गड़बड़ी मिल चुकी थी और फिर मंडी सचिव प्रवीण कुमार अवस्थी ने क्रय केंद्र के एंट्री रजिस्टर को चेक किया। इसमें भी सब कुछ आधा अधूरा निकला। इसे देख वह भी दंग रह गए और कड़ी नाराजगी जताई। शासन की मंशा के तहत धान खरीद करने और अभिलेख दुरुस्त रखने के निर्देश दिए।

शाम 6 बजे के बाद किसी हालत में न हो खरीद

मंडी समिति के कुछ क्रय केंद्रों पर देर रात तक धान खरीद करने की सूचनाएं अधिकारियों को मिल रही थी। इसे लेकर भी निरीक्षण के दौरान सख्ती की गई। डिप्टी आरएमओ ने केंद्र प्रभारियों व अन्य स्टाफ को स्पष्ट निर्देश दिए कि शाम 6 बजे के बाद किसी भी हालत में धान की खरीद नहीं होनी चाहिए। छह बजे तक भी उन किसानों के धान की तौल कराएं, जिनका धान पांच बजे से पहले नंबर लग चुका है। अगर कहीं से कोई सूचना मिली और मामला सही पाया गया तो कार्रवाई तय है।

चीनी मिल कॉलोनी में लोगों ने मनाया छठ महापर्व

- सुबह श्रद्धालुओं ने कुल देवता की पूजा अर्चना की

बीसलपुर, अमृत विचार: आस्था के पर्व छठ पूजा के लिए किसान सहकारी चीनी मिल कॉलोनी में रहने वाले पूर्वांचल के लोगों द्वारा नई सुबह पर उदय हुए सूर्य का पूजन किया गया। बता दें कि शनिवार को नहाय-खाय अनुष्ठान व्रत प्रारंभ हुआ था। रविवार को खरना व्रतधारी महिलाओं ने शाम को कुलदेवता की आराधना कर पूजन किया था। 36 घंटे निर्जला व्रत के बाद 27 अक्टूबर की शाम को अस्त होते सूर्य देव का पूजन कर अर्घ्य दिया। मंगलवार सुबह श्रद्धालुओं ने कुल देवता की पूजा अर्चना की। खरना की थाली में सिंदूर और घी मिलाकर सूर्य चक्र बनाया गया और मिट्टी के दीयों में प्रसाद रखा गया। कलश को भी सजाया गया। गुड़ और दूध से बनी खीर, पूड़ी का भोग लगाया गया। महिलाओं ने निर्जला व्रत का परायण मंगलवार को उगते सूर्य को अर्घ्य देकर किया। पूजन के समय चीनी मिल कोऑपरेटिव मजदूर यूनियन के अध्यक्ष श्याम बहादुर शर्मा, अमरजीत , राजेंद्र कुमार आदि मौजूद रहे।

फर्जी डिग्री लगाकर कराया रजिस्ट्रेशन, अब हुई रिपोर्ट

संवाददाता, बिलसंडा

- पूर्व में हुई शिकायत के बाद जांच में हुआ खुलासा

अमृत विचार : फर्जी डिग्री लगाकर हॉस्पिटल का रजिस्ट्रेशन कराकर प्रैक्टिस करने वाले झोलाछाप के खिलाफ सीएमओ के निर्देश पर कार्रवाई की गई। एमओआईसी की तहरीर पर बिलसंडा थाने में आरोपी झोलाछाप अरविंद कुमार के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज की गई है।

सीएचसी बिलसंडा के एमओआईसी डॉ. छत्रपाल ने पुलिस को तहरीर देकर बताया कि शाहजहांपुर जिले के थाना खुटार क्षेत्र के रौआ गांव निवासी अरविंद कुमार पुत्र सुंदरलाल ने वित्तीय वर्ष 2024-25 में एमबीबीएस की फर्जी डिग्री लगाकर सिद्धि विनायक हॉस्पिटल का पंजीकरण कराया था। पंजीकरण करने के बाद झोलाछाप ने हॉस्पिटल खोलकर मरीजों को गुमराह करते हुए गलत उपचार किया। इस मामले में पूर्व में शिकायत दर्ज कराई गई थी। जिसके बाद सीएमओ कार्यालय में 27 जुलाई 2023 को कार्यालय से एमबीबीएस की डिग्री का मिलान किया गया तो डिग्री फर्जी पाई गई। मामला फर्जी पाए जाने पर इस मामले में अरविंद कुमार के खिलाफ एफआईआर दर्ज कराई गई है। एसओ बिलसंडा सिद्धार्थ शर्मा ने बताया कि कूटरचित अभिलेख लगाकर हॉस्पिटल पंजीकरण कराने के मामले में एफआईआर दर्ज की गई है। मामले की विवेचना की जाएगी।

बिना छापा लगी बोरियों में धान, टोकन सिस्टम में भी मनमानी

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

अमृत विचार: ग्रामीण अंचलों के क्रय केंद्रों पर भी अव्यवस्थाएं दूर नहीं हो पा रही हैं। सराय सुंदरपुर गांव में समिति परिसर में संचालित पीसीयू के क्रय केंद्र पर भी जिम्मेदारों पर आरोप लग रहे हैं। एक किसान ने इसे लेकर विरोध भी जताया। बोरियों पर बिना छापा के ही तौल कराए जा रहे धान को भरा जा रहा था। खास बात थी कि केंद्र प्रभारी इसे सही करार देते रहे और अधिकारियों ने इसे गलत बताया। साथ ही किसान का कहना था कि वह दो दिन से इंतजार कर रहे हैं और उनका नंबर आगे बढ़ा दिया गया है। लोगों को कॉल कर संपर्क करके उनके टोकन नंबर पहले जारी कर दिए गए हैं। जबकि उनके धान की ट्रैक्टर ट्रॉलियां भी नहीं आ सकी है।

बिना छापा लगाए बोरियों में भरा जाता धान। ● अमृत विचार

बता दें कि धान खरीद के लिए पीसीयू क्रय एजेंसी का केंद्र सराय सुंदरपुर गांव में समिति परिसर में बनाया गया है। इसमें कई दिन से धीमी गति से तौल का शोर मचा हुआ है। क्रय केंद्रों पर मुहैया कराई गई बोरियों में छापा लगाने के बाद खरीदे गए धान को रखने के निर्देश दिए गए हैं। मगर, यहां पर केंद्र प्रभारी की ओर से इसका पालन ही नहीं कराया जा रहा था। खास बात थी कि इसे लेकर उनको जानकारी भी नहीं थी। परिसर में ही धान की तौल मंगलवार को चल रही थी। परिसर में मौजूद मथना गांव के किसान हरदेव सिंह का कहना था कि वह दो दिन से अपना धान लेकर क्रय केंद्र पर तौल का इंतजार कर रहे हैं। मगर उनका नंबर अभी तक नहीं आया है। इसकी प्रशासनिक अधिकारियों से भी कॉल कर वह शिकायत कर चुके हैं। ये आरोप लगाया कि केंद्र प्रभारी जिन लोगों के धान परिसर में नहीं है। उनको कॉल करके बुला रहे हैं और टोकन नंबर भी उनको पहले दिया जा रहा है। इधर, केंद्र प्रभारी का कहना था कि तौल नियमानुसार कराई जा रही है। पूर्व में कुछ लोग धान लेकर आए थे और वापस चले गए थे। इसलिए अब उनको कॉल करके नंबर लगा लिया गया है। इसे लेकर किसान और केंद्र प्रभारी के बीच कहासुनी भी हुई। फिर मामला डिप्टी आरएमओ तक पहुंचा। डिप्टी आरएमओ वीके शुक्ला ने बोरियों में छापा लगाने के बाद ही धान भरने के निर्देश दिए। साथ ही टोकन के हिसाब से धान की तौल कराने पर जोर दिया। उनका कहना है कि वह खुद भी केंद्र पर पहुंचकर निरीक्षण करेंगे।

किसान हरदेव सिंह।

- किसान बोला कॉल कर चढ़ाए जा रहे दूसरों के नंबर, परिसर में धान नहीं
- सराय सुंदरपुर के धान क्रय केंद्र के प्रभारी पर लगाए आरोप

18 क्रय केंद्र और बढ़ाए संख्या पहुंची 150

इन दिनों क्रय केंद्रों पर धान की आवक तेजी से हो रही है। धान की ट्रैक्टर ट्रालियों की कतार लगी हुई है। इसे देखते हुए अब किसान की सुविधा को देखते हुए 18 क्रय केंद्र बढ़ा दिए गए है। इसी के साथ क्रय केंद्रों की संख्या 132 से बढ़कर 150 हो गई हैं। डिप्टी आरएमओ ने बताया कि अठारह क्रय केंद्र बढ़ा दिए गए हैं। उन पर खरीद चल रही है।

अवैध तरीके से धान का स्टॉक करने पर वसूला 1.72 लाख रुपये का जुर्माना

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

- कई दिन चली टालमटोल के बाद मंडी प्रशासन ने की कार्रवाई
- मंडी समिति की टीम ने 15 अक्टूबर को मारा था छापा

अमृत विचार: अवैध तरीके से धान का स्टॉक करने वाले सीड प्लांट मालिक पर मंडी प्रशासन ने आखिरकार कार्रवाई कर दी। परिसर में मिले धान के स्टॉक के हिसाब से 1.72 लाख रुपये जुर्माना वसूला गया है।

मंडी समिति पीलीभीत क्षेत्र गजरौला कस्बे के पास असम हाईवे पर स्थित नारायन सीड प्लांट में धान का अवैध भंडारण करने की सूचनाएं मंडी समिति के अधिकारियों को मिल रही थी। इस पर मंडी समिति की टीम ने 15 अक्टूबर को छापा मारा, लेकिन सीड प्लांट का गेट न खुलने पर टीम वापस आ गई थी। ये तर्क दिया था कि सीड प्लांट मालिक जिले से बाहर था। इसके बाद दूसरे दिन दोबारा टीम मंडी समिति के जहीर अहमद की अगुवाई में पहुंची और परिसर में चार सौ क्विंटल से अधिक धान का अवैध तरीके से भंडारण पकड़ा। बताते हैं कि सीड प्लांट के मालिक ने अपने परिवार की ही आढ़त से गोदाम अटैच करने को लेकर धान के भंडारण के लिए अनुमति मांगी थी। लिखित आवेदन मिलने पर टीमें नियमानुसार प्रक्रिया अपना रही हैं। इस पर कई बिंदुओं पर जांच की जाती है। अनुमति मिल भी नहीं सकी थी और धान का भंडारण किया जाता रहा। इस मामले में कार्रवाई कई दिन तक अधर में रही तो तमाम तरह की चर्चाएं तेज हुई। हालांकि अब मंडी प्रशासन ने की कार्रवाई की है। मंडी सचिव प्रवीण कुमार अवस्थी ने बताया कि अवैध भंडारण पर नारायन सीड प्लांट से 172777 रुपये की वसूली गई है। जिसमें 10441 रुपये मंडी शुल्क, 5236 रुपये विकास शेष और 157070 रुपये जुर्माना राशि शामिल रही है। उधर, सीड प्लांट स्वामी की ओर से गोदाम अटैच करने को लेकर किए गए आवेदन को लेकर अभी कोई अनुमति नहीं हुई है। इसे लेकर प्रक्रिया चल रही है।

ई-रिक्शा की टक्कर से बाइक सवार की मौत

माधोटांडा, अमृत विचार: कलीनगर मोड़ पर ई-रिक्शा की टक्कर से बाइक सवार की जान चली गई। पुलिस ने ई-रिक्शा चालक को हिरासत में ले लिया। हादसे के बाद परिवार में चीख पुकार मची रही।

पूरनपुर कोतवाली क्षेत्र के मोहल्ला रजागंज के निवासी तजीम (45) सोमवार को बाइक से कलीनगर गए थे। देर शाम काम निपटाकर वापस घर जा रहे थे। कलीनगर -माधोटांडा रोड पर मोड़ पर पहुंचते ही ई-रिक्शा से टक्कर हो गई। हादसे में बाइक सवार घायल हो गया। सूचना मिलने पर पुलिस मौके पर पहुंची और घायल को सीएचसी भिजवाया, वहां तजीम को मृत घोषित कर दिया। परिवार वाले भी आ गए। उनका रोकर बुरा हाल रहा। मंगलवार को पुलिस ने शव का पोस्टमार्टम कराया। इंस्पेक्टर अशोक पाल ने बताया कि ई-रिक्शा चालक को हिरासत में लिया है। दोनों वाहन पुलिस के कब्जे में है। तहरीर मिलने पर कार्रवाई की जाएगी।

जयपुर में हुए हादसे में पिता-पुत्री की मौत से गांव में पसरा मातम

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

मंजिल पर पहुंचने से पहले मिली मौत

लोगों ने बताया कि नसीम मियां तीन साल से परिवार सहित जयपुर के मनोहरपुर इलाके में ईंट भट्ठों पर मजदूरी करने जाते थे। इस साल वे सोमवार शाम गांव से रवाना हुए थे। मंजिल तक पहुंचने से पहले ही हादसे ने उनके पूरे परिवार को तोड़ दिया। पूरनपुर कोतवाली के क्राइम इंस्पेक्टर अशोक कुमार मंगलवार को शेरपुर कलां पहुंचकर परिजनों से मुलाकात की और ढांढस बंधाया। इस दौरान गांव के सैकड़ों लोग वहां मौजूद रहे।

अमृत विचार: जयपुर में हुए हादसे में पूरनपुर के पिता- पुत्री की मौत से गांव में मातम का माहौल है। ग्रामीणों ने बताया नसीम मियां का पूरा परिवार बस में सवार था। उनकी पत्नी नाजिमी, बेटे राजा, फैजान, अजहर और बेटियां सेहरुन व सेनम सभी जयपुर में मजदूरी के लिए जा रहे थे। हादसे के बाद परिजनों की आंखों के सामने ही नसीम और उनकी बेटी सेनम लपटों में घिर गए और मौके पर ही दम तोड़ दिया। बाकी परिजन किसी तरह जान बचाकर बाहर निकले। हादसे की खबर मंगलवार दोपहर जब शेरपुर कलां पहुंची तो पूरे गांव में चीख-पुकार मच गई। जिन घरों से मजदूर साथ गए थे, वहां मातम पसरा है। तीसरे मृतक की पहचान फिलहाल नहीं हो सकी है। जबकि घायलों में मृतक नसीम की पत्नी नाजमा निवासी शेरपुर, चांदवानों निवासी पूरनपुर कस्बा,नईम पुत्र नवाब निवासी ग्राम जलालपुर पूरनपुर, अजहर पुत्र नजीम निवासी जलालपुर अलताफ निवासी पूरनपुर, सितारा पत्नी नूर मोहम्मद निवासी पूरनपुर भी झुलस गए। जिनका जयपुर के अस्पताल में उपचार चल रहा है।

कटना नदी में उतराता मिला शव मचा हड़कंप

बीसलपुर, अमृत विचार: कटना नदी में युवक का शव उतराता मिलने से हड़कंप मच गया। ग्रामीणों की सूचना पर पुलिस पहुंची और जानकारी की। शव पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है। घटना के चलते मौके पर भीड़ जमा रही। कोतवाली क्षेत्र के ग्राम मिघौना के पास से कटना नदी गुजर रही है। मंगलवार सुबह करीब साढ़े 10 बजे कुछ ग्रामीण नदी किनारे अपने जानवरों को नहलाने जा रहे थे। इस दौरान उनकी नजर युवक के शव पर पड़ी तो होश उड़ गए। शव मिलने का शोर मचते ही भीड़ जमा हो गई। सूचना मिलने पर कोतवाल संजीव शुक्ला पुलिस बल के साथ मौके पर पहुंचे। ग्रामीणों की मदद से शव को बाहर निकलवाया गया। काफी प्रयास के बाद भी शव की शिनाख्त नहीं हो सकी। मृतक की उम्र करीब 40 वर्ष है। सीओ प्रगति चौहान ने भी मौका मुआयना कर जानकारी की। कोतवाल ने बताया कि मामले की जांच करा रहे हैं।

जहानाबाद से बीसलपुर पहुंचे नेपाली हाथी, मचा हड़कंप

संवाददाता, पीलीभीत/बीसलपुर

- गन्ने के खेत में दिन में आराम फरमा रहे हाथी, सुबह खेतों में हाथी देख ग्रामीणों में मचा हड़कंप
- रेंजर समेत वनकर्मी निगरानी में जुटे, देर शाम जंगल की ओर खदेड़ने की चल रही तैयारी

रिछोला खासी के समीप निगरानी में मौजूद वन कर्मियों की टीम।

अमृत विचार: जनपद में नेपाल से भटककर पहुंचे जंगली हाथियों का उत्पात थमने का नाम नहीं ले रहा है। एक दिन पूर्व जहानाबाद क्षेत्र में एक ग्रामीण को घायल करने के बाद दोनों जंगली हाथी रात में करीब 50 किमी लंबा सफर तय कर बीसलपुर क्षेत्र में जा धमके। इधर सुबह जब ग्रामीणों की निगाह खेतों में घूम रहे हाथियों पर पड़ी तो हड़कंप मच गया। बताते हैं कि दोनों जंगली हाथी गन्ने के खेत में पूरे दिन आराम फरमाते रहे। रेंजर समेत वनकर्मियों की टीम भी पूरे दिन हाथियों की निगरानी में जुटी रहीं। बताते हैं कि देर शाम हाथियों को जंगल की ओर खदेड़ने की योजना बनाई गई है।

जनपद में बीते कुछ दिन पूर्व नेपाल की ओर से दो जंगली हाथियों ने दस्तक दी थी। तबसे दोनों जंगली हाथी माधोटांडा, गजरौला और बरखेड़ा क्षेत्र में घूमते देखे गए थे। बीते रविवार को जंगली हाथियों ने माला रेंज से सटे अजीतपुर पटपुरा गांव के समीप खेतों में खड़ी सरसों और गन्ने की फसल को रौंद डाला था। इसके बाद बरखेड़ा क्षेत्र में देखे गए थे। इसके बाद दोनों हाथी बीसलपुर से होते सोमवार रात को ही जहानाबाद क्षेत्र में पहुंच गए थे। सोमवार शाम करीब पांच बजे के आसपास दोनों हाथी उझैनिया रम्पुरा गांव के खेतों में जा पहुंचे थे। खेतों में जंगली हाथियों के घुसने की जानकारी पर तमाम ग्रामीण भी खेतों के आसपास जा पहुंचे थे। इसी दौरान हाथियों ने गांव उझैनिया रम्पुरा निवासी ओमप्रकाश पर हमला कर घायल कर दिया था। ग्रामीणों ने शोर-शराबा कर बमुश्किल हाथियों ने वहां से भगाया था। घायल ग्रामीण को नवाबगंज के एक प्राइवेट अस्पताल में भर्ती कराया गया। सूचना मिलने के बाद वन विभाग की टीम भी मौके पर पहुंच गई थी। जिसके बाद लगातार हाथियों की निगरानी की जा रही थी। इधर जहानाबाद क्षेत्र में डेरा जमाए जंगली हाथी रात में करीब 50 किमी का लंबा सफर तय कर बीसलपुर क्षेत्र में जा पहुंचे। मंगलवार सुबह बीसलपुर क्षेत्र के गांव रिछोला घासी में ग्रामीणों ने जब हाथियों को गन्ने में खेतों में घूमते देखा तो हड़कंप मच गया। शोर-शराबे पर तमाम ग्रामीण मौके पर जा पहुंचे। बताते हैं कि ग्रामीणों ने हाथियों को भगाने के लिए शोर-शराबा भी किया, लेकिन दोनों हाथी टस से मस नहीं हुए। सूचना मिलते ही सामाजिक वानिकी प्रभाग की बीसलपुर रेंज के क्षेत्रीय वनाधिकारी रोहित जोशी भी टीम के साथ जा पहुंचे। प्रभाग की टीम पूरे दिन हाथियों की निगरानी में जुटी रही। वहीं दोनों हाथी भी पूरे दिन खेत में आराम फरमाते रहे। सुरक्षा की दृष्टि से कोतवाली प्रभारी निरीक्षक संजीव कुमार शुक्ला भी पुलिस बल के साथ मौके पर मौजूद रहे। इन वन अफसर देर शाम हाथियों को जंगल की ओर खदेड़ने की तैयारी कर रहे हैं।

> दोनों हाथियों की लगातार मॉनिटरिंग की जा रही है। पूरे दिन हाथी खेतों में ही मौजूद देखे गए हैं। हाथियों के आबादी क्षेत्र में जाने से रोकने के लिए व्यापक इंतजाम किए गए हैं। ग्रामीणों ने भी अपील की कि वे हाथियों के नजदीक न जाए। यदि खेतों में हाथियों की मौजूदगी हो, तो उस दौरान खेतों में बिलकुल न जाएं। – **भरत कुमार डीके**, डीएफओ, सामाजिक वानिकी प्रभाग

अमरिया बीडीओ समेत छह पर जुर्माना

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

- मनरेगा लोकपाल ने बीडीओ द्वारा रिपोर्ट नहीं दिए जाने के बाद की गई कार्रवाई
- मनरेगा श्रमिकों के फोटो अन्य मस्टरोल में अपलोड कर किया गया था खेल

अमृत विचार: एनएमएमएस पोर्टल पर एक ही मस्टरोल के श्रमिकों के फोटो अन्य मस्टरोल पर अपलोड किए जाने का मामला सामने आया है। मनरेगा लोकपाल ने मामला संज्ञान में आने पर संबंधित बीडीओ से रिपोर्ट मांगी, मगर उन्होंने कोई जवाब ही नहीं दिया। दोषी कर्मियों से पक्ष रखने को कहा गया, लेकिन उन्होंने भी जवाब देना जरूरी नहीं समझा। इस पर मनरेगा लोकपाल ने विसंगति के क्रम में दुरुपयोग की गई धनराशि की वसूली ग्राम प्रधान, सचिव और तकनीकी सहायक से करने के आदेश दिए हैं। इसके साथ बीडीओ समेत छह अन्य पर 1000-1000 रुपये जुर्माना भी डाला गया है।

जनपद में संचालित की जा रही मनरेगा योजना में फर्जीवाड़ा थमने का नाम नहीं ले रहा है। बीते कुछ माह में लगातार फर्जीवाड़े से जुड़े मामले सामने आ रहे हैं। मनरेगा से जुड़ा एक और कारनामा सामने आया है। मामला विकासखंड अमरिया की ग्राम पंचायत मुड़सेना मदारी से जुड़ा है। शिकायत मिली कि ग्राम पंचायत मुडसेना मदारी के बीते 3 अप्रैल को मनरेगा के तीन कार्य होना दर्शाया गया है। एएनएमएमएस पोर्टल पर एक ही मस्टरोल के श्रमिकों के फोटो अन्य दो मस्टरोल पर भी दर्शाकर अपलोड किए गए हैं। मामला संज्ञान में आने पर लोकपाल मनरेगा जीएल वर्मा ने अमरिया के खंड विकास अधिकारी से रिपोर्ट तलब की। बताते हैं कि कई दिन बीतने के बाद भी खंड विकास अधिकारी की ओर से जांच रिपोर्ट ही नहीं भेजी गई। इसके बाद लोकपाल मनरेगा ने संबंधित मनरेगा कर्मियों को कार्यालय पर अपना पक्ष रखने को निर्देशित किया। बताते हैं कि इसके बावजूद कोई भी मनरेगा कर्मी लोकपाल मनरेगा कार्यालय पर अपना पक्ष रखने नहीं पहुंचा। लोकपाल मनरेगा जीएल वर्मा ने बताया कि उक्त प्रकरण में मनरेगा योजना में पाई उक्त विसंगति के क्रम में 4158 रुपये की धनराशि का दुरुपयोग पाया गया है। इस दुरुपयोगित धनराशि को समानुपातिक रूप से ग्राम पंचायत सचिव, ग्राम प्रधान तथा तकनीकी सहायक से वसूलने को निर्देशित किया गया है। इसके अलावा खंड विकास अधिकारी अमरिया, अतिरिक्त कार्यक्रम अधिकारी, पंचायत सचिव, तकनीकी सहायक, ग्राम प्रधान तथा ग्राम रोजगार सेवक पर 1000-1000 रुपये अर्थदंड वसूलकर मनरेगा योजना खाते में जमा कराने का आदेश दिया गया है।

न्यूज ब्रीफ

घर से उड़ाए लाखों के जेवर और नकदी

बरेली, अमृत विचार : किला थाना क्षेत्र के साहूकारा में महिला के घर से चोर जेवर और नकदी लेकर फरार हो गए। महिला पूजा करने घर आईं तो मेन गेट खुला था और अलमारी की तिजोरी टूटी थी। पुलिस ने अज्ञात के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कर तलाश शुरू कर दी है। हाथी वाले मंदिर के पास रहने वाली लक्ष्मी मिश्रा ने बताया कि कुछ दिनों से बीमार चल रही थीं और बेटी-दामाद के केला बाग वाले घर पर रह रही थीं। शनिवार सुबह करीब 10:30 बजे वह अपने घर पूजा करने पहुंचीं। गेट खोला तो देखा कि अंदर का मेन गेट पहले से खुला है। वह घर के अंदर गईं तो कोई नहीं था। जब उन्होंने कमरे में जाकर देखा तो तिजोरी का दरवाजा टूटा पड़ा था और उसमें रखे गहने व नकदी गायब थे।

आधा किलो अफीम के साथ आरोपी गिरफ्तार

बरेली, अमृत विचार : इज्जतनगर थाना पुलिस ने एक तस्कर को आधा किलो अफीम के साथ गिरफ्तार किया है। गिरफ्तार आरोपी की पहचान कल्याणपुर निवासी बजरूल खान के रूप में हुई है। पुलिस ने आरोपी को कोर्ट में पेश किया, जहां से उसे जेल भेज दिया गया।

घंटों इंतजार, डॉक्टर कर दे रहे महज दो मिनट में इलाज

इंटरनेशनल हेल्थ स्टैंडर्ड के मानक को दरकिनार कर रहा मेडिकल कॉलेज, दवा लिखने के बाद खाने का तरीका बताने वाला कोई नहीं

कार्यालय संवाददाता पीलीभीत

मेडिकल कॉलेज में मेडिसिन विभाग की ओपीडी में मरीज को देखते डॉक्टर।

दवा काउंटर पर लगी मरीजों की कतार। ● अमृत विचार

- मरीजों की संख्या अधिक होने से जल्दबाजी में दवा लिख रहे दवा
- पूरी बात सुने बिना दवा लिखने से मरीजों का कम हो रहा फायदा

> ओपीडी में बैठने वाले डॉक्टरों को निर्देशित किया गया है कि वह समय के अनुरूप मरीजों का इलाज करें। डॉक्टर को ही मरीज को दवा समझाने के लिए कहा गया है। अगर किसी मरीज को समया आ रही है तो इस मामले में कार्यालय में आकर शिकायत कर सकता है। अभी तक ऐसा कोई मामला सामने नहीं आया है। - डॉ. रमाकांत सागर, सीएमएस

अमृत विचार : मेडिकल कॉलेज की ओपीडी में मरीजों की लंबी कतारें और घंटों का इंतजार, लेकिन इलाज महज दो मिनट का। यह नजारा स्वास्थ्य विभाग के दावों पर सवाल खड़े कर रहा है। इंटरनेशनल हेल्थ स्टैंडर्ड के मानक पर भी ध्यान नहीं है। मरीजों की मूलभूत जरूरतें तक दरकिनार की जा रही हैं। डॉक्टरों की जल्दबाजी और कर्मचारियों की लापरवाही ने हालात ऐसे बना दिए हैं कि मरीज दवा लेकर लौट तो रहे हैं, मगर उसे कब और कैसे लेना है। यह तक बताने वाला भी कोई नहीं है।

बताते हैं कि अस्पताल सरकारी हो या निजी नियम है कि इंटरनेशनल हेल्थ स्टैंडर्ड के मुताबिक ओपीडी में एक मरीज पर कम से कम 10 से 15 मिनट का समय देने का प्रावधान है, लेकिन पीलीभीत के जिला अस्पताल में यह समय 30 सेकेंड से लेकर दो मिनट तक सीमित है। मंगलवार को की गई पड़ताल में मेडिसिन ओपीडी के तीन डॉक्टरों ने करीब 375 मरीजों को देखा। औसतन हर डॉक्टर ने एक मरीज को दो मिनट से भी कम समय में निपटा दिया। यही हाल समस्त विभाग का है। जहां मरीज का नाम सुनते ही दवा लिख दी गई। जबकि अस्पताल में रोजाना करीब दो हजार मरीज इलाज के लिए पहुंच रहे हैं। मंगलवार को करीब 1145 पर्चे बने। जहां मरीजों को न तो दवा खाने का समय बताया जा रहा है और न ही सावधानियां। अधिकांश मरीज दवा का नाम तक नहीं पढ़ पाते, वे दवा केंद्र से जो मिल जाए उसी को भरोसे के साथ ले लेते हैं। अस्पताल प्रबंधन के अनुसार रोजाना औसतन 600 मरीजों का इलाज पांच से छह डॉक्टर करते हैं। इस हिसाब से प्रति मरीज डॉक्टर के पास मुश्किल से तीन मिनट का समय रहता है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि मरीज के सही इलाज के लिए डॉक्टर और मरीज के बीच संवाद बेहद जरूरी है। फिलहाल जिला अस्पताल की यह हकीकत स्वास्थ्य विभाग की संवेदनशीलता और जिम्मेदारी पर बड़ा सवाल खड़े कर रही है।

सीएचसी पीएचसी पर भी बदहाल व्यवस्थाएं

मेडिकल कॉलेज ही नहीं ग्रामीण क्षेत्रों में बनी सीएचसी-पीएचसी पर भी अव्यवस्थाएं हावी है। यहां डॉक्टरों की कमी बनी हुई है। सीएमओ के अधीन 10 सीएचसी और 28 पीएचसी संचालित है। इनका संचालन करने के लिए स्थायी डॉक्टरों के 144 पद सृजित है। इनमें लेवल-वन के 90, लेवल टू के 17, लेवल थ्री के 22, लेवल फोर के 15 डॉक्टर शामिल है। मगर वर्तमान समय में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति बद से बदतर बनी हुई है। बेहद कम स्थायी डॉक्टर तैनात हैं। तीन से चार डॉक्टर सीएमओ कार्यालय का कार्यभार संभाल रहे है, शेष को सीएचसी पीएचसी पर लगाया हुआ है। व्यवस्था सुधारने के लिए संविदा पर भर्ती निकाली गई। जिसमें एनएचएम की ओर से 19 पद डॉक्टरों के स्वीकृति किए गए थे। इनमें भी सिर्फ छह डॉक्टरों ने ज्वाइन किया। 13 पद अभी भी खाली है। आलम यह है कि जिले में अधिकांश सीएचसी पीएचसी पर डॉक्टर कार्यरत नहीं है। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्र के लोग इलाज की आस में मुख्यालय पर आते है, मगर उन्हें यहां भी इलाज के नाम पर निराशा होती है।

बिहार से दिल्ली आने वाली ट्रेनों में आज से नो रूम

बरेली, अमृत विचार: छठ पूजा के बाद अब घर से लौटने वालों की भीड़ ट्रेनों में बढ़ेगी। 29 अक्टूबर से गोरखपुर, वाराणसी, पटना और प्रयागराज से आने वाली लगभग सभी ट्रेनों में नो रूम की स्थिति बन चुकी है। रेलवे के ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर नवंबर के पहले सप्ताह तक सीटों की उपलब्धता समाप्त हो गई है। रेलवे के अनुसार छठ पूजा मंगलवार को समाप्त होने से यात्रियों की वापसी शुरू हो गई है। नियमित ट्रेनों के साथ-साथ स्पेशल ट्रेनों में भी जगह नहीं है। स्पेशल ट्रेन 04015 (गोरखपुर-आनंद विहार) में एसी कोचों में नो रूम और स्लीपर में लंबी वेटिंग है। चंपारण एक्सप्रेस (14009) और मुजफ्फरपुर-आनंद विहार स्पेशल (05283) में भी यही स्थिति है। अमरनाथ एक्सप्रेस (15653), संपर्क क्रांति और सत्याग्रह एक्सप्रेस में आरक्षण नहीं मिल रहा। वहीं पटना से चलने वाली हावड़ा-अमृतसर एक्सप्रेस (13005) में भी 5 नवंबर तक कोई सीट उपलब्ध नहीं है।

दूसरे दिन भी हत्यारोपी पुलिस की पकड़ से दूर

बीसलपुर, अमृत विचार: हत्या कर स्कूल के पास नहर की पटरी पर फेंके गए शव के मामले में पुलिस नामजद आरोपियों तक नहीं पहुंच सकी है। हिरासत में लिए गए आरोपियों के परिजन से पूछताछ की गई। वहीं, धरपकड़ के लिए टीम लगाई है।

बता दें कि दियोरिया कोतवाली क्षेत्र के गांव ढकिया रंजीत के रहने वाले आशीष कुमार गंगवार की हत्या कर दी गई थी। सोमवार को उसका शव पीलीभीत मार्ग पर केकेएस स्कूल के पास पड़ा मिला था। मृतक की पत्नी अनामिका की ओर से गांव के ही अतुल कुमार उर्फ छोटू और मनोज कुमार के खिलाफ हत्या की रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी। पुलिस ने कई जगह दबिश दी लेकिन आरोपी नहीं मिल सके। कोतवाल संजीव कुमार शुक्ला ने बताया कि आरोपियों की धरपकड़ को टीम लगाई है।

किसानों का पैसा लेकर भागा आढ़ती

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

डीएम से मुलाकात करते भाकियू टिकैत के कार्यकर्ता। ● अमृत विचार

- भाकियू टिकैत ने डीएम से की शिकायत, सूची सौंपी

अमृत विचार: धान खरीद के बीच एक और मामला उजागर हुआ है। एक आढ़ती ने तमाम किसानों से धान खरीदा और उसे सीधे राइस मिल पर उतरवाया। इसके बाद भुगतान में पहले टालमटोल की और अब पता चला है कि वह रकम हड़पकर भाग गया है। भाकियू टिकैत के कार्यकर्ताओं ने डीएम से शिकायत कर मामले में सख्त कार्रवाई की मांग की है। इसमें करोड़ों की गड़बड़ी बताई गई है।

भारतीय किसान यूनियन टिकैत के कार्यकर्ता मंगलवार को मंडल अध्यक्ष सतविंदर सिंह कहलो की अगुवाई में कलेक्ट्रेट पहुंचे। इस दौरान डीएम ज्ञानेंद्र सिंह से मुलाकात की गई और शिकायत पत्र दिया। जिसमें मंडी समिति पीलीभीत के एक आढ़ती पर किसानों के साथ धोखाधड़ी करने का आरोप लगाया। शिकायत पत्र में बताया कि संबंधित आढ़ती ने किसानों से धान एवं गेहूं की खरीद की थी। जिसमें पंद्रह दिन बाद रुपये देने का वायदा किया था। विश्वास में आकर किसानों ने धान व गेहूं बेच दिया।

मगर कई चक्कर लगाने के बाद भी रुपये नहीं दिए गए। टामलमटोल की जाती रही। 28 अक्टूबर को जब किसान मंडी समिति पीलीभीत उक्त आढ़त पर अपना भुगतान लेने पहुंचे तो पता चला कि आढ़त पर ताला लगाकर उसका मालिक भाग गया है। संगठन ने 42 किसानों की एक सूची भी दी है, जिसमें किसान वार उनके धान व गेहूं की कीमत भी दशाई गई है।संबंधित आढ़ती से किसानों की रकम दिलाने और कार्रवाई की मांग की है। ये भी कहा कि किसानों से धान की ट्रॉली सीधे राइस मिल पर उतरवपाई गई है। इसकी भी जांच कराई जाए। डीएम ने पुलिस और डिप्टी आरएमओ को मामले की जांच कर कार्रवाई के निर्देश दिए हैं।

विवि का दीक्षांत समारोह 13 को

बरेली,अमृत विचार: रुहेलखंड विश्वविद्यालय का दीक्षांत समारोह 13 नवंबर को होगा। समारोह की तैयारियों के संबंध में मंगलवार को कुलपति प्रो. केपी सिंह ने समिति कक्ष में समितियों के संयोजकों के साथ समीक्षा बैठक की। कुलपति ने सभी समितियां की कार्य प्रगति के संबंध में विस्तार से जाना।

कुलपति ने शिक्षकों से कहा कि वह 50 छात्रों को तैयार करें जो पूरे कार्यक्रम के दौरान विभिन्न दायित्वों की पूर्ति करें जैसे अनुशासन व्यवस्था, लोगों के बैठने की व्यवस्था इत्यादि। कार्यक्रम स्थल अटल सभागार में सीटों पर बैठने की व्यवस्था इस प्रकार होगी कि बीच में खाली न रहने पाए। विदेशी छात्रों और शिक्षकों के लिए भी अलग से एक दीघा तैयार होगी। विश्वविद्यालय की ओर से आमंत्रित सभी अतिथियों के साथ एक साथ प्रतिनिधि उनकी व्यवस्था के लिए तैनात रहेगा। समारोह में विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्ति शिक्षकों को भी आमंत्रित किया जाएगा। परिसर सौंदर्यीकरण के लिए एक अलग समिति बनाई ।

क्षेत्र पंचायत की बैठक में प्रस्तावों पर चर्चा

अमरिया ब्लॉक में हुई बैठक में मौजूद सदस्य। ● अमृत विचार

संवाददाता, अमरिया

अमृत विचार: ब्लॉक परिसर में मंगलवार को क्षेत्र पंचायत सदस्यों की बैठक मंगलवार को हुई। जिसकी अध्यक्षता ब्लॉक प्रमुख निशान सिंह उर्फ श्याम सिंह ने की। संचालन जेई एमआई ललित लाहिड़ी ने किया।

सर्वप्रथम पिछली कार्रवाई को पढ़कर सुनाया गया। इसके बाद बैठक में विकास कार्यों पर चर्चा के साथ सदस्यों से प्रस्ताव मांगे गए। मनरेगा, स्वच्छ भारत मिशन ,प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री आवास योजना की समीक्षा की गई। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, पेयजल,सहकारिता और कृषि विभाग की योजनाओं पर चर्चा हुई। आगामी वर्ष के लिए कार्य योजना तैयार की गई। समाज कल्याण विभाग, बाल विकास परियोजना, स्वास्थ्य विभाग, पशु चिकित्सा और विद्युत विभाग की योजनाओं पर भी विस्तृत चर्चा हुई। बैठक में भाग लेने वाले सभी ग्राम प्रधान, क्षेत्र पंचायत सदस्यों को हजार रुपये भत्ते के रूप में खाते में ट्रांसफर किए गए। बीडीओ दिनेश सिंह ने कहा कि सभी अपनी ग्रामसभा की समस्याएं बताएं ताकि उन्हें दूर किया जा सके।

सीता राम विवाह का प्रसंग सुन मंत्रमुग्ध हुए भक्त

बिलसंडा, अमृत विचार: नगर की मदन मोहन कॉलोनी स्थित शिव मंदिर पर आयोजित श्रीराम कथा में भक्तों को सीता राम विवाह प्रसंग सुनाया गया। इसे सुन भक्त मंत्र मुग्ध हो गए।

कथा व्यास का तिलक करता श्रद्धालु।

कथा व्यास प्रेममूर्ति पंकज मिश्रा ने बताया कि मिथिला नरेश महाराज जनक के महल स्थित पूजा स्थल में भगवान शिव का धनुष रखा हुआ था। एक बार सफाई करते समय सीता ने उसे उठाकर दूसरी जगह रख दिया। आश्चर्य से भरे राजा जनक ने प्रतिज्ञा ली कि जो इस धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाएगा उसी से सीता का विवाह किया जाएगा। सीता के विवाह के लिए उन्होंने स्वयंवर का आयोजन किया। देश के सभी राजा -महाराजाओं को निमंत्रण भेजा गया। महर्षि विश्वामित्र के साथ प्रभु श्री राम और लक्ष्मण भी स्वयंवर में पहुंचे। सभी राजाओं ने अपने बल का प्रयोग कर शिव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने का प्रयास किया, लेकिन सफलता नहीं मिली। अंततः गुरु विश्वामित्र की आज्ञा पाकर प्रभु श्री राम धनुष को उठाकर प्रत्यंचा चढ़ाने लगते हैं कि वह टूट जाता है। शिव धनुष के टूटते ही चारों ओर प्रभु श्री राम के जयघोष सुनाई देते हैं। सभी देवतागण प्रभु पर पुष्प वर्षा करते हैं। महाराज दशरथ गुरु वशिष्ठ की उपस्थिति में प्रभु श्री राम का विवाह सीता के साथ संपन्न होता है।

श्रीराम मूर्ति मेमोरियल टी-20 टूर्नामेंट शुरू

बरेली,अमृत विचार : बरेली क्रिकेट एसोसिएशन एवं एसआरएमएस ट्रस्ट की ओर से श्रीराम मूर्ति स्मारक कालेज ऑफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी (सीईटी) में मंगलवार को श्रीराम मूर्ति मेमोरियल टी- 20 प्राइज मनी वुमन क्रिकेट टूर्नामेंट सीजन फर्स्ट की शुरुआत हुई। पहले दिन श्रीराम मूर्ति क्रिकेट स्टेडियम में पहला मैच एसआरएमएस क्रिकेट एकेडमी और दिल्ली दबंग वुमन्स के बीच खेला गया। दिल्ली दबंग की कप्तान गरिमा बिष्ट ने टॉस जीतकर एसआरएमएस क्रिकेट एकेडमी को पहले खेलने के लिए आमंत्रित किया। एसआरएमएस ने निर्धारित 20 ओवर में चार विकेट के नुकसान पर 153 रन बनाए। इसमें मुस्कान ने 61, मीनाक्षी यादव ने 24, गुंजन ने 25, कप्तान मुस्कान खान ने 12 रनों का योगदान दिया।

व्यापारियों ने डीएम को सौंपा ज्ञापन

कार्यालय संवाददाता, पीलीभीत

डीएम को ज्ञापन देते व्यापार मंडल पदाधिकारी। ● अमृत विचार

- गोरखपुर-शामली एक्सप्रेस-वे से पीलीभीत को जोड़ने की मांग

अमृत विचार: भारतीय उद्योग व्यापार मंडल ने जिले के सर्वांगीण विकास में योगदान के उद्देश्य से पीलीभीत को प्रस्तावित गोरखपुर-शामली एक्सप्रेस-वे से जोड़ने की मांग की है। प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री और केंद्रीय सड़क परिवहन मंत्री को संबोधित ज्ञापन सिटी मजिस्ट्रेट विजय वर्धन तोमर को सौंपा गया।

जिलाध्यक्ष अभिषेक अग्रवाल ने कहा कि मंडल का एक प्रतिनिधिमंडल शीघ्र ही केंद्रीय मंत्री नितिन गडकरी से मुलाकात कर अपनी मांगें रखेगा। उन्होंने कहा कि एक्सप्रेस-वे से जुड़ने पर जिले में औद्योगिक, कृषि और व्यापारिक विकास के साथ युवाओं के लिए रोजगार के नए अवसर खुलेंगे। पीलीभीत टाइगर रिजर्व दुनिया के नक्शे पर उभर कर आएगा। यदि पीलीभीत को एक्सप्रेस-वे से जोड़ने की मांग पर सकारात्मक कार्रवाई नहीं हुई, तो इसे जन आंदोलन का रूप देकर सरकार तक आवाज पहुंचाई जाएगी। इस मौके पर महामंत्री रजत अग्रवाल, कोषाध्यक्ष अतुल अग्रवाल , उपाध्यक्ष माधव गुप्ता, माणिक मित्तल , राजेंद्र शर्मा, अवधेश पाठक , दीपांशु अग्रवाल, शिवेश अग्रवाल आदि मौजूद रहे।

न्यूज डायरी

सम्मानित किए गए पीलीभीत के खिलाड़ी

पीलीभीत, अमृत विचार : डीआईओएस राजीव कुमार ने मंगलवार को अपने कार्यालय पर अलीगढ़ जनपद में संपन्न हुई 69वीं प्रदेशीय विद्यालय शतरंज प्रतियोगिता में बरेली मंडल की टीम की ओर से खेलते हुए उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले जिले के खिलाड़ियों को सम्मानित किया। बालक वर्ग में स्वर्ण और बालिका वर्ग में रजत पदक जीतने पर छात्र-छात्राओं को मेडल पहनाकर सम्मानित किया गया। सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कॉलेज बीसलपुर के छात्र अमित गंगवार, अंगूरी देवी सरस्वती बालिका इंटर कॉलेज की छात्राएं अदिति, पलक , अक्षिता, समीक्षा गुप्ता, नेहा गंगवार आदि को ट्रॉफी दी गई। जिला क्रीड़ा सचिव राजेश शुक्ला ने बताया कि जनपद के छात्र एवं छात्राओं ने बहुत शानदार प्रदर्शन किया है।

भाकियू शंकर ने रखी कई मांगे

पीलीभीत, अमृत विचार : भारतीय किसान यूनियन (शंकर) के जिलाध्यक्ष वीरेंद्र पाल आर्य की अध्यक्षता में पंचायत हुई। इसका संचालन जिला उपाध्यक्ष बेनीराम वर्मा ने किया। कहा बरहा प्रकरण में एसडीएम, लेखपाल द्वारा किए गए प्रस्ताव की फोटो कॉपी संगठन को मुहैया कराई जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में पानी की टंकियों की व्यवस्था ठप है। इसमें घोटाले की आशंका जताते हुए जांच कराकर कार्रवाई की मांग की। कल्याणपुर नौगवां के ऑपरेटर को हटाकर दूसरे की तैनाती कराने की मांग की। बरहा के स्कूल की बाउंड्री कराने का भी मुद्दा रखा। इसे लेकर मांग पत्र भी सौंपा गया। इस मौके पर लालता प्रसाद, हरि बहादुर

उर्स में हुआ नातिया मुशायरा

बीसलपुर, अमृत विचार : नगर में चल रहे सालाना उर्स- ए करीमी में सोमवार रात नातिया मुशायरा और हामिदी कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया गया। जिसमें शोरा हजरात व उलेमा ने अपने -अपने कलाम पेश किए। मोहल्ला हबीबुल्ला खां जुनूबी में खानकाहे करीमियां में चल रहे हजरत सैय्यद करम अली रह (दादा मियां) के सालाना तीन रोजा उर्स में पहले दिन नातिया मुशायरा व हामिदी कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया गया। उलमा ने तकरीरें पेश की। जलसे में मुख्य रुप से सैय्यद बादशाह मियां वास्ती बिलग्राम शरीफ, आसिफ रजा सैफी प्रतापगढ़, मुफ़्ती गुलफ़ाम रामपुर, अहमदुल फत्ताह फैज़ाबाद समेत अन्य रहे।

करियर मेले में बच्चों को दी जानकारी, बनाए मॉडल

पीलीभीत, अमृत विचार : शासन के निर्देश पर राजकीय हाईस्कूल महोफ में करियर मेला लगाया गया। इसकी शुरुआत ब्लॉक मरौरी के खंड शिक्षाधिकारी सुनील कुमार सिंह ने मां सरस्वती की प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्वलित करके कराई। माध्यमिक शिक्षा विभाग में छात्र-छात्राओं को कैसे किस दिशा में पढ़ाई के साथ-साथ उनका भविष्य उज्जवल होगा, इसको लेकर शासन की ओर से महत्वाकांक्षी योजनाएं चलाई जा रही हैं। राजकीय हाई स्कूल महोफ में करियर मेला लगाया गया। मेले में छात्र-छात्राओं ने बहुत ही रोचक कलाकृतियां बनाई। इन कलाकृतियों के माध्यम से छात्रों ने कृषि, शिक्षा, खेल, व्यवसाय सहित विभिन्न माध्यमों से बेहतर करियर बनाने की दिशा में संकेतात्मक मॉडल बनाए। खंड शिक्षाधिकारी सुनील कुमार सिंह ने कहा कि पढ़ाई के साथ-साथ खेल भी जरूरी है। अगर आप खेल में बेहतर

अमृत विचार एक सम्पूर्ण अखबार
MEDICAL Lifelines OF BAREILLY
विज्ञापन हेतु सम्पर्क करें :- 8445507002

फोकस नेत्रालय
राजेन्द्र नगर, बरेली 731-098-7005
बरेली का सबसे बड़ा केवल आँखों के लिए समर्पित प्राइवेट अस्पताल ...
नवीनतम AI तकनीक एवं NABH मान्यता के साथ
● 40,000 से अधिक सफल सर्जरी सम्पन्न
● बिना इंजेक्शन एनेस्थीसिया (केवल आई ड्राप्स द्वारा)
● आयुष्मान/सीजीएचएस/ईसीएचएस/सीएपीएफ सभी स्वास्थ्य बीमा मान्य
● कैशलेस ईलाज

बवासीर-भगन्दर-फिशर
पाइलोनाइडल साइनस Mob.: 8126164170
भगन्दर गांठ Piles in Men
डॉ. वी.के. सिसोदिया
वरिष्ठ क्षार सूत्र विशेषज्ञ
B.Sc., B.A.M.S.
Proctologist (Ayur.), N.D.D.Y., C.C.K.S. (MUMBAI)
मिलें : प्रत्येक रविवार 12 पत्थर रोड, जलालाबाद (शाहजहाँपुर) में
बरेली एनोरक्टल क्लीनिक पता:- करगैना पुलिस चौकी के पीछे, बदायूं रोड, बरेली

डॉ. प्रेम गंगवार
B.H.M.S. (Homeo Cafe Gwalior)
वरिष्ठ होम्योपैथिक चिकित्सक
मो. 8859517808
सैक्स रोग, शीघ्रपतन, नामर्दी, त्वचा, गुर्दे, कैंसर, जोड़, नस, थायराइड व महिलाओं का बांझपन
होम्योपैथिक से जुड़ी समस्या व दवाईयों के लिये निःशुल्क सम्पर्क करें। | अत्याधुनिक जर्मन दवाईयों द्वारा कुशल डाक्टर के मार्गदर्शन में इलाज
11 वर्षों का अनुभव प्रेम जर्मन होम्योपैथिक
रूहेलखण्ड यूनिवर्सिटी के सामने, पीलीभीत बाईपास, एच.के. टावर, बरेली

डॉ. नितिन अग्रवाल
एम.डी. (गोल्ड मेडिलिस्ट), डी.एम. (कार्डियोलॉजी)
हृदय रोग विशेषज्ञ मो. 9457833777
2D ECHO + TMT
हृदय रोग के लक्षण : ■ घबराहट ■ छाती में दर्द या भारीपन ■ सांस फूलना ■ पैरों में सूजन ■ हाई ब्लडप्रेशर ■ हाई कोलेस्ट्रोल ■ डाइबिटीज (शुगर) ■ सीने या पेट में जलन या दर्द ■ हार्ट अटैक ■ हार्ट फेल
APPLE CARDIAC CARE DR. NITIN AGARWAL'S HEART CLINIC
ए-3, एकता नगर, केयर अस्पताल के सामने, स्टेडियम रोड, बरेली। सम्पर्क करें:- 9458888448

डॉ. हारिस अंसारी
एम.एस., एम.सी.एच. (यूरोलॉजी)
Consultant Urologist & Andrologist
गुर्दा, प्रोस्टेट, पेशाब की थैली की पथरी व कैंसर सर्जन
● प्रोस्टेट (गदूद का आपरेशन) (TURP) ● गुर्दे की पथरी का आपरेशन (PCNL) ● गुर्दे की नली (यूरेटस) की पथरी का ऑपरेशन (URSL) ● पेशाब के समस्त प्रकार के रोगों का इलाज
कैशलेस, इंश्योरेंस, TPA व ESI आयुष्मान से अनुबन्धित अस्पताल
डॉ. एम. खान हॉस्पिटल
मल्टी स्पेशलिटी व क्रिटिकल केयर सेन्टर स्टेडियम रोड, निकट सेंट फ्रांसिस स्कूल, बरेली
समय दोपहर 12 से शाम 4 बजे तक हेल्पलाईन 9837549348, 98978382286

न्यूज ब्रीफ

शौचालय से सोलर पैनल और बैटरी चोरी

कुंवरगांव, अमृत विचार : बरेली-मथुरा राजमार्ग पर कोतवाली सिविल लाइन क्षेत्र के पटेल चौक पर स्थित सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र से सोमवार रात सोलर लाइट, दो बैटरी, इंवर्टर चोरी और अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरण चोरी कर लिए गए। भारतीय जनता पार्टी के जिला उपाध्यक्ष व हाइवे स्थित दादी की रसोई रेस्टोरेंट के प्रबंधक सुखदेव सिंह राठौर ने पुलिस से शिकायत करके बताया कि शाम से ही पटेल चौक पर चोरों की आवाजाही शुरू हो जाती है। छोटी दुकानों पर शराब के गिलास और बोतलों की बिक्री होने लगती है। जो सुबह को कूड़े के ढेरों पर खाली पडे.देखने को मिलते हैं। शाम से ही चौराहे पर आसामाजिक तत्वों का जमावड़ा रहता है। कुछ दिन पूर्व भी इसी स्थान से उनकी कार भी चोरी हो गई थी।

फंदे से लटका मिला युवती का शव

लखीमपुर खीरी, अमृत विचार : थाना खीरी क्षेत्र के गांव ककरहा निवासी एक युवती की संदिग्ध हालात में मौत हो गई। उसका शव घर के अंदर फंदे से लटकते पाया गया। मौके पर पर पहुंची पुलिस ने शव पोस्टमार्टम के लिए भेजा है। गांव ककरहा निवासी छोटक्कन की 21 वर्षीय बेटी अनुष्का ने अज्ञात कारणों के चलते सोमवार की शाम घर के अंदर फंदे से लटक कर आत्महत्या कर ली। सूचना पर पहुंची पुलिस ने शव पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। पोस्टमार्टम हाउस पहुंचे मृतक के परिजनों ने बताया कि अनुष्का ने किन कारणों के चलते आत्मघाती कदम उठाया। इसकी जानकारी उन्हें नहीं है।

अधेड़ की मौत, हत्या करने की आशंका

लखीमपुर खीरी, अमृत विचार : मोहल्ला सिकटिहा निवासी राजेंद्र कुमार (45) का शव सोमवार की शाम कमरे के अंदर संदिग्ध हालात में बरामद हुआ। मृतक के बड़े भाई रिटायर्ड उपनिरीक्षक सुरेश कुमार ने बताया कि उनके भाई की शादी थाना संपूर्णानगर क्षेत्र के गांव घोला से हुई थी। भाई राजेंद्र की पत्नी की करीब 15 साल पहले मौत हो चुकी है। दो बच्चे हैं। उन्होंने बताया कि करीब चार साल से उसके भाई राजेंद्र कुमार के साथ उसकी साली रह रही थी। आरोप है कि उसके भाई को खाना-पानी नहीं दिया जाता था, यहां तक की उसकी जब मौत हुई तो साली किरन अपने परिजनों के साथ जल्दबाजी करते हुए शव के दाह संस्कार की तैयारी में जुट गई। आसपास के लोगों ने उन्हें मौत होने की खबर की। इस पर वह परिवार के साथ मौके पर पहुंचे और पुलिस को सूचना दी। मौके पर पहुंची पुलिस ने अंतिम संस्कार की तैयारियों को रुकवा दिया और शव पोस्टमार्टम के लिए भेजा है। सुरेश को आशंका है कि उनके भाई राजेंद्र की प्रापर्टी के लालच में हत्या की गई है। प्रभारी निरीक्षक राजेश कुमार सिंह ने बताया कि पोस्टमार्टम रिपोर्ट आने के बाद आगे की कार्रवाई की जाएगी।

ओवरब्रिज के अधूरे निर्माण कार्य को पूरा कराने के लिए बंद की क्रॉसिंग, आज प्रातः 8 बजे से 16 नवंबर रात 12 बजे तक बंद रहेगा नेशनल हाईवे

गोला में आज से 19 दिन बंद रहेगी जंगल वाली रेलवे क्रॉसिंग, रूट किया डायवर्ट

संवाददाता, गोला गोकर्णनाथ

अमृत विचार : गोला लखीमपुर के बीच जंगल वाली रेलवे क्रॉसिंग पर ओवरब्रिज के अधूरे निर्माण कार्य को पूरा कराने के लिए 29 अक्टूबर से 16 नवंबर रविवार मध्य रात तक 19 दिन इस मार्ग पर वाहनों की आवाजाही बंद रहने से दैनिक यात्रियों के साथ अन्य लोगों को अधिक किराया, अधिक समय खर्च कर यात्रा करनी पड़ेगी। रोडवेज बसों का अलीगंज और सिकंदराबाद मार्ग से संचालन किया जाएगा। टोल टैक्स बचने के बावजूद भी यात्री किराए में वृद्धि की गई है।

राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 730 पर स्थित गोला रेलवे क्रॉसिंग पर ओवर ब्रिज के निर्माण कार्य आरओबी पर स्ट्रिंग गार्डर इरेक्शन, स्लैप और लॉन्चिंग कार्य के चलते लोगों की सुरक्षा को देखते हुए अधिकारियों ने इस मार्ग पर 19 दिनों के लिए वाहनों का आवागमन पूर्ण रूप से बंद किया है। सेतु निर्माण कार्य का उद्देश्य क्षेत्र में सुगम यातायात व्यवस्था और क्रॉसिंग पर लगने वाली जाम की समस्या का स्थाई समाधान करना है। रेलवे क्रॉसिंग पर अक्सर ट्रेनों के निकलने पर क्रॉसिंग बंद होने पर वाहनों की लंबी लाइन लग जाती थी, जिससे लोगों को काफी असुविधा होती थी। ओवर ब्रिज बन जाने से समय इस समस्या का स्थाई समाधान मिलने के साथ ही वाहनों के फर्राटा भरने से समय की भी बचत होगी। यात्रा सुगम, सुरक्षित और निर्बाध हो सकेगी।

ट्रेन आने के समय बंद बैरियर पर लगी वाहनों की लंबी लाइन। ● अमृत विचार

गोला में अधूरा पड़ा ओवरब्रिज। ● अमृत विचार

रेल ओवर ब्रिज निर्माण के चलते मेगा ब्लॉक लिया गया है। रोडवेज बसों का संचालन अलीगंज, सिकंदराबाद मार्ग होते हुए कराया जाएगा। दूरी बढ़ने से किराया बढ़ाया गया है। यात्रियों की सुविधाओं का ध्यान रखा जाएगा।
– **महेशचंद्र कमल**, एआरएम गोला।

गन्ना किसानों को होगी दिक्कत

बजाज हिंदुस्थान शुगर लिमिटेड का पेराई सत्र शीघ्र ही शुरू होने वाला है। ऐसे में इस रोड से गन्ना भारे वाहनों को अधिक दूरी तय करनी होगी। राष्ट्रीय किसान मजदूर संगठन के जिला अध्यक्ष अंजनी कुमार दीक्षित और राष्ट्रीय किसान शक्ति संगठन के जिला अध्यक्ष संतोष सिंह भदौरिया का कहना है कि रेलवे प्रशासन को यह कार्य सावन महीने के बाद कर लेना चाहिए था। उस समय चीनी मिल बंद थी, वाहनों का आवागमन भी काम था। अब सहालगों का सीजन और चीनी मिल चलने से लोगों को दिक्कतें होंगी।

इन रूटों से होकर निकलेंगे वाहन

गोला से लखीमपुर जाने वाले भारी वाहन सिकंद्राबाद होते हुए मनिकापुर तिराहे, अलीगंज मार्ग होकर जाएंगे। रोडवेज बसें अलीगंज और सिकंद्राबाद मार्ग होते हुए संचालित की जाएगी। गोला से लखीमपुर, सीतापुर, लखनऊ जाने के लिए रोडवेज बसें अलीगंज और सिकंद्राबाद मार्ग होकर जाएंगे, जिस पर टोल टैक्स भी नहीं पड़ेगा फिर भी यात्रियों की जेब ढीली होगी। हालांकि 11 जून से 30 जून तक रेलवे क्रॉसिंग बंद हुई थी, लेकिन उसे दौरान बसों का किराया नहीं बढ़ाया गया था। रोडवेज अधिकारियों के अनुसार गोला से अलीगंज मार्ग होते हुए लखीमपुर की दूरी 47 किलोमीटर और सिकंदराबाद होते हुए लखीमपुर की दूरी 49 किलोमीटर है। अलीगंज होते हुए जाने वाली बसों का किराया 67 रुपये और सिकंद्राबाद मार्ग से जाने वाली बसों का किराया 70 रुपए निर्धारित किया गया है। लखनऊ का किराया यथावत रहेगा। फ़रधान में टोल टैक्स पड़ने के बावजूद भी गोला से लखीमपुर का किराया एलआरपी तक का 54 रुपये और रोडवेज बस स्टॉप तक का किराया 58 रुपये पड़ता था। दूरी बढ़ने से किराए में 10 से 12 रुपये की वृद्धि की गई है। दैनिक यात्रियों को अब अपनी जेब ढीली कर अधिक किराया और अधिक समय खर्च कर यात्रा करनी पड़ेगी।

उदीयमान सूर्य को अर्घ्य देकर संपन्न किया लोक आस्था का महापर्व छठ

सेठ घाट पर उमड़ा श्रद्धालुओं का सैलाब, महिलाओं ने की घर-परिवार की मंगल कामना

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी।

अमृत विचार: लोक आस्था एवं प्रकृति के पावन पर्व छठ महापर्व का समापन मंगलवार को उदीयमान सूर्य को अर्घ्य देकर श्रद्धा और भक्ति के वातावरण में हुआ। जिले भर के छठ घाटों पर व्रती महिलाओं और श्रद्धालुओं का सैलाब उमड़ पड़ा।

मंगलवार की अलसुबह से ही महिलाएं परिवार संग प्रसाद से भरे डाला लेकर छठ गीत गाते हुए पूजा स्थलों की ओर रवाना हुईं। सेठ घाट पर श्रद्धालुओं की इतनी भीड़ रही कि पैर रखने तक की जगह नहीं बची। व्रती महिलाओं ने पारंपरिक रीति से घाट पर पूजन सामग्री सजाई और सूर्य देव के उदय होते ही जल में खड़े होकर अर्घ्य अर्पित किया। महिलाओं ने सूर्य भगवान की आरती उतारकर अपने घर-परिवार की सुख-समृद्धि और उन्नति की कामना की। इसके बाद उन्होंने एक-दूसरे की मांग में सिंदूर लगाकर सौभाग्य और कल्याण की प्रार्थना की। पूजन सम्पन्न होने के पश्चात व्रती महिलाओं ने प्रसाद वितरण किया और विधि-विधान से व्रत का परायण (समापन) किया। पूरे आयोजन के दौरान श्रद्धा, भक्ति और उल्लास का अद्भुत संगम देखने को मिला।

मितौली, अमृत विचार : क्षेत्र के विभिन्न गांवों में छठ पूजा त्योहार धूमधाम से मनाया गया। मंगलवार को सराय नदी के किनारे श्रद्धालु महिलाओं का पूरा हुजूम उमड़ा। महिलाओं ने सुबह से ही नए-नए परिधान व पूजा सामग्री लेकर नदी के किनारे पूजा अर्चना की। छठी मैया का व्रत करने वाली सभी महिलाओं को समाज सेवी रामदास वर्मा ठेकेदार ने फल व मिठाई वितरित कर कर छठी मैया से सभी के लिए मंगल कामना की। उधर सोमवार को शाम पूर्व राज्यसभा सांसद जुगुल किशोर और महिला आयोग की सदस्य सुजीता कुमारी ने पूजा-अर्चना में भाग लिया था।

महिला आयोग की सुजीता कुमारी कठिना नदी के लोहिया घाट और अवधपुर घाट पहुंचीं, जबकि जुगुल किशोर चरके घाट पर छठ पूजा में शामिल हुए। इस दौरान जुगुल किशोर ने सभी को छठ पर्व की बधाई दी।

सेठ घाट पर पानी में खड़ी होकर पूजन करतीं व्रती महिलाएं ● अमृत विचार

उगते सूर्य को अर्घ्य देतीं व्रती महिला।

उगते सूरज को अर्घ्य देकर 36 घंटे लंबे व्रत का किया पारण

गोला गोकर्णनाथ, अमृत विचार : छोटी काशी में मंगलवार सुबह उगते सूर्य को अर्घ्य देकर व्रती महिलाओं ने 36 घंटे लंबे व्रत का पारण कर दान पुण्य किया। सुबह बारिश होने पर महिलाएं छाता लेकर गोकर्ण तीर्थ के घाट पर पहुंची और विधिवत पूजा, अर्चना की। तीर्थ पर मंगलवार की सुबह अमीरी गरीबी की खायी से मुक्त हर कोई छठी मैया की स्तुति में लीन दिखाई दिया। महिलाएं छठी मैया को रिझाने के लिए पारंपरिक भोजपुरी गीत गुनगुनाती रही। घाट पर मौजूद व्रतियों के पति, पुत्र और परिवार के अन्य लोगों ने भी सूर्य देव को अर्घ्य दिया। छठ पर्व पर समूचे गोकर्ण तीर्थ परिसर को बिजली की झालरों से सजाया गया। सभी में पर्व को लेकर जबरदस्त उत्साह दिखाई दिया। विधायक अमन गिरि, नगर पालिका अध्यक्ष विजय शुक्ला रिंकू, युवा भाजपा नेता धर्मेंद्र गिरि मोंटी, भाजपा नगर अध्यक्ष सत्रोहन मिश्रा, कुंभी मंडल अध्यक्ष रविंद्र कुमार कटियार, सनशाइन हॉस्पिटल के डायरेक्टर डॉ. कौशल वर्मा आदि मौजूद रहे।

गोला के गोकर्ण तीर्थ में उगते सूर्य को अर्घ्य देतीं महिलाएं।

छठ महापर्व पर रेडक्रॉस ने दी चिकित्सा सेवा और चाय वितरित की

छठ पूजा के मौके पर व्रती महिला पुरुषों को चाय वितरण करतीं रेडक्रास सोसायटी की आरती व अन्य कार्यकर्ता।

लोक आस्था के महापर्व छठ पूजा के अवसर पर रेडक्रॉस सोसायटी की टीम ने सेठ घाट पर प्राथमिक चिकित्सा शिविर एवं चाय वितरण सेवा का आयोजन किया। रेडक्रॉस के आजीवन सदस्यों और स्वयंसेवकों ने छठ व्रतियों, उनके परिजनों, पुलिस व स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों, छठ आयोजन समिति तथा अन्य श्रद्धालुओं को गर्म चाय का प्रसाद वितरित किया। साथ ही बिस्किट, नमकीन, रस, ब्रेड और टॉफी भी भेंट की गईं। बारिश और ठंड के बीच व्रत पारण के बाद मिली गर्म चाय ने श्रद्धालुओं के चेहरों पर मुस्कान बिखेर दी। रेडक्रॉस की सचिव आरती श्रीवास्तव, मेंबर दीपक धवन, नारायण सेठ, कुमकुम गुप्ता, अनुराग सक्सेना, छठ आयोजन समिति सदस्य मृगांक शेखर, मनोज श्रीवास्तव आदि मौजूद रहे।

परंपरागत तरीके शारदा तट पर श्रद्धालुओं ने किया छठ पूजन

पसगवां, अमृत विचार : शारदा नहर के उदयपुर तट पर परंपरागत तरीके से छठ पूजा मनाई गई। इस दौरान सूर्योदय के समय उन्हें अर्घ्य देकर विधि पूर्वक पूजन किया गया। इससे पहले सूर्यास्त पर विधान पूर्वक पूजन किया गया था। पानी मे खड़े रहने के साथ 36 घंटे का निर्जला उपवास भी पूर्ण हुआ। व्रती महिलाएं जल में डुबकी लगाकर उगते हुए सूर्य को अर्घ्य देकर अपने परिवार की सुख-समृद्धि, संतान की दीर्घायु और जीवन में ऊर्जा की कामना की। घाट में श्रद्धालुओं की भारी भीड़ उमड़ी। सभी समय से पहले मौजूद थे और सूर्य उगते वक्त पूजा अर्चना की। भगवान सूर्यदेव को प्रात :कालीन अर्घ्य के साथ आज महापर्व छठ का शुभ समापन हुआ।

बसों में आग की घटनाओं को लेकर कराई जांच

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार : बसों में आग लगने की घटनाओं और रविवार को दिल्ली से सवारियां लेकर गोंडा जा रही बस में आगरा लखनऊ एक्सप्रेसवे पर अग्निकांड के बाद परिवहन निगम के अफसर गंभीर हो गए हैं। हालांकि रविवार की घटना में खड़ी बस में आग लगने से सवार यात्रियों को तो सकुशल निकाल लिया गया, लेकिन बस पूरी तरह जलकर खाक हो गई थी। देश भर में हुई कई घटनाओं को लेकर परिवहन निगम ने बसों की 10 बिंदुओं पर चेकिंग करने के निर्देश दिए हैं। इस दौरान तीन बसों में घोर अनियमितताएं मिली। इस पर एआरएम ने इन बसों के मालिकों को नोटिस जारी की है।

लखीमपुर डिपो में मंगलवार को फोरमैन ने करीब 20 बसों की जांच की, जिनमें तमाम खामियां मिलीं, जो आपात स्थित में यात्रियों के लिए मुसीबत बन सकती थी। डिपो की कई अनुबंधित बसों में बचाव के इंतजाम नाकाफी मिले। किसी में जंग लगा अग्निशमन यंत्र लटा मिला तो किसी में आग बुझाने का यंत्र एक्सपायरी मिला।कुछ बसों में अग्निशमन यंत्र इस तरह जाम थे कि उन्हें खोलने में जितना समय लगता उतने में बस के साथ खोलने वाले का ही बचना मुश्किल हो जाता। इसके अलावा कुछ बसों की इमरजेंसी विंडो नहीं खुल रही थी तो किसी में इसे खोलने वाला हैंडल तक नहीं था। फोरमैन राजन ने बताया मंगलवार को 20 बसों की सुरक्षा मानकों को लेकर जांच की गई।

इन बसों में मिली घोर अनियमितताएं

बस संख्या	खामियां
1. यूपी 31 बीटी 1974	आग बुझाने वाला यंत्र एक्सपायरी मिला।
2. यूपी 31 टी 8788	बस की बाडी ही खराब मिली।
3. यूपी 31 टी 8034-	इमरजेंसी विंडो का हैंडल गायब मिला।

इन बिंदुओं हो रही जांच

अग्निशमन यंत्र, वायरिंग, आयल लीकेज, अलग से सिस्टम न लगा हो, मोबाइल व ईटीएम चार्जर के लिए जुगाड़ का बना होना, बैट्री का टर्मिनल लूज न हो, बैट्री की लीड घिसी न हो, बैट्री पावर कट आफ स्विच कार्यरत हो।

सुरक्षा मानकों के 10 बिंदुओं पर बसों की रोजाना जांच कराई जा रही है। मंगलवार को जिन बसों में खामियां मिली हैं, उन्हें मालिको को दूर कराने की नोटिस जारी की गई है। दोबारा औचक निरीक्षण में कमियां मिलने पर बस संचालन बंद करा दिया जाएगा।
– गीता सिंह, एआरएम लखीमपुर डिपो

सीओ के आदेश के बाद भी नहीं हटे झूले

सिंगाही, अमृत विचार: नगर के रामलीला मेले में तीन दिन पहले पहुंचे सीओ शिवम कुमार ने बड़े झूलों और सर्कस को हटाने के निर्देश दिए थे, लेकिन इन्हें पुलिस अभी तक नहीं हटा सकी है। सिंगाही थानाध्यक्ष अजीत कुमार ने बताया कि रामलीला मेला समिति के लोगों को बुलाकर प्रतिबंधित झूले और सर्कस को हटाने के निर्देश दिए गए हैं।

नगर पंचायत से श्री रामलीला मेले की जगह की अनुमति मेला लगाने के लिए रामलीला मेला समिति को दे दी गई है। नगर पंचायत अध्यक्ष मोहम्मद कयूम ने बताया कि हर्ष वर्ष की तरह इस वर्ष भी श्री रामलीला मेला समिति को मेरा लगाने के लिए जमीन की आधिकारिक परमिशन शुल्क लेकर दी गई है। मेले में दुकानदारों से किसी प्रकार की तहबाजारी और अवैध वसूली करने से मना किया गया है।

1600 थारुओं पर फर्जी मुकदमे वापस कराने की पहल

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार : थारू समाज के लगभग 1600 लोगों पर दर्ज फर्जी मुकदमों की वापसी को लेकर अब उम्मीद की किरण दिखाई देने लगी है। पलिया विधायक रोमी साहनी ने नाबालिग और गरीब परिवारों को इन फर्जी मुकदमों से मुक्ति दिलाने की ठान ली है। उन्होंने सोमवार को थारू इलाके के ग्राम प्रधानों के साथ मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ से लखनऊ में मुलाकात कर उन्हें पूरी जानकारी दी। मुख्यमंत्री ने पूरी बात सुनी और संबंधित विभाग को जांच कर न्याय सुनिश्चित करने के निर्देश दिए।

वन विभाग की ओर से 2012 से 2016 के दौरान नेपाल सीमा से सटे थारू बाहुल्य गांवों के लगभग 1600 लोगों पर मुकदमे दर्ज कराए गए थे। आरोप है कि ये झूठे मुकदमे निर्दोष लोगों पर कराए गए। इस मुकदमे में कई नाबालिग और गरीब परिवार के लोग भी शामिल हैं। विधायक ने मुख्यमंत्री को सौंपे गए पत्र में जानकारी देते हुए बताया कि नेपाल सीमा से सटे थारू बाहुल्य गांवों के नाबालिगों, युवाओं पर वर्षों पहले विभिन्न आंदोलनों और वन विभाग से जुड़े विवादों के दौरान कई फर्जी मुकदमे दर्ज कर दिए गए थे, जिनमें से अधिकांश मामलों में न तो पुख्ता साक्ष्य हैं और न ही कोई ठोस आधार। इन मुकदमों के चलते बड़ी संख्या में थारू युवाओं को रोजगार, सरकारी योजनाओं और सामाजिक पहचान में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। मुख्यमंत्री ने विधायक और प्रतिनिधिमंडल की बात ध्यानपूर्वक सुनी और न्यायोचित कार्रवाई का भरोसा दिया। बताया जा रहा है कि मुख्यमंत्री ने अधिकारियों को निर्देश दिया है कि ऐसे सभी मुकदमों की समीक्षा कर वास्तविकता की जांच की जाए और जो मामले निराधार पाए जाएं, उन्हें जल्द वापस लिया जाए। थारू समाज के लोगों में इस मुलाकात से राहत और उम्मीद का माहौल है। क्षेत्र के ग्राम प्रधानों ने विधायक की पहल की सराहना करते हुए कहा कि वर्षों से चली आ रही यह पीड़ा अब समाप्त होने की दिशा में बढ़ रही है।

थारू समाज इस क्षेत्र की गौरवशाली पहचान है। उनके साथ अन्याय बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। मैंने मुख्यमंत्री से निवेदन किया है कि निर्दोष युवाओं को न्याय दिलाया जाए और उनके खिलाफ दर्ज झूठे मुकदमे वापस लिए जाएं। इस पर मुख्यमंत्री ने अधिकारियों को निर्देशित कर दिया है।
– **रोमी साहनी**, विधायक

● इलाके के प्रधानों के साथ मुख्यमंत्री से की मुलाकात, मिला आश्वासन

थारू इलाके के प्रधानों के साथ मुख्यमंत्री से मिलते विधायक रोमी साहनी। ● अमृत विचार

शराबियों ने कर्मचारी से की मारपीट

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार: थाना खीरी क्षेत्र के महावीर फ्यूल सेंटर पर सोमवार की रात तीन शराबियों ने पेट्रोल पंप कर्मचारी से मारपीट की और जान से मारने की धमकी दी। पीड़ित कर्मचारी की तहरीर पर पुलिस ने अज्ञात हमलावरों के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कर जांच शुरू कर दी है।

गांव हरदासपुर निवासी मधुराम शुक्ला महावीर फ्यूल सेंटर पर काम करता है। उसने बताया कि सोमवार की रात करीब 10 बजे तीन युवक शराब के नशे में पेट्रोल पंप पर आए। उन्होंने अपनी गाड़ी से उतरकर गाली-गलौज शुरू कर दी। मधुराम के अनुसार वह मीटर के पास था। जब उन्होंने कहा कि खाना खा ले, दो मिनट में तेल डाल देंगे। इतना कहते ही तीनों ने उसके साथ मारपीट शुरू कर दी और उसकी जेब में हाथ डालने का प्रयास किया। जब वह बचने के लिए ऑफिस की तरफ भागा, तो आरोपी जाते-जाते धमकी देकर बोले कि रात दो बजे जान से मार देंगे। पीड़ित ने बताया कि तीनों युवक खीरी क्षेत्र के ही रहने वाले हैं। उसने पुलिस से मामले की जांच कर कार्रवाई की मांग की है। एसओ निराला तिवारी ने बताया कि रिपोर्ट दर्ज कर ली गई है। सीसीटीवी फुटेज से हमलावरों की पहचान कराई जा रही है।

विकास कार्यों की डीएम ने की समीक्षा

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार: विकास कार्यों और योजनाओं को गति देने के उद्देश्य से डीएम दुर्गा शक्ति नागपाल ने मंगलवार को कलेक्ट्रेट स्थित अटल सभागार में सीएम डैशबोर्ड व सीएमआईएस पोर्टल पर प्रदर्शित सूचनाओं की गहन समीक्षा की। उन्होंने विभागवार आंकड़ों की जांच करते हुए संबंधित अधिकारियों को कड़े निर्देश दिए कि सभी योजनाओं की जानकारी समय से और शुद्ध रूप में पोर्टल पर अपडेट की जाए।

बैठक में डीएम ने कहा कि शासन स्तर पर सीधे सीएमआईएस पोर्टल और सीएम डैशबोर्ड के माध्यम से योजनाओं की निगरानी की जा रही है, ऐसे में किसी भी स्तर पर लापरवाही क्षम्य नहीं होगी। डीएम ने निर्देश दिए कि जिन विभागों की प्रगति अपेक्षा के अनुरूप नहीं है, तत्काल सुधारात्मक कदम उठाएं। कहा कि जिले की रैंक प्रभावित न होने पाए। सभी को अपने-अपने विभागों की सीएम डैशबोर्ड से संबंधित कार्यों, योजनाओं की बराबर समीक्षा करने को कहा। इस मौके पर सीडीओ अभिषेक कुमार, सीएमओ डॉ. संतोष गुप्ता, पीडी एसएन चौरसिया, डीडीओ गजेंद्र प्रताप सिंह, डीएसटीओ अरविंद कुमार सहित आदि जिलास्तरीय अधिकारी मौजूद रहे।

समीक्षा बैठक में जिला अधिकारी और अन्य अधिकारी। ● अमृत विचार

सड़क दुर्घटना में बाइक सवार युवक घायल

उचौलिया, अमृत विचार : लखनऊ दिल्ली नेशनल हाईवे पर उचौलिया जंगबहादुरगंज के मध्य लखनौरिया के पास अज्ञात वाहन की टक्कर से बाइक चालक घायल हो गया। बाइक पर सवार उसकी मां बाल बाल बच गई। पसगवां थाना क्षेत्र के गांव भोगीपुर निवासी मनोज कुमार अपनी मां रेशमा के साथ दवाई लेने शाहजहांपुर जा रहे थे। लखनौरिया तिराहे पर अज्ञात वाहन ने उनकी बाइक को टक्कर मार दी, जिससे बाइक गिर गई। आसपास के लोग मौके पर पहुंचे। सेवा का जुनून की टीम भी पहुंची। टीम ने घायल मनोज को प्राथमिक उपचार दिया और एंबुलेंस से घायल मनोज को सीएचसी पसगवां भेजा।

महिला से खेत में छेड़छाड़ की कोशिश, राहगीरों ने बचाया

लखीमपुर खीरी/बेहजम, अमृत विचार : थाना नीमगांव क्षेत्र में अपने दो मासूम बच्चों के साथ मायके से पैदल ससुराल आ रही एक महिला को रास्ते में गांव के ही एक युवक ने दबोच लिया। दुष्कर्म करने की कोशिश की। बच्चों के रोने पर राहगीर मौके पर आ गए। इस पर आरोपी जान से मार देने की धमकी देकर भाग निकला। पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की है। पीड़ित महिला ने बताया कि सोमवार को वह अपने मायके से ससुराल पैदल जा रही थी। उसके साथ दो उसके छोटे बच्चे भी थे। रास्ते में गन्ने के खेत के पास गांव का ही मुकेश पीछे से आया और उसका हाथ पकड़ लिया। साड़ी का पल्लू मुंह पर लपेटकर गन्ने के खेत की ओर खींचने लगा। वह जब चीखी चिल्लाई तो बच्चे भी सड़क पर रोने लगे, लेकिन आरोपी नहीं माना और उसे गन्ने के खेत में खींच ले गया और साड़ी का पल्लू मुंह में ठूंस कर दुष्कर्म करने की कोशिश की। इसी बीच गुजर रहे दो-तीन लोग वहां पहुंचे और बच्चों से पूछा कि क्या हुआ। बच्चों के बताने पर राहगीर खेत में पहुंचे तो आरोपी महिला को छोड़कर धमकाते हुए भाग निकला। पीड़िता ने घर पहुंच कर परिवार वालों को पूरी बात बताई। थाना नीमगांव पुलिस को तहरीर दी। पुलिस ने आरोपी के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कर जांच शुरू कर दी है।

अमृत विचार

बरेली, बुधवार, 29 अक्टूबर 2025

न्यूज ब्रीफ

टीम ने दो बाल श्रमिकों को कराया मुक्त

शाहजहांपुर,अमृत विचार : जिला प्रशासन द्वारा गठित टास्क फोर्स टीम ने मंगलवार को शहर के विभिन्न इलाकों में बाल श्रम अवमुक्तिकरण अभियान चलाया। इस दौरान छोटा चौक, चारखंबा और मोहल्ला किला क्षेत्र से दो बाल श्रमिकों को कार्यस्थलों से मुक्त कराया गया। अभियान में श्रम प्रवर्तन अधिकारी ओम प्रकाश, श्रम प्रवर्तन अधिकारी राजेश कुमार सिंह, एंटी ह्यूमन ट्रैफिकिंग यूनिट से उपनिरीक्षक रोहित और अरुण कुमार, चाइल्ड लाइन से विनय शर्मा तथा पेस संस्था की ओर से गोपाल मिश्रा शामिल रहे। मुक्त कराए गए दोनों बच्चों को बाल कल्याण समिति के अध्यक्ष और सदस्यों के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जहां से उन्हें बाल संरक्षण गृह भेजा गया।

युवक गिरफ्तार चोरी की बाइक बरामद

तिलहर , अमृत विचार : पुलिस ने वाहन चोरों को गिरफ्तार किया है। पुलिस चोरों के कब्जे से चोरी की एक बाइक बरामद की है। तिलहर थाना के उप निरीक्षक राहुल कुमार को मंगलवार की दोपहर सूचना मिली कि सरयू पुलिया के निकट दो वाहन चोर खड़े है और चोरी की बाइक बेचने की फिराक में है। पुलिस ने दोनों वाहन चोरों को गिरफ्तार कर लिया। पकड़े गए वाहन चोर वारिश और मुजीब उम्मरपुर थाना तिलहर के है।

बसारा गोशाला में भूख-प्यास से तड़प रहे गोवंश

वीडियो वायरल, जिम्मेदारों की लापरवाही से हो रही मौतें, शवों के बीच जिंदगी तलाश रहे बेजुबान

संवाददाता, बेहजम

गोशाला में मृत अवस्था में पड़े गोवंश ● अमृत विचार

गोशाला में जिंदगी और मौत के बीच जूझ रही गाय।

अमृत विचार : विकासखंड बेहजम क्षेत्र के ग्राम पंचायत बसारा स्थित गौ आश्रय केंद्र में लापरवाही और बदइंतजामी के हालात चरम पर हैं। मंगलवार को गोशाला में कई गोवंश मृत पाए गए, जबकि बाकी पशु भूख और प्यास से तड़पते दिखे। मृत पशुओं के बीच बाकी बचे जानवरों की हालत भी बेहद दयनीय बताई जा रही है। इसका वीडियो वायरल होने के बाद प्रशासन में हड़कंप मचा हुआ है।

ग्राम पंचायत बसारा स्थित गौशाला में जो दृश्य देखने को मिला वह जिम्मेदारों की लापरवाही उजागर करता हैं। गौशाला में बेजुबान गायें भूख और प्यास से तड़प कर दम तोड़ रही हैं। मरी हुई गायों को कुत्ते नोच खा रहे हैं। अन्य जीवित पशु भी भूख प्यास से तड़प रहे हैं। गौशाला की स्थिति इतनी खराब है कि दुर्गन्द से सांस लेना मुश्किल है। गौशाला की दुर्दशा का वीडियो सोशल मीडिया पर प्रसारित होने के बाद प्रशासनिक अधिकारियों में हड़कंप मच गया। अफसर अपनी नाकामी और लापरवाही को छुपाने के लिए तमाम हथकंडे अपना रहे हैं। वीडियो प्रसारित होते ही मृत पशुओं को आनन फानन में गौशाला से हटाया गया। गौशाला पहुंचे पशु चिकित्सा अधिकारी ने बीमार पशुओं का उपचार किया। पशु चिकित्सा अधिकारी अनिरुद्ध कुमार ने बताया गौशाला में 361 पशुओं की संख्या दर्ज है। समय-समय पर टीम व स्वयं जाकर पशुओं के उपचार करते रहते हैं, जब पशुओं को भरपेट चारा पानी मिलेगा तभी वह स्वस्थ होंगे। वहीं सूत्र बताते हैं कि गौशाला में वर्तमान समय में करीब दो सौ गौवंश ही मौजूद हैं, जबकि सरकारी अभिलेखों में 361 पशुओं की संख्या अंकित है।

ऐसे में सवाल उठता है कि आखिरकार अन्य गोवंश कहां चले गए। उन्हें धरती खा गई या फिर आसमान निगल गया। स्थानीय लोगों का कहना है कि बार-बार शिकायत के बावजूद न तो चारा-पानी की व्यवस्था सुधारी जा रही है, न ही मृत पशुओं को समय से हटाया जाता है। गांव के एक बुजुर्ग ने कहा कि अगर यही हाल रहा तो जल्द ही पूरा गौ आश्रय श्मशान बन जाएगा। एनजीओ पर्यावरण संरक्षण के कार्यकर्ता रघुनंदन प्रसाद ने बताया कि अधिकारियों के निर्देश पर 27 सितंबर 25 से ग्राम पंचायत बसारा के गो आश्रय केंद्र की देखरेख की जिम्मेदारी मिली है। पशुओं का समुचित इलाज नहीं हो पा रहा है, जिस कारण पशुओं के मरने की संख्या बढ़ रही है। चारा पानी की पर्याप्त व्यवस्था है।

> गोशाला से मेरा कोई लेना-देना नहीं है। हमने अधिकारियों को लिखकर दे दिया है। सरकार की मंशा के अनुरूप गोशाला संचालन में ग्राम पंचायत अधिकारी का सहयोग नहीं मिल पा रहा था। इसलिए मुझे विभागीय अधिकारियों को लिखकर देना पड़ा था कि ग्राम पंचायत गोशाला का संचालन करने में असमर्थ हैं।
> – किरण देवी वर्मा, ग्राम प्रधान

> बसारा गो सेवा केंद्र ग्राम पंचायत को आवंटित है, जिसकी जिम्मेदार ग्राम प्रधान और ग्राम पंचायत अधिकारी की है, यह किसके माध्यम व्यवस्था को संचालित करवाते हैं, यह वही बता सकते हैं। हम कई दिनों से गोसेवा केंद्र नहीं पहुंच सके हैं। स्थित की जानकारी कर उच्च अधिकारियों को सूचित करेंगे। – **शिवाशीष श्रीवास्तव,** एडीओ पंचायत

एनजीओ की देखरेख में चल रही गोशाला

ग्राम पंचायत अधिकारी अमीर चंद राणा ने बताया कि पशुओं का समय से उपचार हो जाए तो मौत की संख्या कम हो सकती है, लेकिन गौशाला में पशुओं को सही उपचार नहीं हो पा रहा है, जिस कारण गौशाला में पशुओं के मरने की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। करीब चार-पांच दिन से गौशाला नहीं पहुंच पाया हूं। कितने गोवंश पशु वहां पर दर्ज हैं और कितने मौजूद हैं कितने की मौत हुई है यह बताने में असमर्थ हूं। ग्राम प्रधान ने गौशाला चलाने में असमर्थता जाहिर की थी। इस पर सीडीओ ने एनजीओ के माध्यम गौशाला चलाने के निर्देश दिए थे। 27 सितंबर से गो पर्यावरण संरक्षण नामक संस्था गोशाला का संचालन कर रही है।

आश्रम से डोला लेकर शारदा तट के लिए निकले श्रद्धालु

श्रीकुल आश्रम से डोला ले जाते श्रद्धालु ● अमृत विचार

संवाददाता, पलिया कलां

अमृत विचार: आध्यात्मिक श्रीकुल सेवा आश्रम से देवी जी का डोला लेकर श्रद्धालु मंगलवार को छह किलोमीटर दूर पैदल गाजे- बाजे के साथ शारदा तट पहुंचे। जहां पूजन-अर्चन व ध्वज स्थापन कर यज्ञ स्थल में देवी की स्थापना की गई। शारदा नदी से श्रद्धालु स्त्री -पुरुषों ने यज्ञ स्थल तक जल कलश यात्रा निकाली।

पलिया- भीरा के मध्य स्थित पवित्र शारदा नदी के तट पर मंगलवार से कार्तिक पूर्णिमा तक चलने वाले शतचंडी महायज्ञ के लिए देवी जी का डोला आश्रम से उठकर अपराह्न शारदा नदी तट पर पहुंचा। जहां पूजन के बाद नदी से कलश यात्रा निकालकर यज्ञ स्थल में वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ कलशों को स्थापित किया गया। कार्यक्रम में नगर के प्रमुख समाज सेवी आलोक मिश्रा, डॉ एके अवस्थी, बलराम गुप्ता, गगन मिश्रा, डीके श्रीवास्तव, रामू वर्मा, सुनील गुप्ता, विश्वकांत त्रिपाठी, विकास दीक्षित, डीपी मिश्र सहित आश्रम के संस्थापक गोविंद माधव आचार्य अतुल शुक्ला, आचार्य राजेंद्र तिवारी,आचार्य सोमेश मिश्रा आदि बड़ी संख्या में महिलाएं बच्चे शामिल रहे। सुरक्षा की दृष्टि से थानाध्यक्ष पलिया पंकज त्रिपाठी टीम के साथ मौके पर मौजूद रहे।

● महिलाओं ने निकाली जल कलश यात्रा

धर्म को बचाने के लिए धर्मगुरुओं को लानी होगी क्रांति : प्रशांत प्रभु

संवाददाता, पसगवां

● जंगबहादुरगंज में श्री आदिगुरु वैदिक सेवा संस्थान के तत्वावधान में चल रही कथा

कथा सुनाते प्रशांत प्रभु महाराज।

अमृत विचार : जंगबहादुरगंज में श्री आदिगुरु वैदिक सेवा संस्थान के तत्वावधान में चल रही श्री शिव महापुराण कथा में शैवाचार्य प्रशांत प्रभु महाराज ने कहा कि जैसा अन्न खाते है वैसा मन बन जाता है। यही मन मानव के आचरण का कारण बनता है।

मनुष्य को अपने कर्मों के हिसाब से जब तक भोग भोगना है, तब तक उसे जीना ही पड़ेगा। आचरण में आए परिवर्तन के चलते ही मनुष्य बिना आत्मा के ही जी रहा है ।

ऐसे मानव आत्महीन,अज्ञानी व अविवेकीय है। अगर आपके ह्रदय में शिवत्व है, दया है तो शरीर चलता रहेगा और शिव की कृपा प्राप्त होती रहेगी। यदि मानव शिवालय में जाकर अपने पापों की क्षमा याचना करता है, तो पश्चाताप के कारण वह समस्त पापों को मुक्त हो सकता है। सनातन को बचाने व धर्म के लिए हम सभी को पीड़ित परिवार की मदद करनी ही चाहिए। सनातन का साथ देना चाहिए। उन्होंने व्यासपीठ से बहराइच कांड में पीड़ित परिवार के लिए आर्थिक सहायता देने की घोषणा भी की। सनातनी को एकजुट होना पड़ेगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो भविष्य अंधकार मय हो जाएगा। हमें जातियों में न बंटकर हमको अपना परिचय सनातन बताना चाहिए। हिन्दू शास्त्र नहीं पढ़ेगा, ज्ञान को महत्व नहीं देगा तो उसका शोषण होगा। जिसको अपने गुरु व माता-पिता से दुर्गंध आने लगे तो समझ लो उसे अभी ज्ञान नहीं हुआ है। गणेश प्रतिमा के बारे में बताते हुए कहा कि तालाब की मिट्टी, गोबर, गंगाजल के मिश्रण से गणेश बनाओ। प्लास्टर आफ पेरिस मूर्ति की पूजा न करें।

धर्म को बचाने के लिए धर्मगुरुओं को क्रांति लानी होगी। धर्म को अपवित्र करने वालों का सर्वनाश हो जाएगा। महाराज ने शिव महिमा के बारे में बताया कि शिव की भक्ति करने से विधि का विधान भी बदल जाता । शिव ज्योति रूप में है । शिवलिंग को इसलिए ज्योतिर्लिंग कहकर पूजते है । शिव परम् ज्योति स्वरूप ही ईश्वर है । शिव कथा सुनने से शिव पूजन का लाभ प्राप्त होता है।

कोटवारा की श्रीराम कथा में सुनाया राम जन्म का प्रसंग

संवाददाता, बिलहरी

श्रीराम कथा सुनाते पंडित पियूष दीक्षित।

अमृत विचारः क्षेत्र के गांव कोटवारा में हो रही श्रीराम कथा में कथा व्यास पंडित पियूष दीक्षित ने भगवान श्रीराम के जन्म की पावन कथा भक्तों को श्रवण कराई।

कथा व्यास ने सुनाया कि जब एक बार राज दशरथ को ग्लानि हुई कि उनके जीवन का चौथा पन आ गया है, कोई भी संतान नही है। एक मृग को भी नहीं मार सकता तो अब वंश कैसे चलेगा, कोई आगे चलकर नाम लेने वाला नहीं है। वह अपनी तीनों रानियों के साथ अपने कुलगुरु वशिष्ठ के पास नंगे पैर चलकर उनके आश्रम पहुंचे, उनसे अनुनय विनय की और अपनी सारी व्यथा गुरु को सुनाई। तब गुरू ने कहा कि जाओ राजन अब आपके एक नहीं चार पुत्र होगे, लेकिन आप अपने भवन में जाकर श्रृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्रेष्टि यज्ञ कराओ। गुरू की आज्ञा पाकर राजा दशरथ ने श्रृंगी ऋषि को बुलाकर यज्ञ कराया। यज्ञ की पूर्णाहूति के पश्चात यज्ञ भगवान ने राजा दशरथ को खीर कटोरा प्रदान करते हुये कहते है कि इस खीर को तीनां रानियों को बराबर भाग कर बांट देना। खीर खाने के पश्चात तीनो रानियां गर्भवती हो गईं और नौ महीने के पश्चात राजा दशरथ के यहां चार पुत्रों का जन्म हुआ, जिनका नाम राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न रखा गया। यह कथा सुनकर भक्त भाव विभोर हो गये। कथा व्यवस्थापक भाजपा नेता मिथिलेश मिश्र, राहुल मिश्र, शिवपूजन शर्मा, नैमिष मिश्र, राहुल कुमार, रमेश दिक्षित, मुकेश, नवनीत अवस्थी, शैलेन्द्र अवस्थी, रामदुलारे पांडे, जयराम यादव, रामकिशोर, रामसरन यादव सहित तमाम ग्रामीण मौजूद रहे।

रंगोली-चित्रकला प्रतियोगिता, खेलकूद और सांस्कृतिक कार्यक्रम में लिया भाग

संवाददाता, बरवर

फीता काटकर कार्यक्रम आरंभ करते विधायक लोकेंद्र प्रताप सिंह। ● अमृत विचार

● विधायक ने फीता काटकर किया कार्यक्रम का आरंभ

अमृत विचार : चंदन लाल विद्या मंदिर इंटर कॉलेज भौनापुर में राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य मंच कार्यक्रम के साथ खेलकूद, रंगोली, चित्रकला प्रतियोगिता व सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

मुख्य अतिथि विधायक लोकेन्द्र प्रताप सिंह ने फीता काटकर कार्यक्रम का आरंभ किया। विशिष्ट अतिथि सीओ मोहम्मदी अरुण कुमार सिंह व बीडीओ पसगवां मोहित कौशिक ने कार्यक्रम को संबोधित किया और विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत किया। कार्यक्रम का संचालन प्रधानाचार्य मनोज वर्मा व परमेश्वदीन ने किया। इस अवसर पर विद्यालय के अध्यक्ष गोपीनाथ मिश्र, प्रबंधक सुरजनलाल वर्मा,उप प्रधानाचार्य बृजसिंह, मोनू वर्मा कुशवाहा, रामौतार वर्मा, डा ओंकार सक्सेना, आशीष पाण्डेय, सत्येन्द्र बहादुर सिंह, यश वर्मा आदि मौजूद रहे। चित्रकला प्रतियोगिता में कक्षा 12 की पूनम पहले, कक्षा छह का अंकुर और सात का अमन सक्सेना ने तीसरा स्थान प्राप्त किया। रंगोली प्रतियोगिता में कक्षा 12 की गगन लता, अपर्णा और उमा की टीम ने पहला, कक्षा 10 की निहारिका, आरती और निधि ने दूसरा और कक्षा 10 की अक्षिता, साक्षी और कक्षा 11 की परी ने तीसरा स्थान प्राप्त किया। अर्पिता कुशवाहा, रुचिका, साधना, ऋतिका, करिश्मा, सरिता, कविता, नंदनी और अंशिका ने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए।

पारिवारिक कलह में युवती ने फंदा लगाकर दी जान

इस्लामनगर, अमृत विचार : थाना इस्लामनगर क्षेत्र के गांव ब्यौर कासिमाबाद में एक युवती ने मंगलवार सुबह अपने घर में फंदा लगाकर आत्महत्या कर ली। युवती ने पारिवारिक कलह के चलते यह कदम उठाया। पुलिस ने शव का पोस्टमार्टम कराकर परिजनों को सौंप दिया। परिजनों में कोहराम मचा है। गांव निवासी खुशबू (20) पुत्री चरण सिंह नगर के डिग्री कॉलेज से बीए कर रही थी। सोमवार रात वह अपने कमरे में सोने चली गई। सुबह परिजन जागे तो उसका कमरा भीतर से बंद था। काफी देर तक आवाज देने पर भी कोई जवाब न मिलने पर परिजनों ने दरवाजा तोड़ा। भीतर खुशबू का शव फंदे पर लटका मिला। परिजनों की सूचना पर पुलिस पहुंची। शव को फंदे पर नीचे उतारकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। ग्रामीणों ने बताया कि खुशबू का उसके परिजनों से किसी बात को लेकर अक्सर विवाद होता रहता था। जिसकी वजह से उसने आत्महत्या कर ली होगी।

कृषि महाविद्यालय में विद्यार्थियों के कर्मयोगी बनने पर दिया जोर

संवाददाता, गोला गोकर्णनाथ

कृषि महाविद्यालय में मुख्य अतिथि को सम्मानित करते महाविद्यालय के प्रभारी अधिष्ठाता।

● मध निषेध, विकसित भारत बनाने के लिए किया जागरूक

अमृत विचार : कृषि महाविद्यालय कैंपस जमुनाबाद खीरी में वरिष्ठ आईएएस ने विद्यार्थियों को कर्म योगी बनने, मद्यपान से दूर रहने एवं विकसित भारत बनाने के प्रति जागरुक करते हुए विकसित भारत की परिकल्पना प्रस्तुत की।

मुख्य अतिथि अपर मुख्य सचिव एल वेंकटेश्वर लू ने विद्यार्थियों को कर्म योग पर चलने, मादक पदार्थों से बचने के प्रति जागरुक करते हुए कहा कि उनका वर्तमान, भूत और भविष्य सब एक ही है, चाहे वह गीता पढ़े या रामायण। सब में नेक बनने के बारे में ही बताया गया है। कर्म योग का मतलब बताते हुए कहा कि विद्यार्थी जो भी कार्य करें उसे मन लगाकर उत्साह से करें। कोई जो भी व्यवसाय कर रहा हो उसे भी अच्छे से करना चाहिए। उन्होंने विद्यार्थियों को नशे से होने वाले दुष्परिणामों के बारे में बताया। उन्होंने कहा कि विकसित भारत की परिकल्पना तभी संभव है, जब गांव विकसित हो और गांव तभी विकसित होंगे जब समाज विकसित होगा। अध्यक्षता कर रहे महाविद्यालय के प्रभारी अधिष्ठाता डॉ अनिल कुमार सिंह ने मुख्य अतिथि का आभार व्यक्त किया। पूर्व सैनिक जलज मिश्रा, डॉ. पीयूष शुक्ला, डॉ. रविंद्रनाथ वर्मा, विनीत सिंह भदौरिया, डॉ. अनिल सिंह, डॉ. अरुण कुमार, डॉ. सत्येंद्र कुमार सहित शिक्षक एवं विद्यार्थी मौजूद रहे।

पूर्वी उत्तर प्रदेश का प्रतिनिधित्व करेंगे विद्या भारती विद्यालय के छात्र

लखीमपुर खीरी, अमृत विचार: विद्या भारती से संबद्ध पं. दीनदयाल उपाध्याय सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कॉलेज (यू.पी. बोर्ड) के छात्रों ने क्षेत्रीय विज्ञान मेला में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर जनपद का नाम रोशन किया है। विद्यालय के किशोर वर्ग में छात्र आराध्य गिरि ने विज्ञान प्रदर्श (सेंसर रोबोटिक्स) तथा छात्र आदित्य वर्मा ने विज्ञान प्रयोग में प्रथम स्थान प्राप्त किया। वहीं तरुण वर्ग के विज्ञान प्रश्नमंच में छात्र सौरभ वर्मा, अचल सिंह और नितिन सिंह की टीम ने द्वितीय स्थान हासिल किया।

ये सभी विद्यार्थी सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कालेज, वीआईपी रोड, फतेहपुर में आयोजित क्षेत्रीय स्तर की प्रतियोगिता में चयनित हुए हैं। प्रथम स्थान प्राप्त छात्रों का चयन अब मेरठ में 13 नवंबर से आयोजित अखिल भारतीय विज्ञान मेला के लिए हुआ है। प्रधानाचार्य डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह ने चयनित छात्रों को सम्मानित कर शुभकामनाएं दीं। उन्होंने कहा कि यह विद्यालय और जनपद दोनों के लिए गौरव की बात है कि हमारे छात्र पूर्वी उत्तर प्रदेश क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करेंगे। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि ये विद्यार्थी राष्ट्रीय स्तर पर भी उत्कृष्ट प्रदर्शन कर जिले का नाम रोशन करेंगे।

Rohilkhand INFERTILITY & IVF CENTRE
Creating life.... completing families.

दिल्ली का जाना-माना IVF सैन्टर
RISAA IVF
Creating life.... completing families.

अब अधूरे सपने होंगे पूरे

निःसन्तानता निवारण टेस्ट ट्यूब सैन्टर

परामर्श शुल्क

₹200/- ₹100/-

दिन : प्रत्येक सोमवार व शुक्रवार
समय : प्रातः 10:00 से 02 बजे तक

उपलब्ध सुविधायें :-
★ निःसन्तानता सम्बन्धित जाँचें
★ टेस्ट ट्यूब बेबी (IVF) रियायती दरो पर
★ लैब टेस्ट भारी छूट पर
★ इन्फर्टीलिटी अल्ट्रासाउंड मात्र 200/- में

अपनी नन्हीं खुशियों को आज ही अपने घर लाये हमारे साथ !

विशेषतायें:-
★ 25 वर्षों के अनुभव के साथ।
★ ICSI, I.U.I., लेप्रोस्कॉपी हिस्ट्रोस्कोपी (दुरबीन द्वारा बच्चेदानी व अंडेदानी की जाँच)
★ उच्चतम सफलता दर ★ विश्वस्तीय आधुनिकतम IVF लैब

देश विदेश में हजारों दम्पत्ति हुए लाभान्वित आइये आप भी यह उम्मीद पाएं.....

स्थान :
IVF सैन्टर Ist Floor न्यू बिल्डिंग कमरा नं. 106
रोहिलखण्ड मेडिकल कॉलेज एवं हॉस्पिटल
सुरेश शर्मा नगर चौराहा, डेंटल कॉलेज रोड, बरेली
हेल्पलाइन नं० 6398018900

पूर्ण एन.ए.बी.एच (NABH) से मान्यता प्राप्त हॉस्पिटल

गोपाष्टमी महोत्सव में गौ माता को स्नान कराकर किया पूजन

संवाददाता, गोला गोकर्णनाथ

गोला की गोशाला में गायों को स्नान कराते गौ सेवक।

अमृत विचारः गोपाष्टमी महोत्सव के छठवें दिन एक कोचिंग संस्थान के संयोजन में गायों को स्नान कराकर उनका पूजन किया गया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि भूतपूर्व सैनिक केजी त्रिवेदी, विशिष्ट अतिथि राष्ट्रीय किसान शक्ति संगठन के प्रदेश अध्यक्ष श्रीकृष्ण वर्मा ने कोचिंग संस्थान के कार्यकर्ताओं के साथ गौ माता को स्नान कराकर पूजन आरती की। मुख्य अतिथि केजी त्रिवेदी ने कहा कि गौ माता की सेवा करने का सौभाग्य पुण्य कर्मों से मिलता है। विशिष्ट अतिथि किसान नेता श्रीकृष्ण वर्मा ने कहा कि गौ माता बहुउपयोगी है। गोपाष्टमी महोत्सव आयोजक/नगर पालिका अध्यक्ष विजय शुक्ला रिंकू ने आगंतुक अतिथियों को अंगवस्त्र एवं स्मृतिचिन्ह देकर सम्मानित कर आभार व्यक्त किया। गौ स्नान में पटेल सुशील वर्मा, विनीत भदौरिया, डॉ. पियूष शुक्ला, धीरज बाजपेयी, सतीश वर्मा, सुनील बाजपेयी, विनोद गौतम, शैलेन्द्र सक्सेना, संजय लाला, राजेश कुमार अग्निहोत्री, संजीव दीक्षित, आशुतोष मिश्रा, श्याम सिंह कुशवाहा, रविन्द्र कटियार, लवकुश अवस्थी आदि गौ सेवक मौजूद रहे।

500 से अधिक बच्चों ने लिया गौरक्षा का संकल्प

गोला गोकर्णनाथ, अमृत विचार : श्री धर्मादा समिति गोशाला के सात दिवसीय गोपाष्टमी महोत्सव के पांचवें दिन विद्यालय प्रबंधक एवं प्रधानाचार्य कल्याण समिति के पदाधिकारियों ने नगर के विभिन्न स्कूल, कॉलेजों के विद्यार्थियों को गौ रक्षा का संकल्प दिलाया। विद्यालय प्रबंधक एवं प्रधानाचार्य कल्याण समिति के सह आयोजन में गौ रक्षा संकल्प कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्य अतिथि पूर्व सैनिक कल्याण समिति के अध्यक्ष राज राजेश्वर सिंह, विशिष्ट अतिथि गुरुद्वारा के प्रमुख सेवादार सुखविंदर सिंह टोनी, भाजपा नगराध्यक्ष शत्रोहन मिश्रा, शिक्षक राजेन्द्र सोनी ने गौ पूजन कर किया। गोपाष्टमी महोत्सव के आयोजक नगर पालिका अध्यक्ष विजय शुक्ला रिंकू एवं समिति के पदाधिकारियों ने सभी अतिथियों का स्मृति चिन्ह, अंगवस्त्र एवं माल्यार्पण कर स्वागत किया। मुख्य अतिथि भूतपूर्व सैनिक कल्याण समिति के अध्यक्ष राज राजेश्वर सिंह ने बच्चों को गौ रक्षा का संकल्प दिलाया। विशिष्ट अतिथि गुरुद्वारा गोला के प्रमुख सेवादार सुखविंदर सिंह टोनी ने कहा कि गाय को खुला नहीं छोड़ना चाहिए। भाजपा नगर अध्यक्ष शत्रोहन मिश्रा ने कहा कि गौ माता की हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस अवसर पर नगर पालिका अध्यक्ष विजय शुक्ला रिंकू, विद्यालय प्रबंधक एवं प्रधानाचार्य कल्याण समिति के प्रांतीय महामंत्री शैलेन्द्र सक्सेना,अनुज खरे, श्याम किशोर अवस्थी, सरस्वती विद्या निकेतन प्रधानाचार्य महेन्द्र त्रिपाठी, अवधेश मिश्रा, संजय तिवारी, अरविन्द श्रीवास्तव, डीपी श्रीवास्तव, अवनीश मिश्र, इंजीनियर मिलिन्द शुक्ला, रामअवतार यादव, रविन्द्र कटियार, सुनील शर्मा, आकाश अवस्थी आदि गौ सेवक मौजूद रहे।

बजाज चीनी मिल में पेराई सत्र शुरू करने की तैयारी

गोला गोकर्णनाथ, अमृत विचारः आगामी गन्ना पेराई सत्र शुरू करने के लिये बजाज चीनी मिल में मंगलवार को बॉयलर पूजन कर अग्नि प्रज्वलित की गयी।

चीनी मिल के इंजीनियरिंग हेड केके तिवारी ने बताया कि चीनी मिल का मरम्मत कार्य पूरा हो चुका है। किसानों की सुविधा का ध्यान रखते हुए नवंबर के प्रथम सप्ताह से पेराई सत्र प्रारंभ कर दिया जाएगा, जिससे कि खेतों में खड़ा पेड़ी गन्ना समय से मिल को आपूर्ति हो तथा खेत खाली होने से उचित समय पर गेहूं की बुवाई हो सके।

साथ ही मिल चालू होने से किसानों को औने पौने दामों पर गन्ना कोल्हुओं पर नहीं बेचना पड़ेगा। श्री तिवारी ने कहा किसानों का अपना पूरा गन्ना मिल में बिकने से उनके बेसिक कोटा में वृद्धि होती है तथा सरकार द्वारा निर्धारित गन्ना मूल्य की प्राप्ति होती है। बॉयलर पूजन के समय एके पांडे, पीसी गुप्ता, खुशहाल सिंह, संदीप कटियार, मनीष द्विवेदी, रितेश दुबे सहित काफी संख्या में अधिकारी, कर्मचारी मौजूद रहे।

बारिश से खेतों में कटी फसल को नुकसान

तापमान में गिरावट से ठंड का अहसास, दिन भर होती रही रिमझिम बारिश, किसानों की मेहनत पर पानी फिरा

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार : जिले में बुधवार से आसमान में छाए बादलों के बाद रात से शुरू हुई रिमझिम बारिश ने मौसम का मिजाज पूरी तरह बदल दिया है। बारिश के चलते ठंड में अचानक इजाफा हुआ है, वहीं खेतों में कटी पड़ी फसलों को भी भारी नुकसान पहुंचा है। किसानों की मानें तो अगर अगले एक-दो दिन में अच्छी धूप नहीं निकली, तो नुकसान और बढ़ सकता है। दिन का अधिकतम तापमान 23.0 डिग्री सेल्सियस, जबकि न्यूनतम तापमान 19.0 डिग्री सेल्सियस रिकार्ड किया गया।

गांवों में किसानों ने बताया कि पिछले कुछ दिनों से वे धान की कटाई में जुटे थे। कई जगहों पर धान की फसल कटकर खेतों और खलिहानों में पड़ी थी, लेकिन बारिश के चलते अब वह भीगकर खराब होने लगी है। कुछ जगहों पर गन्ने की फसल भी गिरी हुई बताई जा रही है। बारिश से न सिर्फ फसलों को नुकसान हुआ है, बल्कि मिट्टी गीली होने से खेतों में दोबारा काम करना भी मुश्किल हो गया है। पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था भी प्रभावित

भानपुर में प्रभावित हुई धान की फसल। ● अमृत विचार

हुई है। किसानों का कहना है कि इस मौसम में होने वाली बारिश ने रबी की बुवाई पर भी असर डाल दिया है। जिन किसानों ने खेत की जुताई कर ली थी, अब उन्हें दोबारा इंतजार करना होगा।

ग्रामीण इलाकों में बच्चों और बुजुर्गों पर ठंड का असर बढ़ गया है। बाजारों और सड़कों पर सन्नाटा पसरा दिखा, लोग घरों में दुबके रहे। मौसम विभाग के अनुसार, बारिश का यह दौर अगले 24 घंटों तक जारी रह सकता है।

गोला गोकर्णनाथ। रविवार शाम से मौसम बदलने के साथ सोमवार से हो रही बूंदाबांदी के चलते दिन और रात के तापमान में गिरावट आई है, जिससे ठंडक ने दस्तक

ठंड से गर्म कपड़ों में नजर आए बुजुर्ग।

दे दी है। अगले एक सप्ताह में सर्दी का असर तेज हो सकता है। सोमवार, मंगलवार को दिन भर सूर्य न निकलने से लोगों ने सुबह और देर शाम गर्म कपड़े पहनना शुरू कर दिए। सड़कों पर बाइक चालकों को जैकेट और स्वेटर पहने देखा गया। बाजारों में भी स्वेटर, जैकेट सहित अन्य गर्म कपड़ों की लोगों ने तैयारी शुरू कर दी है। चाय और फास्ट फूड की दुकानों में भी भीड़ दिखी।

भानपुर/भीरा। भानपुर क्षेत्र में तापमान में गिरावट और बारिश के कारण खेतों में कटी पड़ी धान की फसल पर संकट मंडरा रहा है। किसानों को भारी नुकसान होने की आशंका है। हल्की बूंदाबांदी से फसल गीली हो गई है, जिससे उसके खराब होने का डर सता रहा है। किसानों का कहना है कि पहले वे छुट्टा पशुओं से दिन-रात अपनी फसल की रखवाली करते हैं, और अब बारिश से भीगने के कारण उनकी चिंता और बढ़ गई है। यदि बारिश जारी रहती है, तो फसल पूरी तरह बर्बाद हो सकती है।

बारिश के कारण दोहरी मजदूरी देकर किसानों को धान सुखाना पड़ेगा

मूड़ा सवारान, अमृत विचार : मंगलवार को लोग गर्म कपड़ों में नजर आए। उधर, बारिश से खेतों में खड़ी और कटी पड़ी धान की फसल भीग गई। जिससे किसान परेशान हो उठे। कुछ किसान धान ट्राली में भरकर बाजारों में बेचने के लिए गए थे लेकिन तिरपाल न होने की वजह से उनके धान भीग गए। किसान अवधेश कुमार, महिपाल सिंह, राम प्रकाश, पुत्तू लाल, प्रेमचंद, दिलशाद अली, सज्जन सिंह, रेशम सिंह, जोरावर सिंह आदि ने बताया कि उनका धान भीग जाने से नमी आ गई है। अब दोहरी मजदूरी देकर धान को सुखाना पड़ेगा। वहीं खेतों में कटी पड़ी धान की फसल भीग गई। इससे धान के दानों में नमी के साथ दाने काले पड़ने और जमाव की अत्यधिक संभावना बढ़ गई है। जिससे नमी और खराब गुणवत्ता के कारण बिक्री में समस्या आएगी।

किसानों बोले- फसल भीगने से हुआ नुकसान

ब्लॉक बिजुआ क्षेत्र के किसान रामसागर ने बताया, हमने फसल काट ली थी और उसे सुखाने के लिए खेत में रखी थी, लेकिन रातभर हुई बारिश ने सारा अनाज भिगो दिया। अब उसे दोबारा सुखाने में कई दिन लगेंगे। इसी तरह किसान विश्नू दयाल, राज सिंह, गुड्डे और देवी दयाल ने बताया कि सबसे ज्यादा धान की फसल को नुकसान हुआ है। खेतों में कटी पड़ी धान की फसल भीग गई जिससे दाने काले पड़ने की संभावना बढ़ गई है। यदि बुधवार को तेज धूप न निकली तो नुकसान बढ़ जाएगा।

बौद्ध भिक्षु सम्मेलन में डॉ. भीमराव यशवंतराव का स्वागत

मुख्य अतिथि द बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इंडिया के राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष डॉ. भीमराव यशवंत राव आंबेडकर का स्वागत करते हुए। ● अमृत विचार

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

अमृत विचार : शहर के छाऊछ स्थित डॉ. भीमराव अंबेडकर भवन बौद्ध बिहार में चल रहे 10 दिवसीय विशाल बौद्ध भिक्षु प्रशिक्षण सम्मेलन में मुख्य अतिथि द बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इंडिया के राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष डॉ. भीमराव यशवंत राव आंबेडकर का भव्य स्वागत किया गया।

मुख्य अतिथि के आगमन पर समिति के पदाधिकारियों ने पुष्प वर्षा कर उनका अभिनंदन किया। बौद्ध बिहार पहुंचने पर उन्होंने तथागत गौतम बुद्ध और बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर के चित्र पर पुष्प अर्पित कर श्रद्धांजलि दी। इस दौरान राष्ट्रीय बौद्ध महासभा के तत्वावधान में आए बौद्ध प्रशिक्षुओं को डॉ. युवराज मौर्य ने प्रशिक्षण प्रमाणपत्र वितरित किए। कार्यक्रम में जिलाध्यक्ष शिवरतन गौतम, राजेश कुमार गौतम, राष्ट्रीय संरक्षिका महोपासिका मीराताई यश अंबेडकर, डॉ. हरीश रावलिया, सुभाष जौंजाले, श्रमणेर जयसेन बौद्ध, केपी सिंह हितैषी, जय सिंह सुमन, डॉ. श्याम बहादुर बौद्ध, डॉ. राजवीर सिंह बौद्ध, ःसतीश कुमार निगम, सुनीता गौतम, श्याम सुंदर बौद्ध, उमेश चंद नाहर, नीरज बौद्ध आदि मौजूद रहे।

भाषण प्रतियोगिता में कृष्णा प्रथम

संवाददाता, गोला गोकर्णनाथ

अमृत विचार : सीजीएन पीजी कॉलेज में भारत के लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल की जयंती पर प्री इवेंट श्रंखला में कराई गई भाषण प्रतियोगिता में कृष्णा शर्मा ने प्रथम स्थान प्राप्त किया।

महाविद्यालय में राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई प्रथम और इकाई द्वितीय द्वारा करायी गयी भाषण प्रतियोगिता में महाविद्यालय के प्राचार्य प्रो. पंकज सिंह के मार्गदर्शन में वरिष्ठ प्राध्यापक डॉ. विष्णु कुमार शुक्ल, डॉ. राकेश कुमार अग्रहरि, डॉ.अशोक कुमार, डॉ. देवानन्द निर्णायक मंडल की भूमिका में रहे।

प्रतियोगिता का संचालन डॉ. विवेक कुमार सिंह, डॉ. विश्वनाथ ने किया। निर्णायक मंडल ने भाषण प्रतियोगिता में कृष्णा शर्मा को प्रथम, शिव शंकर

गोला के सीजीएन पीजी कालेज की भाषण प्रतियोगिता में विद्यार्थी। ● अमृत विचार

● सरदार बल्लभभाई पटेल की 150वीं जयंती पर हुई प्रतियोगिता

को द्वितीय और वंश गुप्ता को तृतीय स्थान दिया।

महाविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. प्रमोद कुमार, डॉ. अरूण कुमार सिंह, डॉ. विकास चौरसिया, डॉ. राकेश अग्रहरि, डॉ. देवानन्द, डॉ. शैलेन्द्र, डॉ. सुनील गुप्ता, राष्ट्रीय सेवा योजना के कार्यक्रम अधिकारी डॉ. आदर्श पटेल एवं राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई के स्वयंसेवक एवं स्वयं सेविकाओं के साथ महाविद्यालय के छात्र/छात्राओं ने उत्साहपूर्वक इस इस भाषण प्रतियोगिता में अपनी भागीदारी सुनिश्चित की।

सेमरी पुरवा में बाघ ने सांड़ को बनाया निवाला

संवाददाता, पलिया कलां

अमृत विचारः पलिया से तीन किलोमीटर दूर गांव सेमरी पुरवा में मंगलवार की सुबह बाघ ने हमला कर एक सांड को मौत के घाट उतार दिया। इससे ग्रामीणों में भय और दहशत का माहौल है। सूचना पर पहुंचे वन रेंजर अंकित कुमार सिंह ने मौके का निरीक्षण किया। ग्रामीणों को सतर्क रहने की सलाह दी और घटनास्थल के निकट बाघ पकड़ने वाले दो पिंजड़े भी रखवाए हैं।

सुबह खेतों की ओर जाते समय कुछ लोगों ने बाघ को सांड का शिकार करते हुए देखा। लोगों के शोर मचाने पर बाघ गन्ने की ओर भाग गया, लेकिन तब तक सांड का बड़ा भाग बाघ चट कर चुका था और उसकी मौत हो चुकी थी। घटना की सूचना मिलते ही वन विभाग की टीम मौके पर पहुंची और निरीक्षण किया। रेंजर अंकित कुमार सिंह ने संभावना जताई है कि यह बाघ दुधवा टाइगर रिजर्व क्षेत्र से भटककर गांव के खेतों ओर आ गया है। उन्होंने ग्रामीणों को सतर्क रहने, रात के समय घरों से बाहर न निकलने और पशुओं को सुरक्षित बाड़ों में बांधने की सलाह दी है। उधर गांव के निकट बाघ की मौजूदगी की सूचना फैलते ही लोगों में भय और चिंता बढ़ गई है। नाराज कुछ लोगों ने वन विभाग के प्रति नारेबाजी कर आक्रोश भी व्यक्त किया है। उधर वन विभाग ने बाघ की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए आसपास के इलाकों में दो पिंजड़े लगवा कर कैमरा ट्रैप लगाए हैं। इसके अतिरिक्त गांव मकनपुर में विनोद गुप्ता के फार्म के निकट भी बाघ के पग चिन्ह मंगलवार की सुबह दिखाई देने से लोगों में दहशत है। पलिया वन विभाग की टीम ने पहुंचकर लोगों को सतर्क रहने की सलाह दी।

विशेष गहन पुनरीक्षण की दी जानकारी

संवाददाता, गोला गोकर्णनाथ

अमृत विचारः भारत निर्वाचन आयोग द्वारा विधानसभा की मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण की शुरुआत चार नवम्बर से होगी, जिसके तहत मतदाताओं को जागरूक करने के लिए बीएलओ तौहीद बेग ने एसआईआर से जुड़े महत्वपूर्ण बिंदुओं के बारे में मतदाताओं को पम्पलेट विपरित कर जागरूक किया।

अमीरनगर प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक तौहीद बेग ने बताया कि मतदाता को विशेष गहन पुनरीक्षण की जानकारी देने के लिये पंपलेट (एसआईआर) का कार्य चार

मतदाताओं को जागरूक करते बीएलओ।

वितरित किये गये हैं। वर्ष 2003 की मतदाता सूची के मतदाताओं की मैपिंग 2025 की मतदाता सूची से हो चुकी है। मतदाताओं को एबीसीडी चार कैटेगरी में विभाजित करके स्पेशल इंसेंटिव रिवीजन नवम्बर से शुरू किया जा रहा है। दस्तावेज के तौर पर ए कैटेगिरी के मतदाताओं को दो फोटो और 2003 की मतदाता सूची की छाया प्रति देनी होगी। बी कैटेगिरी के मतदाताओं को अपना स्वयं का दस्तावेज सी कैटेगिरी के मतदाताओं को अपना और माता पिता दोनों में से किसी एक का दस्तावेज साथ ही जिनका जन्म दो दिसम्बर 2004 के बाद हुआ है वह स्वयं और माता पिता दोनों के दस्तावेज देने होंगे। बीएलओ तौहीद बेग ने कहा कि विशेष गहन पुनरीक्षण पूरी तरह से मतदाता और मतदान के हित में सभी पात्र मतदाताओं को

गांव में युवक की करतूत से टूटी युवती की दूसरी शादी

कार्यालय संवाददाता, लखीमपुर खीरी

● अश्लील वीडियो बनाकर बदनाम करने दी धमकी, रिपोर्ट दर्ज

अमृत विचार : कोतवाली धौरहरा क्षेत्र की एक महिला ने गांव के ही युवक पर उसकी बेटी का अश्लील वीडियो बनाकर बदनाम करने, धमकी देने और बार-बार विवाह टूटवाने का गंभीर आरोप लगाया है। पुलिस ने आरोपी के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कर जांच शुरू कर दी है।

पीड़ित महिला ने बताया कि उसकी 22 साल की बेटी की शादी करीब चार वर्ष पहले तय हुई थी। शादी के कुछ समय बाद ही गांव का युवक जीतराम उनकी बेटी के पीछे पड़ गया। जीतराम ने उसकी बेटी का अश्लील वीडियो बना लिया और उसे ब्लैकमेल करना शुरू कर दिया। युवक ने झूठा प्रचार भी कर दिया कि युवती उससे प्यार करती है और उसका वीडियो उसके पास है। इसी अफवाह और दबाव के चलते युवती की पहली शादी टूट गई। परिवार ने किसी तरह बेटी की दूसरी शादी थाना शारदानगर क्षेत्र के एक गांव से तय की, लेकिन जीतराम वहां भी पहुंच गया। उसने युवती की होने वाली ससुराल के लोगों से झूठ फैलाकर उसे बदनाम करना शुरू कर दिया, जिससे उसकी दूसरी शादी भी टूटने की कगार पर आ गई है। विरोध करने पर आरोपी ने गाली-गलौज करते हुए जान से मारने की धमकी दी। पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज कर ली है।

बर्तनों के बंटवारे को लेकर किया हमला

संवाददाता, मझगईं

अमृत विचार : थाना क्षेत्र के गांव नौगवां में सोमवार शाम मामूली कहासुनी ने खूनी रूप ले लिया। बर्तनों और गैस सिलेंडर के बंटवारे को लेकर दो मजदूर साथियों में पहले गाली-गलौज हुई, फिर एक ने गुस्से में आकर गन्ना काटने वाली बगौड़ी से साथी पर ताबड़तोड़ वार कर दिए। इससे वह लहूलुहान हो गया और मौके पर ही गिर पड़ा। पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज कर घायल को अस्पताल में भर्ती कराया है।

थाना मझगई क्षेत्र के नौगवां निवासी मुलायम ने बताया कि उसका छोटा भाई बनारसी और गांव का ही तीरथराम दोनों कुछ महीने पहले मजदूरी करने

खून से लथपथ पड़ा घायल बनारसी।

देहरादून गए थे। काम खत्म कर दोनों घर लौट आए। सोमवार शाम बनारसी ने तीरथराम से पूछा कि वो बर्तन और गैस सिलेंडर कहां हैं जो दोनों ने मिलकर खरीदे थे। इसी बात पर तीरथराम आग-बबूला हो गया और गाली-गलौज करते हुए अचानक बगौड़ी से वार कर दिया। लगातार वार से बनारसी लहूलुहान होकर वहीं गिर पड़ा। शोर सुनकर परिजन और ग्रामीण मौके पर पहुंचे और घायल को आनन-फानन में थाने लेकर पहुंचे।

पुलिस ने घायल बनारसी को तुरंत अस्पताल भेजा, जहां उसकी हालत गंभीर बताई जा रही है। घायल के भाई मुलायम ने आरोपी के खिलाफ पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की है। पुलिस आरोपी तीरथराम की तलाश कर रही है। घटना के बाद से गांव में तनाव का माहौल है। प्रभारी निरीक्षक राजू राव ने बताया कि आरोपी की तलाश में संभावित स्थानों पर दबिशें दी जा रही हैं। जल्द ही उसे गिरफ्तार कर लिया जाएगा। पुलिस लगातार गांव पर नजर बनाए हुए है।

युवती समेत दो ने खाया जहरीला पदार्थ, हालत गंभीर

तिलहर, अमृत विचारः नगर के दो अलग-अलग मोहल्लों में एक युवती सहित दो लोगों ने किसी बात को लेकर जहरीला पदार्थ खा लिया। दोनों की हालत बिगड़ने पर परिजन सीएचसी लेकर पहुंचे, जहां से डॉक्टरों ने प्राथमिक उपचार के बाद राजकीय मेडिकल कॉलेज रेफर कर दिया। नगर के मोहल्ला बहादुरगंज में सोमवार रात करीब नौ बजे एक किशोरी ने किसी बात को लेकर घर पर ही जहरीला पदार्थ खा लिया। कुछ ही देर में उसकी हालत बिगड़ने लगी। परिजनों ने आनन-फानन में उसे सीएचसी लेकर पहुंचे, जहां डॉक्टरों ने प्राथमिक उपचार के बाद गंभीर स्थिति को देखते हुए राजकीय मेडिकल कॉलेज रेफर कर दिया मोहल्ला निजामगंज निवासी शिवम ने मंगलवार सुबह किसी बात को लेकर जहरीला पदार्थ खा लिया। उसकी हालत भी अचानक बिगड़ गई। उनका उपचार चल रहा है।

अमृत विचार एक सम्पूर्ण अखबार

क्लासीफाइड

विज्ञापन हेतु सम्पर्क करें

9756905552, 8445507002

सूचना

मैंने अपने पुत्र कन्हैया उर्फ अवधेश पुत्र श्याम सिंह को चाल चलन ठीक न होने, परिवार वालों से लड़ाई, झगड़ा करने के कारण अपनी चल अचल संपत्ति से बेदखल कर दिया है। भविष्य में किसी भी कृत्य का वह स्वयं जिम्मेदार होगा। **सरोजनी देवी पत्नी श्याम सिंह, श्याम सिंह पुत्र संकटा सिंह निवासी मोहल्ला ऊंची भूड़ गोला गोकर्णनाथ, जिला- खीरी।**

सूचना

सर्वसाधारण को सूचित करना है कि मेरा पुत्र प्रदीप कुमार पुत्र भगवान दास व पुत्रवधू श्रीमती संगीता पत्नी प्रदीप कुमार पुत्री धर्मपाल निवासी ग्राम डहरपुर खुर्द परगना सलेमपुर थाना व तहसील दातागंज जिला बदायूं मेरी व मेरी परिवार की बात नहीं मानते हैं तथा गलत आचरण में पड़ गये हैं। उपरोक्त दोनों लोगों द्वारा किसी भी कृत्य व लेन देन के लिए मैं व मेरा परिवार जिम्मेदार नहीं होगा इसी लिए मैने उपरोक्त दोनों लोगों से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है। **भगवान दास पुत्र रामकिशुन निवासी ग्राम डहरपुर खुर्द परगना सलेमपुर तहसील व थाना दातागंज जिला बदायूं**

सूचना

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि मेरे हाईस्कूल व इण्टरमीडिएट के अंक पत्रों में माता का नाम भूलवश प्रिया अंकित हो गया है जोकि गलत है जबकि उनका सही नाम बेबी है। ये दोनों नाम मेरी माता के ही है। भविष्य में माता का नाम बेबी ही पढ़ा व समझा जाये। **ध्रुव सिंह पुत्र श्री अर्जुन सिंह निवासी लोटनपुर बदायूँ।**

सम्बन्ध विच्छेद सूचना

मैंने अपने पुत्र आकाश शर्मा व पुत्रवधू छोटी देवी पत्नी आकाश शर्मा को उनके गलत आचरण एवं दुर्व्यवहार के कारण उन्हें अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति व सामाजिक रिश्तों से बेदखल कर दिया है। भविष्य में उसके द्वारा किये गये किसी भी कृत्य का मुझसे किसी भी प्रकार का कोई सरोकार नहीं होगा। **गोविन्द शर्मा पुत्र सियाराम शर्मा निवासी- मोहल्ला रंगरेजान-2, पलिया कलां, खीरी।**

सूचना

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि मैंने अपने पुत्र अर्पित सक्सेना व पुत्रवधु बरखा अग्रवाल को गलत आचरण एवं दुर्व्यवहार के कारण उन्हें अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति से बेदखल कर दिया है। भविष्य में उनके द्वारा किये गये किसी भी कृत्य का मुझसे कोई वास्ता व सरोकार नहीं होगा। **राजेश बाबू सक्सेना पुत्र स्व. बी.डी. सक्सेना निवासी 122-डी/1, राजीव कुंज कालोनी, आई वी.आर.आई. रोड, थाना प्रेमनगर जिला बरेली।**

बस की टक्कर से युवक का पैर कटा

संवाददाता, निघासन

● अनियंत्रित बस मूंगफली ठेले में घुसी, बाल-बाल बचा विक्रेता

अमृत विचार : कस्बे में मंगलवार को बड़ा हादसा हो गया। पीछे से बस ने एक बाइक सवार को टक्कर मार दी। हादसे में उसकी बाइक बस के नीचे आ गई। हादसे में बाइक सवार का एक पैर कट गया। वहीं उसका हाथ भी टूट गया। अनियंत्रित बस मूंगफली के ठेले में जा घुसी। गनीमत रही मूंगफली विक्रेता बाल-बाल बच गया। मौके पर पहुंचे व्यापार मंडल अध्यक्ष ने घायल को अस्पताल में भर्ती कराया है, जहां से हालत गंभीर होने पर डॉक्टर ने उसे जिला अस्पताल रेफर कर दिया।

हादसा हनुमान डेयरी के पास हुआ। थाना निघासन क्षेत्र के गांव सहतेपुरवा निवासी सियाराम ने बताया कि वह काम निपटाने के बाद अपनी बाइक से घर वापस जा रहा था। कस्बे के सिंगाही रोड

बस के अगले हिस्से में फंसी बाइक।

पर हनुमान डेयरी के पास पीछे से आ रही प्राइवेट बस ने उसे जोरदार टक्कर मार दी। वह बस के पहिया के नीचे आ गया। उसका बायां पैर कट गया और दाहिना हाथ टूट गया। बाइक भी बस के नीचे फंस गई। इसके बाद अनियंत्रित होकर पास में लगे एक मूंगफली के ठेले में जा भिड़ी। गनीमत रही कि मूंगफली विक्रेता हनीफ बाल-बाल बच गया। हादसे के बाद मौके पर अफरा-तफरी मच गई। तमाम लोगों की भीड़ मौके पर जुट गई। इसी बीच उद्योग व्यापार मंडल के अध्यक्ष प्रदीप गुप्ता भी मौके पर पहुंच गए।

उन्होंने घायल को आनन-फानन में अस्पताल पहुंचाया, जहां से हालत गंभीर होने पर डॉक्टर ने घायल को जिला अस्पताल रेफर कर दिया है। बताते हैं कि बस का चालक शराब के नशे में था। लोगों ने बमुश्किल से बाइक को बस के नीचे से निकाला। मौके पर पहुंची पुलिस ने बाइक को कब्जे में लिया है। बताते हैं कि नगर पंचायत से बनाए गए नाले की मिट्टी भी हादसे का सबब बनी हुई है।

महायज्ञ में वैदिक मंत्रोच्चार के साथ डाली आहुतियां

केशवापुर, अमृत विचारः केशवापुर के निकटवर्ती गांव खेतौसा में श्री विष्णु महायज्ञ में रासलीला पार्टी ने मंगलवार दोपहर रामलीला प्रसंग से मारीच ताड़का से महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के लिए मायावी मारीच को बिन फर का बाण मारा जिससे मायावी असुर मारीच साथ योजन दूर समुद्र पार असहाय होकर गिरा।

मौजूद दर्शकों ने प्रभु श्रीराम की जय जयकार की। यज्ञाचार्य पंडित संदीप पांडे के वैदिक मंडल ने वैदिक यजमानों रामनरेश वर्मा, सुरेश विश्वकर्मा, रामदास वर्मा, कमलेश वर्मा, मनोज विश्वकर्मा, शिवसागर लाल वर्मा, जवाहरलाल वर्मा से पत्नी सहित देवताओं का आह्वान कर हवन में आहुतियां डलवायीं। आयोजकों ने बताया कि बुधवार को हवन पूजन किया जायेगा। रासलीला पार्टी द्वारा दिन में सीता स्वयंवर का मंचन होगा।

बात करने से मना किया तो कार्यालय में की तोड़फोड़

संवाददाता, लखीमपुर खीरी

● गाली-गलौज और जान से मारने की दी धमकी, दी तहरीर

अमृत विचार: शहर के ममता होटल कैपस में संचालित जायसवाल एसोसिएट्स के प्रबंधक ने धौरहरा निवासी एक युवक पर साथियों के साथ मिलकर कार्यालय में तोड़फोड़ करने, जान से मार देने की धमकी देने सहित कई गंभीर आरोप लगाए हैं। पीड़ित ने सदर कोतवाली पुलिस को तहरीर दी है।

कानपुर के यशोदा नगर निवासी अजीत कुमार जायसवाल ने पुलिस को तहरीर देकर बताया कि वह मेसर्स जायसवाल एसोसिएट्स का प्रबंधक है और उसका कार्यालय और आवास शहर के ममता होटल के कैंपस में हैं। तहरीर के अनुसार धौरहरा के गांव बजहा निवासी मनोज जायसवाल की पत्नी के नाम कंपोजिट शराब की दुकान ईसानगर में है। इससे उनकी मनोज जायसवाल से जान पहचान थी। सोमवार की रात करीब 11 बजे मनोज जायसवाल उसके कार्यालय में आए। अपने कार्य में व्यस्त होने के कारण उन्होंने मनोज जायसवाल से मिलने से इंकार कर दिया और सुबह आने के लिए कहा। कुछ देर बाद मनोज जायसवाल अपने तीन अन्य साथियों के साथ आया और गाली गलौज करने लगा। आरोप है कि विरोध करने पर हाथापाई शुरू कर दी। कार्यालय में रखा कैश छीनने का प्रयास किया। शोर मचाने पर कुछ कर्मचारी आए। तब आरोपी जान से मार देने की धमकी देकर भाग निकले। पीड़ित ने आरोपियों के खिलाफ तहरीर दी है।

सूचना

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि मैंने अपने पुत्र मो. इमरान को गलत आचरण एवं दुर्व्यवहार के कारण अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति से बेदखल कर दिया है। भविष्य में उसके द्वारा किये गये किसी भी कृत्य का मुझसे कोई वास्ता व सरोकार नहीं होगा। **शाहिदा पत्नी शाबू हसन निवासी 263 सरदार नगर घाट बरेली तहसील आंवला जिला बरेली।**

आवश्यकता है

अनुभवी व्यक्तियों की

- लाइब्रेरियन (अनुभवी)
- लैब टेक्नीशियन (अनुभवी)
- ओ टी टेक्निशियन (फीमेल)
- नर्सिंग स्टाफ (मेल)
- कैंटीन (कुक)
- सफाईकर्मी/स्वीपर

वेतनः- योग्यतानुसार

सम्पर्क करें:-

रोहिलखंड आयुर्वेदिक मेडिकल कॉलेज एवं हॉस्पिटल

सेक्टर-7, रामगंगा नगर योजना डोहरा रोड बरेली

मोः- 8077808309, 9837357497

GAUTAM BUDDH COLLEGE OF PHARMACY

ग्राम फिरोजपुर,बल्लिया, आंवला, बरेली (उ.प्र.)

आवश्यकता (VACANCY NOTICE)

पदनाम : प्राचार्य (01 पद)

योग्यता एवं वेतनमान:

फार्मेसी काउंसिल ऑफ इंडिया (PCI), नई दिल्ली के मानकों के अनुसार।

इच्छुक अभ्यर्थी अपना बायोडाटा (CV) 07 दिनों के भीतर निम्न ईमेल पर भेजें

gbcollegeofpharmacy@gmail.com

संपर्क करें : +91 9634543118

वैधानिक सूचना :- समाचार पत्र में प्रकाशित किसी भी विज्ञापन जैसे टावर सम्बन्धी, नौकरी सम्बन्धी, ऋण सम्बन्धी या अन्य किसी भी प्रकार के विज्ञापन में पाठकों को सावधान किया जाता है। विज्ञापनदाता द्वारा किये गये दावे या उल्लेख, समर्थन की पुष्टि समाचार पत्र नहीं करता है।

अमृत विचार

बरेली, बुधवार, 29 अक्टूबर 2025

चक्रवात मोंथा को लेकर अलर्ट जारी

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- लखनऊ सहित कई जिलों में देर रात से सुबह तक हुई हल्की बारिश, तापमान गिरा

अमृत विचार : चक्रवाती तूफान 'मोंथा' का असर यूपी के खासकर पूर्वांचल और लेकर बुंदेलखंड के जिलों में बुधवार से और तेज हो सकता है। मौसम विभाग के अनुसार, मंगलवार से अगले 48 घंटे तक लखनऊ समेत कई जिलों में हल्की से मध्यम बारिश और तेज हवाओं की संभावना जताई है। राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने सभी जिलाधिकारियों को बिजली और पेड़ों के गिरने जैसी संभावनाओं के मद्देनजर राहत दलों को तैयार रखने के निर्देश दिए हैं।

भारतीय मौसम विभाग लखनऊ केंद्र के अनुसार, वाराणसी, मिर्जापुर, सोनभद्र, चंदौली, गाजीपुर, भदोही, जौनपुर और प्रयागराज में अगले दो दिन तक गरज-चमक के साथ बारिश हो सकती है। कुछ इलाकों में हवा की रफ्तार 40 से 50 किलोमीटर प्रति घंटा तक पहुंच सकती है। राजधानी लखनऊ, कानपुर, बाराबंकी और रायबरेली में भी बुधवार देर रात तक हल्की बारिश या बूंदाबांदी की संभावना जताई गई है। मौसम विभाग ने लोगों को खुले में काम न करने, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को अनप्लग करने और निचले इलाकों से दूर रहने की सलाह दी है। मोंथा के कारण राज्य में हवा की दिशा बदलने से अधिकतम तापमान में 2 से 3 डिग्री की कमी आई हैं। रातें ठंडी होंगी और दिन के समय उमस बढ़ सकती है।

किसानों के लिए सलाह

- धान की कटाई और गहाई का काम फिलहाल रोकें।
- खुले में रखा अनाज, भूसा और उपकरण सुरक्षित करें।
- बिजली गिरने की संभावना को देखते हुए खेतों में मोबाइल का उपयोग न करें।

मतदाता सूची पुनरीक्षण की रफ्तार पर टिकी निगाहें

प्रदेश में पंचायत चुनाव समय पर कराना चुनौती, चुनाव अगले वर्ष अप्रैल-मई में प्रस्तावित

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

अमृत विचार : प्रदेश में पंचायत चुनाव समय पर कराना राज्य चुनाव आयोग के लिए बड़ी परीक्षा बनता जा रहा है। मतदाता सूची के विशेष सघन पुनरीक्षण अभियान की रफ्तार पर निगाहें टिकी हैं। राज्य में अप्रैल–मई 2026 में पंचायत चुनाव प्रस्तावित हैं। जबकि मतदाता सूची का संशोधन और डिजिटलीकरण का कार्य अभी पूरी तरह पूरा नहीं हुआ है। उधर, परिसीमन को लेकर पंचायती राज विभाग तेजी से कार्य कर रहा है, ताकि कार्यकाल समाप्त होने के छह माह के भीतर

चुनाव हो जाए, जिससे भारत सरकार की ग्रांट बंद होने की नौबत न आए।

जानकारी के अनुसार, निर्वाचन आयोग द्वारा इस बार लोकसभा, विधानसभा और पंचायत चुनावों की मतदाता सूचियां अलग-अलग रखी गई हैं। लेकिन सूचियों को अपडेट कराने की जिम्मेदारी निचले स्तर के वही कर्मचारी निभा रहे हैं, जो अन्य चुनावी कार्यों में भी तैनात रहते हैं। इससे कार्यभार बढ़ने के कारण पंचायत चुनाव की तैयारी में देरी की आशंका जताई जा रही है। राज्य में मतदाता सूचियों को अद्यतन करने के लिए विशेष सर्वे का काम पूरा कर लिया गया है। अब सभी उप जिलाधिकारी को निर्देश दिए गए हैं कि वे संशोधित सूची को ऑनलाइन फीड कराने का कार्य प्राथमिकता से पूरा करें। अधिकारियों के अनुसार, सूची अपडेट का कार्य दिसंबर के पहले सप्ताह तक पूरा कर लिया जाएगा, ताकि ड्राफ्ट सूची समय पर जारी की जा सके।

वोटर लिस्ट संशोधन का दूसरा चरण शुरू

चुनाव आयोग ने मंगलवार से वोटर लिस्ट रिवीजन के दूसरे चरण की शुरुआत कर दी है। इस बार यूपी समेत 12 राज्यों में मतदाता सूची की फील्ड जांच की जा रही है। इन राज्यों में पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, ओडिशा, बिहार, झारखंड, हरियाणा, पंजाब, छत्तीसगढ़ और गुजरात भी शामिल हैं। आयोग के कार्यक्रम के अनुसार, 9 दिसंबर को ड्राफ्ट वोटर लिस्ट जारी होगी और 7 फरवरी 2026 को फाइनल सूची प्रकाशित की जाएगी।

परिसीमन के बाद वार्ड और पंचायतें

परिसीम के बाद जिला पंचायत सदस्य वार्ड जहां पहले 3050 थे, अब 30 घटकर 3020 हो गए हैं। इसी तरह कुल 75,844 क्षेत्र पंचायत सदस्य वार्ड में से 830 घट गए हैं, अब इनकी संख्या 75,014 हो गई है। जबकि वर्ष 2021 के अनुसार 7,32,643 ग्राम पंचायत सदस्य वार्ड में से 4600 से अधिक इसबार कम होंगे।

न्यूज ब्रीफ

विवादित बयान पर कार्रवाई की मांग

अमृत विचार, लखनऊ : सिद्धार्थनगर के डुमरियागंज से पूर्व भाजपा विधायक

राघवेंद्र प्रताप सिंह के विवादित बयान 'मुस्लिम लड़की लाओ, शादी करो, नौकरी पाओ' पर बसपा सुप्रीमो मायावती ने कड़ी प्रतिक्रिया दी है। उन्होंने इस मामले में सख्त कार्रवाई करने की मांग की है। बसपा सुप्रीमो ने मंगलवार को जारी अपने बयान में कहा कि ऐसे आपराधिक, अराजक व असामाजिक तत्व सभ्य व संवैधानिक सरकार के लिए खुली चुनौती और खतरा हैं।

आईएएस आमोद कुमार मूल कैडर यूपी लौटेंगे

अमृत विचार, लखनऊ : वरिष्ठ आईएएस अधिकारी अमोद कुमार (1995 बैच) को केंद्र सरकार से प्रतिनियुक्ति अवधि पूर्ण होने पर मूल कैडर उत्तर प्रदेश में वापस भेजा गया है। इस संबंध में केंद्र सरकार ने औपचारिक आदेश जारी कर दिए हैं। आमोद कुमार वर्तमान में केंद्र सरकार में संयुक्त सचिव स्तर पर पदस्थ थे। अब उनकी तैनाती प्रदेश सरकार द्वारा जल्द निर्धारित की जाएगी।

जनगणना 2027 होगी पूरी तरह डिजिटल

अमृत विचार, लखनऊ : मुख्य सचिव एसपी गोयल की अध्यक्षता में मंगलवार को भारत की जनगणना 2027 के कार्यान्वयन एवं संचालन हेतु गठित राज्य स्तरीय जनगणना समन्वय समिति की पहली बैठक आयोजित हुई। बैठक में मुख्य सचिव ने जनगणना 2027 होगी पूरी तरह डिजिटल होने की जानकारी देते हुए सभी विभागों को जनगणना कार्य को समन्वित ढंग से पूरा करने के निर्देश दिए। निदेशक, जनगणना कार्य शीतल वर्मा ने बताया कि 10 से 30 नवंबर 2025 तक राज्य की अनूपशहर और मिहीपुरवा तहसीलों तथा प्रयागराज नगर निगम के सात वार्डों में जनगणना प्री-टेस्ट किया जाएगा।

गंगा महोत्सव में नामचीन कलाकार देंगे प्रस्तुति

अमृत विचार, लखनऊ : गंगा महोत्सव-2025 का आयोजन 1 से 4 नवंबर तक काशी में किया जाएगा, जिसमें देशभर के नामचीन कलाकार अपनी प्रस्तुति देंगे। देव दीपावली से पहले काशी गंगा महोत्सव में हंसराज रघुवंशी भक्ति गीतों का जलवा बिखेरेंगे। वहीं पद्मश्री मालिनी अवस्थी उत्तर भारत की लोक परंपराओं को अपने गायन से जीवंत करेंगी और पद्मश्री गीता चन्द्रन भरतनाट्यम नृत्य से भारतीय नृत्य परंपरा की गरिमा दिखाएंगी। राजघाट और नामो घाट पर आयोजित यह महोत्सव संगीत, नृत्य और लोक कलाओं का अद्भुत संगम बनेगा।

सीतापुर के डीएम होंगे राजागणपति

प्रदेश में बड़ा प्रशासनिक फेरबदल, कई मंडलायुक्त और जिलाधिकारी बदले गए

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- मयूर माहेश्वरी को प्रबंध निदेशक राज्य विद्युत उत्पादन निगम तथा पावर ट्रांसमिशन कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाया गया

अमृत विचार : प्रदेश सरकार ने मंगलवार को प्रशासनिक महकमे में बड़ा फेरबदल किया है। मयूर माहेश्वरी को सीईओ यूपीएसआईडीए से प्रबंध निदेशक राज्य विद्युत उत्पादन निगम तथा पावर ट्रांसमिशन कॉरपोरेशन लिमिटेड किया गया है। विजय किरण आनंद को सचिव अवस्थापना व औद्योगिक विकास के साथ सीईओ यूपीएसआईडीए, लीडा एवं एनआरआई सेल का अतिरिक्त प्रभार मिला है।

राहुल पांडेय को डीएम हाथरस से विशेष सचिव राज्य कर विभाग, अतुल वत्स को उपाध्यक्ष गाजियाबाद विकास प्राधिकरण से डीएम हाथरस बनाया गया है। अमनदीप डुली को डीएम ललितपुर से अपर आयुक्त मनरेगा, मधुसूदन हुल्गी को डीएम कौशांबी से विशेष सचिव मुख्यमंत्री कार्यालय, अमित पाल को उपाध्यक्ष प्रयागराज विकास प्राधिकरण से डीएम कौशांबी, पवन अग्रवाल को डीएम बलरामपुर से विशेष सचिव गृह विभाग और विपिन कुमार जैन को विशेष सचिव मुख्यमंत्री कार्यालय से डीएम बलरामपुर किया गया है।

राजागणपति आर. को डीएम सिद्धार्थनगर से डीएम सीतापुर, जबकि अभिषेक आनंद को डीएम सीतापुर से विशेष सचिव आबकारी विभाग किया गया है। कृतिका ज्योत्सना को विशेष सचिव राज्य कर से डीएम बस्ती और रवीश गुप्ता को डीएम बस्ती से प्रबंध निदेशक पश्चिमांचल विद्युत वितरण निगम मेरठ बनाया गया है। ईशा दुहन को पश्चिमांचल विद्युत से प्रबंध निदेशक यूपी सहकारी चीनी मिल्स संघ लिमिटेड एवं कुमार विनीत को वहां से विशेष सचिव युवा कल्याण व खेल विभाग किया गया है। शिवशरणप्पा जी.एन. को डीएम चित्रकूट से डीएम सिद्धार्थनगर, पुलकित गर्ग को उपाध्यक्ष वाराणसी विकास प्राधिकरण से डीएम चित्रकूट, अजय कुमार द्विवेदी को डीएम श्रावस्ती से डीएम रामपुर और जोगिंदर सिंह को डीएम रामपुर से विशेष सचिव नमामि गंगे व ग्रामीण जलापूर्ति विभाग बनाया गया है। अश्विनी कुमार पांडेय को उपाध्यक्ष अयोध्या विकास प्राधिकरण से डीएम श्रावस्ती एवं सत्य प्रकाश को नगर आयुक्त झांसी से डीएम ललितपुर किया गया है। हिमांशु नागपाल को सीडीओ वाराणसी से नगर आयुक्त वाराणसी, अक्षत वर्मा को नगर आयुक्त वाराणसी से विशेष सचिव नियोजन, ऋषि राज को नगर आयुक्त फिरोजाबाद से उपाध्यक्ष प्रयागराज विकास प्राधिकरण, गुंजन द्विवेदी को सीडीओ कुशीनगर से नगर आयुक्त फिरोजाबाद, सुवंदिता श्रीवास्तव को एडीएम (वि/रा) वाराणसी से सीडीओ कुशीनगर बनाया गया है। नंद किशोर कलाल को सीडीओ रामपुर से उपाध्यक्ष गाजियाबाद विकास प्राधिकरण, महेन्द्र कुमार सिंह को एडीएम (वि/रा) अयोध्या से सीडीओ रामपुर, पूर्ण वोहरा को सीडीओ बिजनौर से उपाध्यक्ष वाराणसी विकास प्राधिकरण, रणविजय सिंह को एडीएम (प्रशासन) गाजियाबाद से सीडीओ बिजनौर तथा अनुराज जैन को सीडीओ महाराजगंज से उपाध्यक्ष अयोध्या विकास प्राधिकरण किया गया है। गुलाब चंद्र को एडीएम (प्रशासन) मुरादाबाद से सीडीओ महाराजगंज, सूरज पटेल को सीडीओ अमेठी से मुख्य कार्यपालक अधिकारी, ब्रज तीर्थ विकास परिषद और सचिन कुमार सिंह को संयुक्त निदेशक मंडी परिषद लखनऊ से सीडीओ अमेठी किया गया है। देवेन्द्र कुमार सिंह कुशवाहा को विशेष सचिव आबकारी से विशेष सचिव रेशम विभाग तथा सुआकांक्षा राणा को विशेष कार्याधिकारी कुम्भ मेला प्राधिकरण से नगर आयुक्त झांसी बनाया गया है।

57 पीसीएस अफसरों का स्थायीकरण

अमृत विचार, लखनऊ : प्रदेश सरकार ने प्रदेश के 57 प्रांतीय सिविल सेवा (पीसीएस) अधिकारियों के स्थायीकरण का आदेश जारी कर दिया है। नियुक्ति विभाग की विशेष सचिव आईएएस अन्नपूर्णा गर्ग द्वारा यह आदेश जारी किया गया। यह आदेश उन अधिकारियों के लिए राहत लेकर आया है जो अब तक प्रोबेशन अवधि पर कार्यरत थे। जानकारी के अनुसार, स्थायीकरण की यह सूची वर्ष 2020 और 2022 बैच के उन अधिकारियों की है, जो तहसीलदार से पदोन्नत होकर उप जिलाधिकारी (एसडीएम) बने हैं। इन अधिकारियों को निर्धारित सेवा अवधि पूर्ण करने के बाद अब स्थायी रूप से पुष्टि दे दी गई है। आदेश के तहत संबंधित अधिकारियों की सेवा–स्थायीकरण तिथियां 9 से 21 सितंबर 2024 के बीच की हैं, जो उनकी नियुक्ति तिथियों के अनुरूप तय की गई हैं।

स्थायीकरण सूची में जिन जिलों के अधिकारी शामिल हैं, उनमें लखीमपुर खीरी, गाजीपुर, इटावा, बिजनौर, बदायूं, बरेली, प्रयागराज, उन्नाव, मुरादाबाद, कानपुर देहात, झांसी, फर्रुखाबाद, सहारनपुर, मेरठ, गाजियाबाद, वाराणसी, रामपुर, जौनपुर, सीतापुर, बलरामपुर, हापुड़, ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण और नगर निगम गाजियाबाद जैसे प्रमुख जिले शामिल हैं।

लखनऊ के यहियागंज गुरुद्वारा में गुरुचरण (जोड़े साहिब) यात्रा के स्वागत कार्यक्रम के दौरान मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ को सम्मानित करते सिख समुदाय के लोग, साथ में केंद्रीय पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्री हरदीप सिंह पुरी।

गुरु परंपरा ने भारत को दिया त्याग और बलिदान का संदेश : योगी

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- लखनऊ में मुख्यमंत्री ने किया चरण सुहावे गुरु चरण (जोड़े साहिब) यात्रा का स्वागत

अमृत विचार : मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने सोमवार को यहियागंज गुरुद्वारे में पहुंचकर सिख आस्था और राष्ट्रप्रेम की अद्भुत मिसाल 'चरण सुहावे गुरु चरण (जोड़े साहिब) यात्रा' का स्वागत किया। इस दौरान कहा कि गुरु परंपरा ने भारत को केवल आस्था नहीं, बल्कि त्याग, सेवा और बलिदान का आदर्श दिया है। उन्होंने कहा कि यह यात्रा भारत की संस्कृति, साहस और राष्ट्रीय एकता की भावना को नई ऊंचाई देने वाली है।

मुख्यमंत्री योगी ने कहा कि हमारी परंपरा कहती है कि 'जिथे जाए बहे मेरा सतगुरु, सो थान सुहावा राम राजे।' जहां भी गुरु महाराज के चरण पड़ते हैं, वह स्थान रामराज्य की तरह पवित्र बन जाता है।' उन्होंने कहा कि सिख गुरुओं ने अपनी आस्था और बलिदान से देश की आत्मा को जागृत किया। मुख्यमंत्री ने कहा कि यहियागंज गुरुद्वारा गुरु तेग बहादुर जी और गुरु गोविंद सिंह जी की स्मृतियों से जुड़ा है और यह स्थल राष्ट्रीय एकता और साझा आस्था का प्रतीक है। यह यात्रा गुरु तेग बहादुर जी महाराज के 350वें शहीदी दिवस के उपलक्ष्य में प्रारंभ हुई है।

दिल्ली से प्रारंभ होकर यह यात्रा पूरे देश में गुरु परंपरा के प्रति सम्मान और गौरव का भाव जगाती जा रही है। कार्यक्रम में मुख्यमंत्री ने गुरुवाणी सुनी और यात्रा दल के सदस्यों को पटुका पहनाकर सम्मानित किया। गुरुद्वारा कमेटी की ओर से उन्हें अंगवस्त्र और स्मृति चिन्ह भेंट किया गया। इस अवसर पर केंद्रीय मंत्री हरदीप सिंह पुरी, कैबिनेट मंत्री सुरेश खन्ना, राज्यमंत्री बलदेव सिंह औलख, अल्पसंख्यक आयोग सदस्य सरदार परबिंदर सिंह सहित गुरुद्वारा कमेटी के पदाधिकारी, जनप्रतिनिधि और श्रद्धालु बड़ी संख्या में मौजूद रहे।

244 केंद्रों पर होगी ऑपरेटर भर्ती परीक्षा

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- 1 और 2 नवंबर को ऑफलाइन होगी परीक्षा

अमृत विचार : उत्तर प्रदेश पुलिस में कंप्यूटर ऑपरेटर और लिपिक संवर्ग के पदों पर भर्ती के लिए 1 और 2 नवंबर को ऑफलाइन परीक्षा होगी। कंप्यूटर ऑपरेटर के लिए 244 और लिपिक संवर्ग के लिए 186 परीक्षा केंद्र बनाए गए हैं। परीक्षा में सुरक्षा के कड़े इंतजाम किए गए हैं और एसटीएफ की नजर साल्वर गिरोह पर रहेगी। शासन ने सुरक्षा और यातायात प्रबंधन के निर्देश दिए हैं।

उप्र पुलिस में कंप्यूटर आपरेटर तथा लिपिक संवर्ग में उपनिरीक्षक (गोपनीय), सहायक उपनिरीक्षक (लिपिक) व सहायक उपनिरीक्षक (लेखा) के पदों पर भर्ती के लिए एक व दो नवंबर को आफलाइन लिखित परीक्षा (ओएमआर आधारित) कड़े सुरक्षा घेरे में होगी। एक नवंबर को 10 जिलों में कंप्यूटर आपरेटर की लिखित परीक्षा 244 केंद्रों पर होगी। इनमें सर्वाधिक 47 परीक्षा केंद्र लखनऊ में होंगे। जबकि दो नवंबर को लिपिक संवर्ग में भर्ती के लिए लिखित परीक्षा 10 जिलों में 186 परीक्षा केंद्रों पर होगी। इस परीक्षा के भी सर्वाधिक 35 केंद्र लखनऊ में होंगे। परीक्षा केंद्रों पर दोहरी चेकिंग की व्यवस्था होगी।

कंप्यूटर आपरेटर की लिखित परीक्षा के लिए आगरा में 13, बरेली में 15, गोरखपुर में 23, झांसी में 11, कानपुर नगर में 29, लखनऊ में 47, मेरठ में 26, मुरादाबाद में 26, प्रयागराज में 20 व वाराणसी में 34 परीक्षा केंद्र बनाए गए हैं।

अब 51 हजार रुपये मिलेगा शादी अनुदान

अमृत विचार, लखनऊ : समाज कल्याण विभाग शादी अनुदान योजना का दायरा बढ़ाने जा रहा है, जिसके तहत अब तीन लाख रुपये तक की वार्षिक आय वाले परिवारों की बेटियों को भी लाभ मिलेगा। अनुदान राशि को 20 हजार से बढ़ाकर 51 हजार रुपये करने का प्रस्ताव है। पहले आय सीमा ग्रामीण क्षेत्र के लिए 46,080 रुपये और शहरी क्षेत्र के लिए 56,460 रुपये थी। बजट की कमी के कारण यह योजना पहले ठप पड़ी थी। वर्तमान वित्तीय वर्ष में सरकार ने योजना को फिर से संचालित किया है, परंतु आय सीमा का दायरा सीमित होने के कारण इस योजना में सीमित आवेदन ही आ रहे हैं। दूसरी तरफ मुख्यमंत्री सामूहिक विवाह योजना की आय सीमा को पिछले दिनों दो लाख से बढ़ाकर तीन लाख रुपये किया गया है और अनुदान राशि एक लाख रुपये की गई है, जिसमें से 60 हजार रुपये सीधे दुल्हन के खाते में भेजे जाते हैं। इससे भी शादी अनुदान योजना में आवेदन प्रभावित हुए हैं।

27 पीसीएस अधिकारी किए गए इधर से उधर

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- यूपी में आईएएस के बाद बड़े पैमाने पर बदले गए पीसीएस अधिकारी

अमृत विचार : यूपी में आईएएस के बाद अब बड़े पैमाने पर पीसीएस अधिकारियों के तबादले कर दिए गए हैं। प्रदेश के विभिन्न जिलों में तैनात 27 प्रांतीय सिविल सेवा (पीसीएस) अधिकारियों के तबादले हुए हैं। शासन की ओर से जारी आदेश के अनुसार कई उप जिलाधिकारी (एसडीएम), नगर मजिस्ट्रेट और विकास प्राधिकरणों के सचिव स्तर के अधिकारियों को नई तैनाती दी गई है।

सूची के मुताबिक अरुण कुमार सिंह, जो अब तक अपर जिलाधिकारी (वित्त/राजस्व), बाराबंकी थे, उन्हें अपर आयुक्त, मुरादाबाद मंडल के पद पर भेजा गया है। वहीं निरंकार सिंह, अपर नगर आयुक्त नगर निगम,गोरखपुर से अब उसी पद पर स्थानांतरित हुए हैं। अतुल कुमार, उप जिलाधिकारी जालौन से अपर नगर आक्क्त गोरखपुर बनाए गए हैं। पंकज वर्मा अपर जिलाधिकारी बागपत से सचिव मुरादाबाद विकास प्राधिकरण बनाए गए हैं। विनीत कुमार उपाध्याय, नगर मजिस्ट्रेट मिर्जापुर को अपर जिलाधिकारी (वित्त व राजस्व) बागपत बनाया गया है। मिर्जापुर के उपजिलाधिकारी अविनाश कुमार को मिर्जापुर का नगर मजिस्ट्रेट बनाया गया है। अयोध्या के उपजिलाधिकारी कौशल कुमार को इसी जिले के अपर जिलाधिकारी भू अध्याप्ति की जिम्मेदारी दी गई है। राजस्व परिषद में ओएसडी राजकुमार द्विवेदी को वाराणसी में अपर आयुक्त विन्ध्यांचल के पद पर भेजा गया है। सहकारी चीनी मिल्स संघ के प्रधान प्रबंधक विवेक कुमार को अपर आयुक्त वाराणसी बनाया गया है। बरेली के उपजिलाधिकारी गोविन्द मौर्या को सहकारी चीनी मिल्स संघ के प्रधान प्रबंधक पद पर भेजा गया है। वाराणसी के उपजिलाधिकारी अमित कुमार वाराणसी नगर निगम में अपर नगर आयुक्त की जिम्मेदारी दी गई है।

कन्नौज के अपर जिलाधिकारी आशीष कुमार सिंह को मथुरा-वृंदावन विकास प्राधिकरण का सचिव बनाया गया है। कन्नौज के उप जिलाधिकारी देवेन्द्र सिंह अपर जिलाधिकारी (वि-रा) कन्नौज बनाए गए हैं। अयोध्या के उप जिलाधिकारी विकास धर को सहारनपुर नगर निगम में सहायक नगर आयुक्त बनाया गया है। वाराणसी की उप जिलाधिकारी श्रद्धा चौधरी को राज्य संपत्ति निदेशालय में सहायक निदेशक बनाया गया है। राजस्व परिषद से सम्बद्ध अरविन्द कुमार सिंह को मंडी परिषद का उप निदेशक बनाया गया है। सहकारी चीनी मिल्स में प्रधान प्रबंधक ज्योति को अपर जिलाधिकारी प्रशासन गाजियाबाद बनाया गया है। शाहजहांपुर के उपजिलाधिकारी महेश कुमार कैंथल को सहकारी चीनी मिल्स में प्रधान प्रबंधक का जिम्मा दिया गया है।

अंबेडकर नगर के अपर जिलाधिकारी सदानंद गुप्ता को वाराणसी के अपर जिलाधिकारी (वि-रा) के पद पर भेजा गया है। अपर जिलाधिकारी न्यायिक हापुड़ ज्योत्सना बंधु को अपर जिलाधिकारी (वि-रा) के पद पर अम्बेडकरनगर भेजा गया है। रामपुर की उपजिलाधिकारी मोनिका सिंह की अपर जिलाधिकारी न्यायिक हापुड़ भेजी गई हैं। अलीगढ़ के अपर जिलाधिकारी (नगर) अमित कुमार भट्ट अपर जिलाधिकारी (वि-रा) अयोध्या के पद पर भेजा गया है। मुरादाबाद के नगर मजिस्ट्रेट किंशुक श्रीवास्तव को अपर जिलाधिकारी (नगर) अलीगढ़ भेजा गया है। मुरादाबाद के उप जिलाधिकारी विनय पांडेय को मुरादाबाद का नगर मजिस्ट्रेट, फिरोजाबाद की अपर जिलाधिकारी (न्यायिक) संगीता देवी को अपर जिलाधिकारी प्रशासन मुरादाबाद और मथुरा वृंदावन विकास प्राधिकरण के सचिव अरविन्द कुमार को अपर जिलाधिकारी (न्यायिक) फिरोजाबाद ट्रांसफर किया गया है।

बदलाव इलाहाबाद, फैजाबाद, मुगलसराय से मुस्तफाबाद का सांस्कृतिक पुनर्जागरण

स्थानों के नाम बदलने में विचारधारा और वोट की नई रणनीति

धीरेंद्र सिंह, लखनऊ

- कई और नामों पर मंथन जारी विपक्ष ने कहा- ध्यान भटकाने की राजनीति

अमृत विचार : लखीमपुर खीरी के मुस्तफाबाद को 'स्मृति प्रकटोत्सव मेला' के मंच से मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के नए नाम कबीरधाम का ऐलान केवल एक प्रशासनिक निर्णय नहीं, बल्कि योगी सरकार की सांस्कृतिक और वैचारिक राजनीति का विस्तार माना जा रहा है। योगी सरकार के सात वर्षों में इलाहाबाद को प्रयागराज, फैजाबाद को अयोध्या, मुगलसराय को पंडित दीनदयाल उपाध्याय नगर और अकबरपुर बस स्टैंड को 'श्रवण धाम' जैसे नामों से नवाजा गया।

मुख्यमंत्री योगी बार-बार कहते हैं कि धर्मनिरपेक्षता की आड़ में विरासत मिटाने का दौर खत्म हुआ है। सरकार का कहना है कि यह कदम आस्था, परंपरा और सांस्कृतिक गौरव की पुनर्स्थापना के लिए उठाए गए हैं। हर नया नाम भाजपा के 'हिंदू अस्मिता' नैरेटिव को और मजबूत करता है। अब प्रदेश की राजनीति में नाम बदलना केवल इतिहास का सुधार नहीं, बल्कि एक विचारधारा की स्थापना है। हर नया नाम एक चुनावी बयान की तरह गूंजता है। जहां आस्था, अस्मिता और सत्ता, तीनों का समीकरण साथ चलता है।

वहीं, विपक्ष इसे ध्यान भटकाने की राजनीति बता रहा है। सपा प्रवक्ता राजेंद्र चौधरी का कहना है कि जब जनता बेरोजगारी, महंगाई और किसानों की समस्या से जूझ रही है, तब सरकार नाम बदलने में व्यस्त है।

पांच कॉलेजों के नाम भी बदले

इस साल जून में पांच सरकारी इंजीनियरिंग कॉलेजों के नाम भी बदले गए। प्रतापगढ़ का बाबा साहब अंबेडकर, मिर्जापुर का सम्राट अशोक, बस्ती का सरदार पटेल, गोंडा का मां पाटेश्वरी देवी और मैनपुरी का लोकमाता देवी अहिल्या बाई होल्कर इंजीनियरिंग कॉलेज रखा गया। यह भाजपा की सोशल इंजीनियरिंग रणनीति का हिस्सा है, जिसमें दलित, पिछड़ा और सवर्ण प्रतीकों को एक साथ साधने की कोशिश की जा रही है।

माया‌वती ने भी बदले थे कई जिलों के नाम

नामकरण की राजनीति नई नहीं है। मायावती के कार्यकाल में कई जिलों के नाम बदले गए थे, अमेठी को छत्रपति शाहूजी महाराज नगर, हाथरस को महामायानगर, शामली को प्रबुद्ध नगर, हापुड़ को पंचशील नगर और कानपुर देहात को रमाबाई नगर बनाया गया था। लखनऊ की किंग जॉर्ज मेडिकल यूनिवर्सिटी को छत्रपति शाहूजी महाराज चिकित्सा विश्वविद्यालय नाम दिया गया।

इन जिलों में नाम बदलने की चर्चाएं

योगी सरकार में कई अन्य नामों पर भी चर्चा चल रही है। अलीगढ़ को हरिगढ़, मुजफ्फरनगर को लक्ष्मीनगर, फिरोजाबाद को चंद्रनगर और गाजीपुर के मुहम्मदाबाद को गजाधर नगर नाम देने के प्रस्ताव सामने हैं। शाहजहांपुर की जलालाबाद तहसील का नाम पहले ही परशुरामपुरी किया जा चुका है। राजनीति के जानकार मानते हैं कि नामकरण अब उत्तर प्रदेश में चुनावी निवेश बन चुका है। हर नया नाम किसी ऐतिहासिक या धार्मिक प्रतीक से जुड़कर भावनात्मक संदेश देता है, जो वोटों में तब्दील हो सकता है।

अखिलेश यादव भी नहीं रहे पीछे

वर्ष 2012 में अखिलेश यादव की सपा सरकार आई तो मायावती के रखे गए कुछ नामों को फिर बदला गया। उनका तर्क था कि बसपा सरकार ने नाम बदलने में वर्गीय पक्षपात किया था। हालांकि अखिलेश ने खुद भी अपनी राजनीति के हिसाब से कुछ नामों को बदला। यानी, हर सरकार ने अपने वैचारिक या सामाजिक एजेंडे के हिसाब से नामों की राजनीति की है।

निर्वाचन अधिकारियों की नियुक्ति पर उठाए सवाल

राज्य ब्यूरो, लखनऊ

- सपा ने ज्ञापन देकर की बीएलओ और अधिकारियों की पुनर्नियुक्ति की मांग

अमृत विचार : समाजवादी पार्टी ने प्रदेश में विधानसभा क्षेत्रों के मतदाता सूची विशेष पुनरीक्षण (एसआईआर) से पहले निर्वाचन अधिकारियों की नियुक्ति पर गंभीर सवाल उठाए हैं। पार्टी ने आरोप लगाया है कि बूथ लेवल ऑफिसर (बीएलओ) एडीएम (इलेक्शन) और ईआरओ (इलेक्शन रजिस्ट्रेशन ऑफिसर) की तैनाती जाति और धर्म के आधार पर की गई है। सपा ने राज्य के मुख्य निर्वाचन अधिकारी को ज्ञापन देकर मांग की है कि निष्पक्ष और पारदर्शी पुनरीक्षण प्रक्रिया के लिए सभी अधिकारियों को तत्काल हटाकर नई नियुक्तियां की जाएं।

सपा के प्रदेश अध्यक्ष श्याम लाल पाल ने ज्ञापन में कहा कि प्रदेश के 403 विधानसभा क्षेत्रों के 1,62,486 पोलिंग स्टेशनों पर कार्यरत बीएलओ और निर्वाचन अधिकारियों की नियुक्ति भाजपा की मानसिकता वाले अधिकारियों को तरजीह देकर की गई है। उन्होंने कहा कि जाति और धर्म के आधार पर की गई यह नियुक्ति लोकतांत्रिक मूल्यों और आयोग की निष्पक्षता के खिलाफ है। इस तरह के भेदभावपूर्ण चयन से न केवल चुनावी प्रक्रिया की निष्पक्षता पर प्रश्नचिह्न लग रहा है, बल्कि भारत निर्वाचन आयोग की विश्वसनीयता भी प्रभावित हो रही है।

कैंसर का इलाज संभव, जांच से बच सकती जान : डॉ. अंकिता

रोहिलखंड कैंसर इंस्टीट्यूट और अमृत विचार ने शुरू किया तीन दिवसीय नारी कैंसर सुरक्षा अभियान, विद्या वर्ल्ड, राधा माधव स्कूल और केसीएमएटी में हुआ कार्यक्रम

कैंसर से जुड़े हर सवाल का मिला जवाब

अंशी ने किया सवाल

क्लास नौवीं की छात्रा अंशी राठौर ने सवाल किया कि उनके परिवार में नानी को ब्रेन ट्यूमर कैंसर था, उनकी अब डेथ हो चुकी है, मेरा जन्म उनके पैदा होने के बाद हुआ था। क्या मुझमें भी इसी तरह की बीमारी होने की संभावना हो सकती है। इस पर डा. अंकिता ने कहा कि ब्रेन ट्यूमर समेत कुछ अन्य तरह के कैंसर दूसरों में बाय बर्थ ट्रांसफर नहीं होते, इसलिए घबराने की जरूरत नहीं, केवल जागरूक होना जरूरी है।

खुशी ने की सराहना

12वीं की छात्रा खुशी ने स्तन कैंसर कार्यक्रम की सराहना की और अन्य छात्राओं को भी कैंसर को लेकर जागरूक करने का प्रयास किया। कहा कि कैंसर शरीर के किसी भी अंग में हो सकता है। कैंसर के प्रति भारत में लोगों में जागरूकता कम और विदेशों में ज्यादा होने की बात कही। कहा कार्यक्रम में हमें स्व-परीक्षण के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी मिली, जिससे हम घर पर ही स्तन कैंसर के शुरुआती लक्षण पहचान सकते हैं।

लाइलाज बीमारी नहीं

इसी क्लास की काव्या पटेल ने कहा, इस कार्यक्रम के जरिये हमने जाना कि स्तन कैंसर को लाइलाज बीमारी नहीं, बल्कि समय पर जांच में बीमारी का पता चलने पर मरीज को पूरी तरह से स्वस्थ करने वाली है। कहा कि कार्यक्रम में मिली जानकारी के बाद वह घर वालों को इसके प्रति जागरूक करेंगे। छात्राओं से फिजिकल एक्टिविटीज पर फोकस और खानपान पर ध्यान देकर कैंसर से रोकथाम की बात कही।

जानकारी के लिए संपर्क करें-
mail id : info@ rohilkhand cancerinstitute.com

ROHILKHAND CANCER INSTITUTE

कार्यालय संवाददाता, बरेली :

अमृत विचार : स्तन कैंसर अब लाइलाज नहीं रहा, बल्कि समय पर जांच और उचित उपचार से 80 प्रतिशत मरीज पूरी तरह ठीक हो सकते हैं। यह कहना है रोहिलखंड कैंसर इंस्टीट्यूट की असिस्टेंट प्रोफेसर डा. अंकिता पांडेय का। उन्होंने बताया कि छात्राओं को अपने स्तन में कहीं पर भी गांठ महसूस हो, तो वह भी तुरंत अपने शहर के ऑन्कोलॉजिस्ट से मिलें। तभी सही इलाज हो सकेगा। रोहिलखंड कैंसर इंस्टीट्यूट और अमृत विचार के संयुक्त तत्वावधान में ब्रेस्ट कैंसर जागरूकता माह के तहत तीन दिवसीय नारी कैंसर सुरक्षा अभियान मंगलवार को शुरू हुआ। पहले दिन शहर के विद्या वर्ल्ड पब्लिक स्कूल, राधा माधव पब्लिक स्कूल और केसीएमएटी में छात्राओं को स्तन कैंसर की खुद से पहचान और इससे बचाव के टिप्स दिए गए। विद्या वर्ल्ड स्कूल में आयोजित कार्यक्रम में डा. अंकिता पांडेय ने छात्राओं को प्रारंभिक अवस्था में ब्रेस्ट कैंसर की जांच का महत्व बताया और इससे बचाव की जानकारी दी।

विद्या वर्ल्ड स्कूल में नारी कैंसर जागरूकता कार्यक्रम में मौजूद बच्चे। ● अमृत विचार

वजन बढ़ने न पाए, इसका रखें ख्याल

विद्या वर्ल्ड स्कूल की वाइस प्रिंसिपल संयोगिता ने कहा कि वजन बढ़ना कई प्रकार की शारीरिक स्वास्थ्य जोखिमों का कारण माना जाता है। स्तन कैंसर का जोखिम भी उनमें से एक है। फैट टिशू की मात्रा अधिक होने के कारण एस्ट्रोजन हार्मोन का स्तर बढ़ने का खतरा रहता है। इसके कारण स्तन कैंसर विकसित होने का जोखिम हो सकता है। अधिक वजन वाली महिलाओं में इंसुलिन का स्तर भी असंतुलित रहता है, जिससे डायबिटीज का खतरा हो सकता है।

सही उम्र में शादी व बच्चे से कम होता कैंसर का खतरा

स्तन कैंसर जागरूकता अभियानके तहत छात्राओं को जानकारी देतीं डा. अंकिता पांडेय।

राधा माधव पब्लिक स्कूल में कैंसर के बारे में जानकारी देतीं छात्राएं काव्या और खुशी। साथ में अमृत विचार के सीओओ पार्थो कुनार। ● अमृत विचार

कार्यालय संवाददाता, बरेली

अमृत विचार : राधा माधव पब्लिक स्कूल में आयोजित स्तन कैंसर जागरूकता कार्यक्रम में डा. अंकिता पांडेय ने छात्राओं को बताया कि सही उम्र में शादी और बच्चा स्तन कैंसर का खतरा कम करता है। स्तनपान न कराने से महिलाओं की नसें रुंध जाती हैं। इससे गांठ बनने और कैंसर होने का खतरा रहता है, इसलिए सही समय पर शादी और बच्चा होना दोनों जरूरी है। डा. अंकिता के मुताबिक, 30 साल तक की उम्र तक विवाह और 35 की उम्र तक बच्चे का जन्म हो जाना चाहिए। शिशु को छह माह तक स्तनपान जरूर कराना चाहिए। डा. अंकिता पांडेय ने कहा कि यह भी देखा गया कि स्तन कैंसर आनुवांशिक वजह से भी होता है। करीब पांच से 10 फीसदी मामले इस तरह के होते हैं। विशेषकर उन महिलाओं को सतर्क रहना चाहिए, जिनके परिवार में किसी को 40 वर्ष से कम उम्र में कैंसर हुआ हो। ऐसी महिलाओं को साल में एक बार अपनी जांच जरूरी करानी चाहिए। छात्राओं से कहा कि असामान्य बदलाव या लक्षण महसूस होने पर अगला कदम ये होना चाहिए कि ब्रेस्ट कैंसर का पता जल्दी और कम गंभीरता वाले स्टेज में ही लगा लिया जाए। इसके लिए जरूरत है तत्काल डॉक्टर से परामर्श लेने की। फिर जरूरत अनुसार मेमोग्राफी या अल्ट्रासाउंड और अन्य जांचें कराने पर समय रहते ब्रेस्ट कैंसर का पता चल सकता है।

महिलाएं ही नहीं पुरुषों में भी बढ़ रहा स्तन कैंसर, रहना होगा सजग

डॉ. अंकिता पांडेय ने कहा कि ब्रेस्ट कैंसर पर जब भी बात हुई है, तो हमेशा महिलाओं का ही जिक्र आता है। महिलाओं में होने वाले इस आम कैंसर (ब्रेस्ट कैंसर) को लेकर आपको जानकर हैरानी होगी कि यह अब सिर्फ महिलाओं तक सीमित नहीं है बल्कि पुरुषों में भी इसने अपने पैर तेजी से पसारने शुरू कर दिए हैं। उन्होंने बताया कि पुरुषों को ब्रेस्ट में अगर बदलाव नजर आए तो उन्हें अनदेखा न करें। ब्रेस्ट में गांठ महसूस हो या निप्पल से किसी भी तरह का डिस्चार्ज हो तो तुरंत कैंसर स्पेशलिस्ट से मिलें और जांच कराएं। रेडिएशन के एक्सपोजर से कैंसर होने की आशंका बढ़ती है। शरीर में एस्ट्रोजन लेवल बढ़ने और बहुत ज्यादा शराब पीने से भी पुरुषों में कैंसर की संभावना बढ़ सकती है। शराब पीने से एस्ट्रोजन का स्तर बढ़ सकता है। एस्ट्रोजन सामान्य और कैंसरग्रस्त दोनों स्तन कोशिकाओं को बढ़ने में मदद करता है, जिससे कैंसर फैल जाता है। यही नहीं अगर परिवार में कैंसर का इतिहास रहा है तो महिलाओं की तरह पुरुषों को भी सजग रहना चाहिए।

कैंसर से पूरी तरह ठीक हो सकता है मरीज: डॉ. पांडेय

कार्यालय संवाददाता, बरेली

- केसीएमटी स्कूल में छात्राओं ने जानीं स्तन कैंसर से जुड़ी बारीकियां
- डॉ. अंकिता बोलीं - शिशु को छह माह तक स्तनपान भी हैं कैंसर से बचाव का प्रमुख उपाय

अमृत विचार : पीलीभीत रोड स्थित केसीएमटी कॉलेज में भी नारी कैंसर सुरक्षा अभियान के साथ छात्राओं को ब्रेस्ट कैंसर से बचाव की जानकारी दी गई।

प्रोफेसर डा. अंकिता पांडेय ने बताया कि समय पर जांच और इलाज से कैंसर जैसी बीमारी से पूरी तरह ठीक हुआ जा सकता है। स्तन कैंसर की रोकथाम के लिए महिलाओं को पौष्टिक आहार लेना चाहिए और नियमित व्यायाम करना चाहिए। उन्होंने 40 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाओं को नियमित मैमोग्राफी कराने की सलाह दी। कहा कि स्तन में गांठ होने को स्तन कैंसर के सबसे आम लक्षणों में से एक माना जाता है, हालांकि हर बार गांठ होने का मतलब कैंसर ही नहीं है। कई बार लिंपोमा (वसा का जमाव) भी गांठ बनने का कारण हो सकती है। यह ब्रेस्ट इमेजिंग टेस्ट के माध्यम से पता किया जा सकता है कि गांठ सामान्य है या कैंसर का कारण। शिक्षिका अमिता पाठक ने कहा कि स्तन कैंसर किसी भी अंग में हो सकता है, इसलिए जरूरी है समय-समय पर जांच कराएं छात्रा रिफा ने कहा कि स्तन ही नहीं किसी भी तरह का कैंसर आज आम बात है। कार्यक्रम की सराहना करते हुए कहा कि सोसाइटी या अन्य कई जगहों पर लोग कैंसर से जुड़े मुद्दे पर बात नहीं करते हैं, जबकि इसको लेकर हर किसी को जागरूक होना जरूरी है। अमृत विचार और रोहिलखंड कैंसर इंस्टीट्यूट के कार्यक्रम की सराहना की। छात्रा सोनालिका ने छात्राओं से अपील कि वह साल में एक बार स्तन कैंसर को लेकर अवश्य जांच कराएं। समय-समय पर रोहिलखंड मेडिकल कालेज की ओर से कैंप लगाया जाता है। आखिरी स्टेज की स्थिति में कैंसर न पहुंचे इसको लेकर जागरूक करने की अपील की।

डॉ. अंकिता का स्वागत करते विनय खंडेलवाल।

केसीएमटी कॉलेज में स्तन कैंसर जागरूकता कार्यक्रम में मौजूद शिक्षिकाएं और छात्राएं। ● अमृत विचार

मंडल की सीनियर फुटबॉल टीम का चयन

बरेली, अमृत विचार : खेल निदेशालय की ओर से कानपुर में 30 अक्टूबर से 6 नवंबर तक प्रदेश स्तरीय सीनियर पुरुष फुटबाल प्रतियोगिता का आयोजन किया जाएगा। स्पोर्ट्स स्टेडियम में प्रतियोगिता के लिए मंडल की टीम के ट्रायल हुए, जिसमें बरेली के नमन सैनी, मो. उजैर, शिव प्रकाश, शास्वत, तरुण चौहान, मिहिर देव, अभिषेक बिष्ट, हर्षित वार्ने, सचिन, हर्ष बिष्ट, युगांक आर्या, हर्षित सिंह शाही और शाहजहांपुर के आयुष, सत्यम सिंह तथा पीलीभीत के आकाश वर्मा, हरीश कुमार का चयन हुआ।

पब्लिक सूचना

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि मेरे मुवक्किल इण्डिया शेल्टर फाइनेंस कार्पोरेशन लि. शाखा सिविल लाइन्स, सर्किट हाउस चौराहा, नियर आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के ऊपर, बरेली से विशाल पुत्र लायक राम निवासी मीरपुर वाहनपुर, जिला पीलीभीत एक किता आवासीय मकान आराजी तादादी 67.55 वर्गमीटर वाकै नवादा जोगियान पर.तह. बरेली में स्थित है जिसकी चौहददी पूरब में सम्पतित राजू, पश्चिम में रास्त 10 फिट चौड़ा, उत्तर में मकान नत्थूलाल गंगवार व दक्षिण में मकान गौरीलाल है, उक्त सम्पत्ति को बंधक रखकर ऋण ले रहे है, उक्त सम्पत्ति जिसकी रजिस्ट्री उपनिबंधक बरेली के कार्यालय में बही संख्या 1 जिल्द संख्या 4758 के पृष्ठ 291 से 320 तक क्रमांक 2104 पर दिनांक 24.02.2012 को रजिस्ट्रीकृत किया गया। जो कहीं गुम हो गया है जिसके गुम होने की सूचना ई-थाना पर दिनांक 27.10.2025 को दर्ज करा दी गयी ह। जिसका एल.ए.आर. नम्बर-20250000782862 है। अतः सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि यदि किसी अन्य व्यक्ति/बैंक/संस्था आदि को उक्त बंधक सम्पत्ति के सम्बन्ध में कोई आपत्ति हो तो वह अपनी आपत्ति सामान्य कार्यदिवस के 7 दिन के अन्दर मेरे मुवक्किल इण्डिया शैल्टर हाउसिंग फाईनेंस लि. शाखा 143, द्वितीय तल मेन रोड, आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के बराबर में, बरेली के कार्यालय पर या मेरे कार्यालय पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होकर दर्ज करा सकता है उक्त समयावधि बीत जाने के उपरान्त मेरे मुवक्किल द्वारा उक्त ऋण कर दिया जायेगा।

मुनीश कुमार सक्सेना (एडवोकेट)
चैम्बर नं.- 27, न्यू बिल्डिंग बंगलिया सिविल कोर्ट, बरेली सूचीबद्ध अधिवक्ता इण्डिया शेल्टर फाईनेंस कार्पोरेशन लि. शाखा सिविल लाइन्स, सर्किट हाउस चौराहा, नियर आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के ऊपर, बरेली
मो. 9997389012

ट्रक से टकराई पिकअप, चालक समेत तीन की मौत

संवाददाता, गजरौला/पीलीभीत

- कस्बा गजरौला के पास हुआ हादसा, सीओ और एआरटीओ पहुंचे, एक गंभीर
- मृतकों में दो लोगों की पहचान शाहजहांपुर के बंडा निवासी के रूप में हुई

अमृत विचारः असम हाईवे पर गजरौला के पास ट्रक, पिकअप और डीसीएम की टक्कर हो गई। हादसे में पिकअप सवार तीन लोगों की मौत हो गई, जबकि एक गंभीर रूप से घायल हो गया।

हादसा मंगलवार शाम 8 बजे के बाद कस्बा गजरौला में थाना से कुछ दूरी पर हुआ। एक डीसीएम पूरनपुर से पीलीभीत की तरफ आ रही थी, जो ट्रक टकरा गई। इस दौरान पिकअप सामने से आ रहे वाहन से टकराई। तीनों वाहन आपस में टकरा गए। पिकअप में सवार लोग वाहन में ही फंस गए। वाहन भी क्षतिग्रस्त हो गए।

कुछ ही देर में स्थानीय लोगों की भीड़ जमा हो गई। इसके बाद सूचना पुलिस को दी गई। बताते है कि पुलिस करीब आधे घंटे बाद मौके पर पहुंची। इसके बाद वाहनों में सवार लोगों को बमुश्किल बाहर निकाला गया। हादसे में पिकअप सवार तीन लोगों की मौके पर ही मौत हो गई। मृतकों में पिकअप चालक की पहचान बंडा शाहजहांपुर के निवासी पंकज (30), गाड़ी मालिक राजेंद्र निवासी रामनगर कॉलोनी बंडा शाहजहांपुर के रूप में हुई। जबकि एक अन्य मृतक की पहचान नहीं हो सकी है। पुलिस प्रयास कर रही है। इसके अलावा डीसीएम पर सवार एक संदीप विश्वकर्मा को गंभीर हालत में अस्पताल भेजा गया है। हादसे की सूचना पर सीओ सिटी दीपक चतुर्वेदी, एआरटीओ वीरेंद्र सिंह भी टीम के साथ पहुंच गए। उन्होंने हादसे के बारे में जानकारी की। एक मृतक की पहचान के लिए प्रयास किए जा रहे है। हादसा ओवरटेक करते समय हुआ। इसके अलावा स्पीड भी काफी अधिक बताई जा रही है। हादसे के बाद हाईवे पर आवागमन बाधित रहा। देर रात तक अफसर मौके पर पड़ताल करते रहे। मृतकों के परिवार को भी सूचना भेज दी गई है। एसओ गजरौला ब्रजवीर सिंह ने बताया कि हादसे में तीन लोगों की मौत हुई है। दो की शिनाख्त हो चुकी है। एक घायल को अस्पताल भिजवाया है। वाहन कब्जे में ले लिए है।

हादसे के सूचना पर पहुंचे अधिकारी। ● अमृत विचार

हादसे के बाद क्षतिग्रस्त वाहन।

पटाखों का बारूद जलाते समय आग लगने से बच्चा झुलसा

बरेली, अमृत विचारः फरीदपुर में पटाखों का बारूद जमा कर जलाते समय तेज धमाका होने से 10 साल का बच्चा झुलस गया। बच्चे के मुंह के साथ हाथ-पैर भी बुरी से झुलस गए। परिजनों ने बच्चे को सीएचसी में भर्ती कराया, जहां हालत गंभीर होने पर जिला अस्पताल रेफर कर दिया गया।

फरीदपुर थाना क्षेत्र के लाइन पार मठिया निवासी नमे अली ने बताया कि उनका 10 साल का बेटा अयान सोमवार शाम को लाइन पार बकरी चराने के लिए गया था। इसी बीच वहां पर दिवाली में जलाए गए पटाखे पड़े हुए थे। बेटे ने पटाखे से बारूद निकालकर जमा कर लिया। उसके बाद उसने उन्हें जलाने के लिए जैसे ही आग लगाई उसमें अचानक से तेज धमाका होने के बाद विस्फोट हो गया। जिसमें अयान के चेहरे के साथ हाथ-पैर बुरी तरह से झुलस गए। खेतों पर काम कर रहे लोगों ने धमाके की आवाज सुनी तो वह उसे बचाने के लिए दौड़े।

नवंबर के पहले सप्ताह से एक दिन में हो सकेंगे चेक क्लियरेंस

कार्यालय संवाददाता, बरेली

- दिवाली से पहले की पेंडेंसी खत्म होने के बाद पटरी पर लौटेगी व्यवस्था

अमृत विचारः दिवाली और छठ पर्व के अवकाश के चलते बढ़े बैंकिंग कार्यभार के कारण पिछले 10 दिनों से चेक क्लीयरेंस की प्रक्रिया प्रभावित रही। शहर के प्रमुख बैंकों में बड़ी संख्या में लेन-देन होने से चेकों की पेंडेंसी लगातार बढ़ती जा रही थी। बैंक यूनियन के पदाधिकारियों के अनुसार अब स्थिति धीरे-धीरे सामान्य हो रही है और नवंबर के पहले सप्ताह से चेक एक ही दिन में क्लीयर हो सकेंगे।

त्योहारी सीजन में बड़ी संख्या में व्यापारिक भुगतान और सरकारी लेन-देन के साथ ही छुट्टियों के चलते बैंकिंग सर्वर पर दबाव बढ़ गया है। बैंक अधिकारियों के अनुसार इस दौरान कई चेक अपलोड होने के बाद भी सिस्टम से वापस लौट आते थे, जिससे उन्हें दोबारा प्रोसेस करना पड़ता था। साथ ही, कई शाखाओं में छुट्टियों और स्टाफ की कमी के कारण भी क्लीयरेंस में देरी हो रही थी।

फिलहाल, चेक क्लीयरेंस में 2 से 3 दिन का समय लग रहा है, जबकि सामान्य स्थिति में यह प्रक्रिया 24 घंटे के भीतर पूरी कर ली जाती है। बैंकों ने बताया कि सर्वर अपडेट और मैनुअल प्रोसेसिंग के चलते आने वाले कुछ दिनों में यह समस्या पूरी तरह दूर हो जाएगी। बैंक एम्प्लॉइज यूनियन के महामंत्री पीके माहेश्वरी ने बताया कि नेशनल पेमेंट सिस्टम और क्लियरिंग हाउस इंटरफेस पर बढ़े ट्रांजेक्शन के कारण सिस्टम की गति धीमी हुई थी। अब जैसे ही त्योहारों का लोड कम हो रही है, सर्वर लोड सामान्य स्तर पर आने लगा है।

बैंक उपभोक्ताओं को सलाह दी गई है कि वे इस सप्ताह बड़े लेन-देन या चेक पेमेंट के लिए समय का ध्यान रखें, ताकि भुगतान में किसी तरह की देरी न हो। उन्होंने आश्वस्त किया है कि 1 नवंबर से चेक क्लियरेंस प्रक्रिया सामान्य हो जाएगी और सभी शाखाओं में एक दिन में चेक क्लीयर हो सकेंगे। इस सुधार से व्यापारियों, संस्थानों और आम ग्राहकों को बड़ी राहत मिलने की उम्मीद है।

कार्यालय अधिशासी अभियन्ता,
ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग, प्रखण्ड बरेली।
पताः- ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग, द्वितीय तल विकास भवन, बरेली।

पत्रांकः- 2006 /ग्रा0अ0वि0/निविदा-पत्रा0/बाण्ड क्लर्क/2025-26 दिनांकः-13.10.2025

-:: निविदा सूचना ::-

1- महामहिम राज्यपाल, उ0प्र0 की ओर से अधिशासी अभियन्ता, ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग, प्रखण्ड बरेली में भवन/सडक निर्माण कार्य हेतु ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग उत्तर प्रदेश में पात्र ए0,बी0,सी0,डी0 एवं ई0 श्रेणी के निविदादाताओं से नीचे दर्शाये गये कार्य हेतु प्रतिशत दर निविदा आमंत्रित की जाती है। निविदादाता कार्य के लिये निविदा जमा कर सकते है।

2- तालिका के अनुसार कार्यो का विवरणः-

क्रम सं0	जनपद का नाम	कार्य का नाम	अनुमानित लागत (लाख रू0 में) (GST सहित)	धरोहर धनराशि (रूपये में)	निविदा मूल्य समस्त करों सहित (रू0 में)	कार्य पूर्ण करने की अवधि
1	2	3	4	5	6	7
1	बरेली	ग्राम बेहटा बुजुर्ग में बन्ने खाँ के मकान से शमशान भूमि तक इण्टरलॉकिंग रोड का निर्माण कार्य (वि0नि0-मझगवां)	8.216	16500.00	766.00	03 माह
2	बरेली	परिमण्डल कार्यालय/स्टोर में शैड, रंगाई-पुताई एवं अन्य कार्य। (अन्य योजना)	4.000	8000.00	677.00	03 माह

3. निविदा विक्री की अवधि दिनांकः- 20.11.2025 से 22.11.2025 तक पूर्वान्ह वजे से अपरान्ह वजे तक)
4. निविदा प्राप्ति का अन्तिम दिनांक एवं समय दिनांक 25.11.2025 को मध्याहन 1200 बजे तक
5. निविदा प्राप्ति का स्थान : कार्यालय अधिशासी अभियन्ता, ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग, द्वितीय तल, विकास भवन, जनपद-बरेली।
6. निविदा खुलने का दिनांक एवं समय : दिनांक 25.11.2025 अपरान्ह 12:30 बजे

अधिक जानकारी के लिये अधिशासी अभियन्ता, ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग कार्यालय, द्वितीय तल, विकास भवन, बरेली से सम्पर्क कर सकते हैं।

(विनय कुमार शर्मा)
अधिशासी अभियन्ता
ग्रामीण अभियन्त्रण विभाग,
प्रखण्ड, बरेली।

UP - 239523 **दिनांक:** 27/10/2025
विज्ञापन वेबसाइट www.up.gov.in **पर उपलब्ध है।**

पूर्वोत्तर रेलवे

ई-निविदा सूचनाः ओटी-11-2025

उप मुख्य विद्युत इंजीनियर / निर्माण, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर द्वारा भारत के राष्ट्रपति की ओर से निम्नलिखित कार्यों के लिये "**खुली**" निविदा आमंत्रित की जाती है। **निविदा सं0:- ओटी-11-2025, कार्य का विवरणः-** स्हजनवां-दोहरीघाट, खलीलाबाद-बहराईच नई लाइन एवं गोरखपुर कैण्ट - बाल्मिकीनगर दोहरीकरण परियोजना के अन्तर्गत ट्रैक लाइन में आने वाले मौजूदा मास्टो या पोर्टलो को 'सुरक्षित रूप से हटाना/काटने का कार्य एवं अन्य सम्बन्धित कार्य।, **अनुमानित लागतः-** रु.77,77,470.20, **बयाना राशिः-** रु.1,55,600.00, **निविदा प्रपत्र का मूल्यः-** रु निल, **कार्य पूर्ण करने की अवधिः-** 12 माह, **निविदा बन्द होने की अंतिम तिथि व समयः** 25.11.2025 को 15.00 बजे। **नोटः** • इस निविदा के विरुद्ध कोई मैनुअल आफर स्वीकार नहीं किया जायेगा। ऐसे प्राप्त मैनुअल आफर को उपेक्षित कर दिया जायेगा। विस्तृत विवरण व निविदा जमा करने हेतु कृपया भारतीय रेलवे की वेबसाइट **www.ireps.gov.in** को देखें। • निविदा सूचना में यदि हिन्दी या अंग्रेजी के आलेखों में कोई भिन्नता होती है तो अंग्रेजी के ही आलेख मान्य होगें।

उप मुख्य विद्युत इंजीनियर/निर्माण गोरखपुर
मुजाधि/विद्युत-172
ट्रेनों में बीड़ी/सिगरेट न पियें

पूर्वोत्तर रेलवे

खुली ई-निविदा सूचना संख्या : SRDEE-TRD-IZN-2025-26-T21 Date:24.10.2025

भारत के राष्ट्रपति की ओर से एवं उनके लिए वरिष्ठ मंडल विद्युत इंजीनियर/टीआरडी, पूर्वोत्तर रेलवे, इज्जतनगर द्वारा निम्नलिखित कार्य हेतु "खुली" ई-निविदा आमंत्रित करते है। **क्र. सं. 1 कार्य का नामः** इज्जतनगर मंडल के बंदरों की आबादी वाले खंडों में ओएचई मास्ट और पोर्टल पर चढ़ाई-रोधी उपकरण का प्रावधान से संबंधित कार्य। **टेंडर रिफरेंश नः** SRDEE-TRD-IZN-2025-26-T21 **कार्य का अनुमानित लागत (रु. में) :** 64,67,203.72 **अमानत राशि/बिड सिक्यूरिटी :** 1,29,400.00 **निविदा प्रपत्र का मूल्य रूपया में :** 00.00 **निविदा बंद होने की तिथि एवं समय :** 18.11.2025 11:00 **कार्य पूरा करने की अवधि :** 9 माह। • खुली ई-निविदा दिनांक 18.11.2025 को 11:00 बजे तक जमा कर सकेंगे। • पूर्ण विवरण जानने हेतु एवं निविदा की प्रस्तुति करने के लिए कृपया भारतीय रेलवे की वेबसाइट, **www.ireps.gov.in.** पर देखें।

मुजाधि/विद्युत-171
वरिष्ठ मंडल विद्युत इंजी/टीआरडी/इज्जतनगर
ट्रेनों में बीड़ी/सिगरेट न पियें

न्यायालय अपर जिलाधिकारी प्रशासन बरेली

वाद संख्या-1863/2025-191/2025

सोमपाल बनाम सतीश 1.सतीश कुमार 2. राजकुमार पुत्रगण रोशन 3. जाहिद हुसैन पुत्र मोहम्मद नवी समस्त निवासी ग्राम रिठौरा, परगना, तहसील व जिला बरेली। चूंकि मुसम्मी सोमपाल पुत्र बाबू राम निवासी ग्राम रिठौरा परगना तहसील व जिला बरेली में आपके नाम एक नालिश वास्ते धारा 38 (1) उ0प्र0 राजस्व संहिता के अन्तर्गत दायर की है लिहाजा आपको हुक्म दिया जाता है कि आप तारीख 30.10.25 असालतन या मारफत किसी वकील के जो हालात मुकदमा में वखूवी वाकिफ हो मय कागजात मुतलका के हाजिर हो वरना आपकी गैरहाजिरी में मुकदमा हाजा फैसला होगा। आज तारीख मेरे दस्तखत व मोहर अदालत से जारी किया।

जज

डीएलएड की छात्रा ने लगाया फंदा

बरेली, अमृत विचार : सुभाषनगर थाना क्षेत्र में मंगलवार को डीएलएड द्वितीय वर्ष की छात्रा ने फंदा लगा कर आत्महत्या कर ली। पुलिस को मौके से सुसाइड नोट बरामद हुआ है, जिसमें उसने मां-बाप की कोई गलती नहीं बताई है। उसने लिखा है कि वह लंबे समय से सो नहीं पाई है और अब सोने जा रही है। सुभाष नगर थाना प्रभारी जितेंद्र कुमार सिंह ने बताया कि मढीनाथ निवासी पूजा (24) परिवार के साथ यहां पर रहती थी।

अमृत विचार

बुधवार, 29 अक्टूबर 2025

हमें अपने संकल्प पर विश्वास करना चाहिए और उस पर टिके रहना चाहिए।

–**अटल बिहारी बाजपेयी**, पूर्व प्रधानमंत्री

चुनावी स्वच्छता अभियान

देश के 12 राज्यों में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण कार्यक्रम के दूसरे चरण की घोषणा भारतीय लोकतंत्र की चुनावी प्रक्रिया में विश्वसनीयता और पारदर्शिता के लिहाज से अत्यंत महत्वपूर्ण है। मतदाता सूची की शुद्धता, सटीकता ही निष्पक्ष चुनाव की नींव होती है और इस दृष्टि से यह कदम लोकतांत्रिक ढांचे को मजबूत करेगा। यह केवल एक प्रशासनिक कवायद नहीं, बल्कि जनप्रतिनिधि प्रणाली की शुद्धिकरण का भगीरथ प्रयास है। उत्तर प्रदेश को केंद्र में देखें तो इस पहल का महत्व और भी बढ़ जाता है। देश का सबसे बड़ा राज्य होने के नाते, यहां के मतदाता आंकड़े चुनावी समीकरणों को निर्णायक रूप से प्रभावित करते हैं। वर्तमान में उत्तर प्रदेश में लगभग 16 करोड़ मतदाता हैं। निर्वाचन आयोग के अनुमान के अनुसार, इस पुनरीक्षण प्रक्रिया में करीब 25 लाख नए मतदाता जुड़ने की संभावना है, जबकि 12 लाख नामों के हटने की आशंका है। इनमें मुख्यतः मृतकों, दोहराए गए नामों या स्थानांतरित मतदाताओं के नाम हटेंगे। बेशक यह प्रक्रिया राज्य के लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व को अधिक विश्वसनीय बनाएगी।

पिछले 21 वर्षों से इस स्तर का व्यापक पुनरीक्षण न होना चिंता का विषय रहा है। इसके पीछे तकनीकी सीमाएं, प्रशासनिक उदासीनता और राज्यों के बीच समन्वय की कमी तथा परिस्थिति विशेष जैसे कारण बताए गए, लेकिन अब डिजिटल वेरिफिकेशन, आधार लिंकेज, मोबाइल ऐप आधारित फील्ड एंट्री और ऑनलाइन शुद्धिकरण प्रणाली जैसी नई तकनीक ने इस प्रक्रिया को तेज, पारदर्शी और किंचित सरल तथा त्रुटि-मुक्त बनाया है। इससे फर्जी वोटर पहचानने, दोहराव रोकने और स्थानांतरित मतदाताओं को सही बूथ पर दर्ज करने में मदद मिलेगी, पर पूरी तरह शुद्ध सूची सुनिश्चित करने के लिए आयोग को निरंतर निगरानी और त्रिस्तरीय सत्यापन प्रणाली लागू करनी होगी। फील्ड वेरिफिकेशन टीमों को प्रशिक्षण और पूरी जवाबदेही के साथ काम करना होगा, विपक्ष के 'वोट चोरी' के आरोपों का तथ्यात्मक उत्तर इससे दिया जा सकेगा। आयोग के अनुसार प्रक्रिया निष्पक्ष है। बिहार में हालिया पुनरीक्षण के दौरान 65 लाख नाम हटाए और 48 लाख नए मतदाता जोड़े गए, लगभग 40 हजार संदिग्ध प्रवासी मतदाताओं की पहचान की गई। असम को इस सूची से फिलहाल बाहर रखा गया है, क्योंकि वहां राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर और मतदाता सूची का तालमेल जटिल है। पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और केरल की सरकारों की तकनीकी हस्तक्षेप और डेटा गोपनीयता की आपत्तियों पर आयोग ने इन राज्यों को आश्वस्त किया है कि मतदाता सूची से जुड़ा हर डेटा सुरक्षित रहेगा और राज्य सरकारों को सत्यापन प्रक्रिया में बराबर भागीदारी दी जाएगी। फिर भी राजनीतिक विवाद अनिवार्य है।

कुल मिलाकर, मतदाता सूची को अद्यतन करने का यह विशेष पुनरीक्षण कार्यक्रम लोकतंत्र की आत्मा को निर्मल रखने का यह प्रयास है, जो वोट के अधिकार को सुरक्षित बनाने के साथ उस जनविश्वास को भी सुदृढ़ करता है, जिस पर लोकतांत्रिक शासन की इमारत खड़ी है, जिसकी सफलता नागरिकों की जागरूकता और आयोग की निष्पक्षता दोनों पर समान रूप से निर्भर करती है।

प्रसंगवश

संघ का मंत्रः राष्ट्रधर्म और निःस्वार्थ सेवा

एक अद्भुत संरचना, त्याग और निःस्वार्थ सेवा का भाव, संघ को अन्य संस्थाओं से अलग व पवित्र बनाता है। संघ आज अपने सौ वर्ष का चक्र पूरा करने के उपलक्ष्य में शताब्दी वर्ष मना रहा है। अत्यंत सरलता व सादगी के साथ। वर्तमान समय की परिस्थितियों को देखने-विचारने के पश्चात, एक गहन चिंतन से शोधित करते हुए, सघन विचार-विमर्श से परिष्कृत करने के उपरांत संघ ने समाज को पांच परिवर्तन का विचार दिया। समाज को सुमार्ग पर लाने के लिए, अंदर से रक्षा तंत्र का मजबूत करते हुए राष्ट्र धर्म का हितैषी संघ आज 'शताब्दी वर्ष' की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए राष्ट्र चिंतन के प्रति समर्पित है।

गौरव शर्मा 'जौली'

लेखक

अनेक बुद्धिजीवियों, विचारकों, समाजसेवकों, संगठनों के विचार, विगत 3-4 बरसों से लिए जा रहे थे। तद्उपरांत बैठकों में सभी विचारों को समाहित किया गया और पंच परिवर्तन का विचार संघ ने हिंदू समाज के सामने रखा। असंतोष को जन्म देकर ही वामपंथ अपनी जड़े मजबूत करता आया है। वामपंथी विचारधारा के लिए 'जात-पात' सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। शूद्र, ठाकुर, बनिया, ब्राह्मणवाद जैसे शब्द वामपंथ के तरकश में रखे अलौकिक तीर हैं, जो राष्ट्र की भावना को भेद देते हैं। राष्ट्र भावना की जड़ में है शास्त्र, वेद, ऋचाएं। ये सभी को संस्कार से जोड़ती हैं। संस्कार का मार्ग, धर्म के आंगन में खुलता है। धर्म ही हमें सनातन रूपी अलौकिक सत्ता से रूबरू करवाता है। सनातन से साक्षात्कार होते ही हम अपनी जननी मातृभूमि मां भारती के ऋण को चुकाने हेतु सत्कर्म प्रारंभ कर देते हैं। वामपंथ झूठे नैरेटिव गढ़ते हुए सनातन को मार्ग से विचलित करने का कार्य पिछले 70 बरसों से करता आ रहा है, किंतु हमारे शास्त्र शाश्वत हैं, सत्य हैं।

जिस रामायण को महान् ऋषि वाल्मीकि ने लिखा, वहीं हमारे मंदिर-मठों में स्वीकार्य है। जाति में श्रेष्ठ, किंतु संस्कार विहीन रावण का वध श्रीराम ने किया। सारा खेल संस्कारों का है। नई सनातन पीढ़ी को समरसता के माध्यम से समाज को मजबूत दिशा देने का प्रयास करेगा संघ। संवाद के माध्यम से सामंजस्य स्थापना के बाद परिवार को समाज से जोड़ देना ही संघ की प्राथमिकता है। इसके लिए, संघ भी अपना एक रोड मैप तैयार कर रहा है। 'सर्वभवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया' हमारे ऋषि-मुनियों ने एक ऐसी धरा क कल्पाना की थी, जो हरी भरी हो, जहां जन मानस सुख से जीवनयापन करता हो व निरोगी काया को प्रथम सुख बताते हुए, वसुंधरा के प्रति अपने कर्तव्यबोध का ज्ञान कराया था।

प्रत्येक राष्ट्र के निर्माण में उस देश के नागरिकों का चरित्र व राष्ट्र के प्रति संवेदना महत्वपूर्ण होती है। व्यक्ति निर्माण व प्रथम चरण हैं कर्तव्य बोध। किसी भी राष्ट्र का उत्थान व पतन का महत्वपूर्ण बिन्दु, उस राष्ट्र के व्यक्ति से जुड़ा होता है। सभ्यता, संस्कृति के लिए सजगता के साथ-साथ राष्ट्र के उत्थान के लिए कर्तव्य बोध होना परम आवश्यक है। भारत के मूल स्वरूप में उसकी संस्कृति है। धर्म है। वैदिक ज्ञान, वैदिक गणित, योगाचार्य आदि महत्वपूर्ण विषयों की जरूरत पूरा विश्व महसूस कर रहा है। एक लंबी अवधि के उपरांत भारतीय सरकार भी अपनी संस्कृति, सभ्यता को लेकर जागृत अवस्था में आई है। व्यक्ति निर्माण समाज की प्रत्यक्ष तौर पर प्रभावित करने वाली इकाई है। इन्हीं सब चिंतन के प्रत्येक नगर, बस्ती में स्वयंसेवक सामाजिक समीक्षा करने में लग्न है। ब्यौरा भी प्रांत व क्षेत्र स्तर तक भेजा जा रहा है। संघ एक बार पुनः 'जौहरी' की भूमिका अदा करते हुए सामाजिक रत्नों को शोधित करने का बीड़ा उठा रहा है।

नक्सलवादः वैचारिक मोर्चे पर भी जरूरी है प्रतिबद्धता

सर्वेश कुमार सिंह

स्वतंत्र पत्रकार

'लाल आतंक' पराभव की ओर है। वर्ष 2025 को माओवाद के सशस्त्र संघर्ष के अंत के रूप में यादि किया जाएगा। भारत में लाल आतंक का अंत असंभव मान लिया गया था। एक पूर्व प्रधानमंत्री ने हताशा प्रकट कर दी थी। कह दिया था, यह देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ी चुनौती है, लेकिन आत्मविश्वास से लबरेज और संकल्पबद्ध गृहमंत्री अमित शाह ने इस असंभव को संभव बना दिया है। गृहमंत्री शाह ने घोषणा कर दी है कि 31 मार्च 2026 तक 'नक्सलवाद मुक्त भारत' होगा। इसकी कल्पना भी एक दशक पहले नहीं थी कि कोई इतने आत्मविश्वास के साथ संकल्प दिवस की घोषणा कर देगा।

तारीख बताकर नक्सलवाद का अंत करेगा, लेकिन ऐसा होता दिखायी दे रहा है, क्योंकि चार दिन में यानी कि 14 से 17 अक्टूबर के बीच शीर्ष नक्सल कमांडरों के नेतृत्व में तीन सौ से अधिक नक्सलवादियों ने आत्मसमर्पण कर दिया है। हाथों में एसएलआर, एके 47 और इंसास राइफलें संभालने वाले नक्सवादी इन तीन दिनों के भीतर हाथों में गुलाब और संविधान की प्रतियां लेकर पुलिस और प्रशासन के सामने आ गए, लेकिन, सशस्त्र संघर्ष को परास्त करने के बाद भी वैचारिक मोर्चे पर समर शेष है।

डेढ़ करोड़ के इनामी नक्सलवादी कमांडर और वैचारिक प्रेरक की भूमिका निभाने वाले भूपति ने 15 अक्टूबर को गढ़चिरोली में हथियार डाल दिए। समर्पण करने वाले नक्सलवादियों की संख्या 60 थी। इसके एक दिन बाद ही छत्तीसगढ़ के जगदलपुर में 210 नक्सलवादियों ने आत्मसमर्पण किया। यहां दंडकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी सदस्य भास्कर उर्फ राजमन मंडावी, कमेटी प्रवक्ता रूपेश उर्फ विकल्प, रनीता, राजू सलाम के नेतृत्व में समर्पण हुआ। इसके साथ ही बस्तर में बीएसएफ के सामने नक्सलवादियों ने हथियार डाले। आंतरिक सुरक्षा की सबसे बड़ी चुनौती का सामना करके भारत सफलता के एकदम निकट है। यह चुनौती लगभग छह दशक से भारत की आंतरिक सुरक्षा चिंता की केंद्र बिन्दु बनी हुई थी, लेकिन चार दिन में तीन सौ से अधिक नक्सलवादियों के आत्मसमर्पण से यह उम्मीद बंधी है कि अब भारत ने इस चुनौती का सफलता से सामना कर लिया है। ये आत्मसमर्पण छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र में शीर्ष माओवादी कमांडरों के नेतृत्व में हुए।

माओवादी विचार से प्रेरित नक्सलवाद की अब कमर टूट चुकी है। भूपति के आत्मसर्पण और उसके द्वारा अन्य साथियों को लिखे गए पत्रों से स्प्ष्ट है कि इनके वैचारिक प्रेरक ने तात्कालिक परिस्थियों को समझते हुए ही समर्पण का निर्णय लिया है। उसने अन्य साथियों को भी लिखा है कि अब सशस्त्र संघर्ष का समय नहीं है, परिस्थितियां अनुकूल नहीं है, इसलिए अहिंसा का रास्ता अपनाकर सामान्य जनजीवन में लौटना ही सही निर्णय होगा।

इस आतंक को संप्रग सरकार के कार्यकाल में 2010 में तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने देश की सुरक्षा के लिए सबसे बड़ी चुनौती करार दिया था, किंतु संयुक्त प्रगतिशील सरकार ने इसे जितनी बड़ी चुनौती बताया, उसके अनुपात में योजनाएं और अभियान पर्याप्त नहीं थे, बल्कि नक्सलवादियों के साथ आंध्र प्रदेश में वार्ता के लिए 2004 में एक तरफा कार्रवाई रोकने की नीति ने स्थिति को और अधिक भयावह बना दिया था। इसी का परिणाम था कि नक्सलवादियों ने कई जघन्य आतंकी घटनाओं को अंजाम दिया। इन घटनाओं से यह लगने लगा था कि लाल आतंक देश में बेलगाम है। वर्ष 2003 से 2013 का यह वही दौर था जब उन्होंने सुरक्षा बलों के काफिलों पर बड़े हमले किए थे। नक्सल आतंक 2013 में सबसे ज्यादा जिलों में व्याप्त था। उस समय देश के 126 जिले माओवादी हिंसा की घटनाओं से प्रभावित थे। अब 2025 की शुरुआत में यह संख्या घटकर 18 रह गई। मौजूदा समय में यह 11 जिलों तक सीमित है। इनमें भी सिर्फ तीन जिले ही अति प्रभावित की श्रेणी में हैं।

वर्ष 2013 में छत्तीसगढ़ के दरभा घाटी में घात लगाए बैठक नक्सलवादियों ने कांग्रेस नेताओं के काफिले पर हमला कर दिया था। इसमें 24 कांग्रेस नेता मारे गए थे। तेलुगू देशम पार्टी के नेता चंद्रबाबू नायडू पर 2003 में जानलेवा हमला किया गया था। दंतेवाड़ा में सीआरपीएफ के कैंप पर 2010 में हमला किया गया। इसमें 76 जवान शहीद हुए थे। नक्सलवादियों का यह सबसे बडा हमला था। उत्तर प्रदेश के चंदौली में नौगढ़ क्षेत्र में 20 नवंबर 2004 को पीएसी की गाड़ी को बारुदी सुरंग से उड़ा दिया गया था, इसमें 17 जवान शहीद हो गए थे। इसमें 12 जवान पीएसी के तथा 5 नागरिक पुलिस के थे।

गृह मंत्री अमित शाह ने आत्मविश्वास और सटीक योजना के साथ यह दृढ़ संकल्प व्यक्त किया है कि 31 मार्च 2026 तक देश नकस्लवाद मुक्त हो जाएगा, तो इस पर कोई संदेह नहीं होता। इसका कारण है कि जिस तेजी से नक्सली हथियार डाल रहे हैं। लाल गुलाब के फूल और संविधान हाथ में लेकर बाहर आ रहे हैं, उससे यह विश्वास होता है कि गृहमंत्री इस संकल्प को समय सीमा में या उससे भी पहले पूरा कर लेंगे।

जिस कुशलता और सुदृढ़ रणनीति के साथ केंद्र सरकार ने इस मोर्चे पर सफलता अर्जित की है, वह अमित शाह की दूरदर्शिता, कुशल रणनीतिक सूझबूझ और दृढ संकल्प को दर्शाता है। भारत की यह ऐसी उपलब्धि है, जिसे सुरक्षा की दृष्टि से तीन दशक की सबसे बड़ी घटना के रूप में देखा जा सकता है। यह लड़ाई किसी युद्ध से कम नहीं थी। इसमें जो जानें गईं, सरकारी संपत्तियों को जो नुक्सान हुआ, सरकारी धन का जो व्यय हुआ, वह किसी भी बाहरी युद्ध से कम नहीं था। नक्सलवाद ने पूर्वोत्तर और दक्षिण पूर्व के कई राज्यों में विकास को बाधित कर दिया था।

गृहमंत्री अमित शाह ने घोषणा कर दी है कि 31 मार्च 2026 तक 'नक्सलवाद मुक्त भारत' होगा। इसकी कल्पना भी एक दशक पहले तक संभव नहीं थी।

आमने

अगर किसी भी योग्य मतदाता का नाम सूची से हटाया गया तो टीएमसी लोकतांत्रिक तरीके से विरोध करेगी। हम एक पारदर्शी वोटर लिस्ट के पक्ष में हैं। अगर किसी का नाम हटाने की कोशिश हुई, तो लोकतांत्रिक तरीके से विरोध प्रदर्शन होगा। दिल्ली में निर्वाचन आयोग का घेराव होगा।

–**कुणाल घोष**

प्रवक्ता, तृणमूल कांग्रेस

सामने

बंगाल में कोई भी फर्जी या अवैध मतदाता नहीं होना चाहिए। ममता बनर्जी सरकार एसआईआर से इसलिए डर रही है, क्योंकि उनके वोटबैंक में रोहिंग्या और बांग्लादेशी घुसपैठिए शामिल हैं। टीएमसी को डर है कि अवैध मतदाताओं के नाम मतदाता सूची से हट जाएंगे।

–**केया घोष**, भाजपा नेता

'चिकन नेक' पर पाक की नापाक निगाह

दिग्विजय सिंह

कानपुर

ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भारत से पिटने के बाद अब पाकिस्तान, भारत के मित्र देशों और पड़ोसियों से अपने सैन्य रिश्ते को मजबूत करने में जुट गया है। यह कोशिश भारत को चौतरफा घेरने की है। भारत के सऊदी अरब से गहरे रिश्ते हैं। पाकिस्तान ने पहले सऊदी अरब से सैन्य समझौता किया। इसमें तय हुआ कि एक देश पर हमला दोनों देशों के विरुद्ध युद्ध माना जाएगा। इस समझौते से पहले पाकिस्तान ने बांग्लादेश को भारत के विरुद्ध किया और अब मालदीव से सैन्य समझौता करके यह बताने का प्रयास कर रहा है कि वह भारत को चैन से बैठने नहीं देगा, हालांकि वह भूल रहा है कि भले ही बांग्लादेश को उसने अपने पाले में कर लिया है, लेकिन मालदीव और सऊदी अरब को लाख कोशिश के बाद भी भारत के विरुद्ध नहीं कर पाएगा।

इंडिया आउट का नारा देकर मालदीव की सत्ता में आए मोहम्मद मुइज्जू ने पहले तो भारत के विरुद्ध खूब जहर उगला था, लेकिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के एक दांव ने उन्हें घुटने टेकने के लिए मजबूर कर दिया था। अब वे भारतीय नेतृत्व का गुणगान कर रहे हैं। बांग्लादेश और भारत के रिश्ते हमेशा मजबूत रहे हैं, लेकिन वहां की प्रधानमंत्री शेख हसीना के तख्तापलट के बाद पाकिस्तान को वहां जड़ें जमाने का मौका मिल गया, क्योंकि मुख्य सलाहकार मोहम्मद यूनुस की नीतियां भारत विरोधी रही हैं और वे अब कट्टरपंथियों के हाथ की कठपुतली बन गए हैं। यही वजह है कि बड़े पैमाने पर बांग्लादेश में अल्पसंख्यक हिंदुओं पर अत्याचार हो रहा है। मोहम्मद यूनुस लगातार भारत विरोधी बयान दे रहे हैं और कई बड़े प्रोजेक्ट को रद्द भी कर चुके हैं।

पाकिस्तान के दूसरे सबसे बड़े ताकतवर सैन्य कमांडर ज्वाइंट चीफ ऑफ स्टॉफ कमेटी के चेयरमैन जनरल साहिर शमशाद मिर्जा ने यूनुस के साथ बैठक की। यूनुस ने उन्हें एक विवादित नक्शा दिया, जिसमें भारत के कुछ हिस्से को बांग्लादेश का बताया गया है। भारत के विरोध में अंधे हो चुके मोहम्मद यूनुस किसी भी हद तक जाने को तैयार हैं। कहा जा रहा है कि वे चिकन नेक के करीब द्वितीय विश्वयुद्ध की पुरानी पड़ चुकी हवाई पट्टियों के रखरखाव की जिम्मेदारी पाकिस्तान को सौंप सकते हैं।

हाल ही में बांग्लादेश के सेना प्रमुख वकार जमा ने इन हवाई पट्टियों का दौरा किया था। जनरल साहिर शमशाद इसी सिलसिले में वहां जाना चाहता है, हालांकि अभी ये अटकलें हैं कि पाकिस्तान को हवाई पट्टियां सौंपी जा सकती हैं, लेकिन बांग्लादेश के हुक्मरानों का भारत के प्रति जो रवैया है उससे लगता है कि अटकलें सही हो सकती हैं। अगर ऐसा होता है तो भारत के लिए यह रणनीतिक रूप से अच्छा नहीं होगा।

चिकन नेक को सिलीगुड़ी कॉरिडोर भी कहा जाता है। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों को देश के बाकी हिस्सों से जोड़ने वाला अत्यंत महत्वपूर्ण और रणनीतिक रूप से संवेदनशील यह मार्ग काफी संकरा है। भारत सरकार ने यहां सेना, वायुसेना, रडार और मिसाइलों की तैनाती कर रखी है। यह भारत को चीन की चुंबी घटी के संदर्भ में रणनीतिक बढ़त देता है। भारत, नेपाल, बांग्लादेश और भूटान के बीच स्थित होने के कारण इसे संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है। बांग्लादेश की सत्ता में बैठे जिम्मेदार लोगों द्वारा इस चिकन नेक को लेकर दिए जाने वाले बयानों से भारत सरकार और हमारी सेना सतर्क है।

पिछले दिनों असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने बांग्लादेश को सख्त लहजे में चेतावनी देते हुए कहा था कि बांग्लादेश की दो-दो चिकन नेक को तोड़ दिया जाएगा। उनका इशारा बांग्लादेश के चटगांव और रंगपुर इलाकों को लेकर था। यह भी जानना जरूरी है कि पिछले एक साल से पाकिस्तान के सैनिक बांग्लादेशी सेना को प्रशिक्षित कर रहे हैं। कहा तो यह भी जा रहा है कि द्वितीय विश्वयुद्ध की पुरानी पड़ चुकी हवाई पट्टियों पर अमेरिका की भी नजर है। वह भी चाहता है कि बांग्लादेश की ये हवाई पट्टियां उसे मिल जाएं, ताकि वह यहां अपना एयरबेस बनाकर चीन और भारत पर नजर रख सके। अमेरिका के स्पेशल फोर्सेज के कमांडो की मौजूदगी भी बांग्लादेश में है, ऐसी चर्चाएं लगातार हो रही हैं।

जनरल साहिर शमशाद मिर्जा ने मालदीव की यात्रा की है। जनरल ने मालदीव से सैन्य संबंधों को और बढ़ाने पर चर्चा की है। मालदीव के राष्ट्रपति कार्यालय की ओर से जारी बयान में कहा गया है कि मुइज्जू और मिर्जा के बीच चर्चा दीर्घकालिक द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने पर केंद्रित रही। मुइज्जू भारत का विरोध करके ही सत्ता में आए थे। उन्होंने भारत के विरुद्ध अकड़ भी खूब दिखाई थी, लेकिन जब भारतीय पर्यटकों ने मालदीव से मुंह मोड़ लिया तो उनकी अकड़ ढीली हो गई, क्योंकि मालदीव की अर्थव्यवस्था में बड़ा योगदान भारतीय पर्यटकों का है।

अब मुइज्जु और उनकी सरकार के मंत्री भारत का विरोध करने से बचते हैं। ऐसे में ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भारतीय सेना के हाथों पिटे पाकिस्तान के साथ वे भारत विरोधी किसी गतिविधि का हिस्सा बनेंगे, यह मुश्किल है। वैसे तो सऊदी अरब से रक्षा समझौता करने के बाद पाकिस्तान के हुक्मरानों ने बड़े-बड़े दावे किए थे, लेकिन अफगानिस्तान से हुए संघर्ष में इस समझौते की हवा निकल गई थी।

भारत के विरोध में अंधे हो चुके मोहम्मद यूनुस 'चिकन नेक' के करीब द्वितीय विश्वयुद्ध की पुरानी पड़ चुकी हवाई पट्टियों के रखरखाव की जिम्मेदारी पाकिस्तान को सौंप सकते हैं।

सोशल फोरम

एक 'नींद' ने सुलझा दी गणित की गूढ़ समस्या

कोलंबिया विश्वविद्यालय में गणित के एक कोर्स के दौरान एक छात्र कक्षा में सो गया, जब उसकी नींद खुली, तो उसने देखा कि प्रोफेसर ने व्हाइट बोर्ड पर दो समस्याएं लिखी थीं। उसने सोचा कि ये होमवर्क है, इसलिए वह उन्हें अपनी नोटबुक में नोट करके घर ले गया।

ट्रवेल प्वाइंट

फेसबुक

जब उसने उन समस्याओं को हल करने की कोशिश की, तो वे उसे बेहद कठिन लगीं, लेकिन उसने हार नहीं मानी। घंटों लाइब्रेरी में बैठकर उसने संदर्भ पुस्तकों की मदद से अध्ययन किया और अंततः वह एक समस्या को हल करने में सफल हो गया, भले ही यह काफी चुनौतीपूर्ण था। अगले दिन कक्षा में प्रोफेसर ने जब होमवर्क के बारे में कुछ नहीं पूछा, तो वह चकित हुआ और खड़े होकर पूछा, "सर, आपने पिछले लेक्चर में दिए गए असाइनमेंट के बारे में कुछ क्यों नहीं पूछा?"

प्रोफेसर ने उत्तर दिया, "असाइनमेंट? वो तो मैंने केवल ऐसे उदाहरण के तौर पर लिखी थीं, जिन्हें अभी तक वैज्ञानिक हल नहीं कर पाए हैं।"

छात्र चौंक गया और बोला, "लेकिन मैंने उनमें से एक को हल कर लिया है! मैंने इस पर चार पेपर भी लिखे हैं।" उसकी इस उपलब्धि को बाद में मान्यता मिली और कोलंबिया विश्वविद्यालय में उसके लिखे चारों पेपर आज भी प्रदर्शित हैं।

इस छात्र का नाम था जॉर्ज डैंटजिग और यह समस्या Math Stack Exchange से ली गई थी। डैंटजिग ने यह सिद्ध किया कि Student's t-test के संदर्भ में, एकमात्र तरीका, जिससे हम ऐसी hypothesis testing बना सकते हैं, जो standard deviation से स्वतंत्र हो, वह है एक निरर्थक परीक्षण, जो हमेशा समान संभावना से रिजेक्ट या एक्सेप्ट करता है जो व्यावहारिक नहीं है।

यह कहानी हमें बताती है कि उन लोगों की बात मत सुनो, जो कहते हैं कि तुम कुछ नहीं कर सकते। आज की पीढ़ी अक्सर निराशा और नकारात्मकता से घिरी होती है। कुछ लोग जानबूझकर दूसरों के भीतर असफलता और हार का बीज बोते हैं, लेकिन तुम्हारे पास अपनी मंजिल पाने की ताकत है, बाधाओं को पार करने की शक्ति है और अपने सपनों को साकार करने का साहस है। बस खुद पर विश्वास रखो और लगातार प्रयास करते रहो।

सामयिकी

एसआईआर की जरूरत और सियासत के सवाल

चुनाव आयोग एसआईआर (मतदाता सूची विशेष गहन पुनरीक्षण) का दूसरा चरण शुरू करने जा रहा है। बारह राज्यों में मतदाता सूची विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) होगा। बिहार के बाद अब चुनाव आयोग ने दूसरे चरण में उत्तर प्रदेश राजस्थान, मध्यप्रदेश व छत्तीसगढ़ सहित देश के नौ राज्यों और तीन केंद्रशासित प्रदेशों में एसआईआर कराने जा रहा है। संबंधित राज्यों की मौजूदा वोटर लिस्ट फ्रीज हो गई है। एसआईआर प्रक्रिया शुरू हो गई है और सात फरवरी 2026 को खत्म होगी। इस दौरान चार नवंबर से चार दिसंबर तक बूथ लेवल ऑफिसर (बीएलओ) घर-घर जाकर फॉर्म भरवाने के साथ सत्यापन भी करेंगे। सात फरवरी 2026 को अंतिम मतदाता सूची जारी होगी। बीएलओ घर-घर जाकर जो गणना (एन्यूमरेशन) फॉर्म देंगे, इसमें मतदाता की हर डिटेल पहले से भरी होगी और फोटो लगानी होगी। इन राज्यों में 21 साल बाद एसआईआर की प्रक्रिया की जा रही है। इससे पहले 2002 से 2004 में एसआईआर किया गया था, इसलिए इस बार होने वाली पूरी प्रक्रिया में 2003 की वोटर लिस्ट को आधार बनाया जाएगा। चुनावी राज्य असम में अभी एसआईआर नहीं होगी। चुनाव आयोग के अनुसार असम के लिए अलग से रिवीजन ऑर्डर्स जारी किए जाएंगे और वहां अलग तारीख की घोषणा की जाएगी। अलबत्ता राजनीतिक दल मतदाता सूचियों पर लगातार सवाल उठा रहे हैं।

सुनील कुमार महला

स्वतंत्र पत्रकार

इस महाअभियान में एक दर्जन सूबों के करीब 51 करोड़ मतदाताओं के नाम की जांच की जाएगी और सात लाख से अधिक बूथ स्तरीय एजेंट (बीएलए) इस टास्क को अंजाम देंगे। इससे चुनाव आयोग को मतदाता सूची को अधिक सटीक और अद्यतन (अपडेट करने) बनाने में मदद मिलेगी। मृत, स्थानांतरित या दोहरी प्रविष्टियों (डबल एंट्रीज) को हटाकर पारदर्शिता बढ़ाई जानी है। एसआईआर अभियान एक मजबूत, निष्पक्ष और सहभागी लोकतंत्र की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। एक अच्छे लोकतंत्र की यही पहचान है कि उसकी चुनाव प्रक्रिया भरोसेमंद हो। एसआईआर के दौरान केंद्र या राज्य सरकार से जारी पेंशन का कागज सरकारी या स्थानीय निकाय, बैंक, पोस्ट ऑफिस, एलआईसी से जारी सर्टिफिकेट, जन्म प्रमाणपत्र, पासपोर्ट, शैक्षिक प्रमाणपत्र, स्थायी निवास प्रमाणपत्र, अधिकार प्रमाणपत्र, जाति प्रमाण पत्र, एनआरसी राज्य या स्थानीय निकाय का परिवार रजिस्टर, जमीन या आवास आवंटन सर्टिफिकेट, आधार जैसे दस्तावेज मान्य होंगे।

बिहार में जब चुनाव के लिए बहुत कम वक्त बचा था, तब चुनाव आयोग ने अचानक एसआईआर की शुरुआत क्यों कर दी! ऐसे सवाल उठाए गए थे। उस दौरान यह बात कही गई थी कि जिन राज्यों में विधानसभा चुनाव होने में पर्याप्त वक्त है, अगर वहां पहले एसआईआर कराया जाए तो यह देश व समाज के लिए बेहतर होगा। देश के विभिन्न राजनीतिक दलों और नागरिक समाज की भी समान जिम्मेदारी बनती है कि वे चुनाव प्रक्रिया को निष्पक्ष और पारदर्शी बनाने में अपना भरपूर सहयोग करें। जब सभी पक्ष अपनी भूमिका ईमानदारी से निभाएंगे, तभी लोकतंत्र की जड़ें मजबूत होंगी, इसलिए जब चुनाव आयोग पूरे देश में एक साथ चुनाव कराने की बात करता है, तो सबसे पहले उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उसकी मौजूदा जिम्मेदारियां बिना किसी विवाद और संदेह के पूरी हों। तभी देश की जनता का भरोसा इस संवैधानिक संस्था पर और अधिक मजबूत होगा। देश में एसआईआर अच्छी बात है, लेकिन इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि ऐसे मतदाताओं के नाम सूची से नहीं हटने चाहिए, जो पात्र हैं।

स्वामी-रुहेलखंड इंटरप्राइजेज के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक हरि ओम गुप्ता द्वारा अमृत विचार प्रकाशन, नवादा जोगियान, चक रोड, रोहिलखंड मेडिकल कॉलेज के सामने, बरेली (उ.प्र.), पिन कोड-243006 से मुद्रित एवं 932 कटरा चांद खां, भारत पेट्रोल पंप के सामने पीलीभीत बाईपास रोड बरेली (उ.प्र.) पिन कोड-243005 से प्रकाशित। **संपादक- राजेश श्रीनेत, स्थानीय संपादक- नवीन गुप्ता*** 0581-4000222 (कार्यालय), ईमेल- editorschoice@amritvichar.com, आर.एन.आई नं0-UPHIN/2019/78502, *इस अंक में प्रकाशित समाचार के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट की धारा 7 के अंतर्गत उत्तरदायी। (नोट-सभी विवादों का न्यायक्षेत्र बरेली होगा)।

फिल्म निर्माता मुजफ्फर अली की फिल्म उमराव जान के एक गीत को अक्सर लोगों को गुनगुनाते हुए सुना जाता है। दिल चीज क्या है आप मेरी जान लीजिए, दीवार-ओ-दर को गौर से पहचान लीजिए। इसके सुर, लय और ताल के साथ ही दिल में स्पंदन और मानस पटल पर कई तस्वीरें एक साथ उभरती हैं। फिल्म में उस दीवार और दर का संबंध कहां से है यह अलग बात है, लेकिन अयोध्या (तत्कालीन फैजाबाद) से इस दीवार और दर का गहरा नाता है। फिल्म के कई सीन फैजाबाद में पूरब का ताजमहल कहे जाने वाले बहू बेगम के मकबरे की बारादरी में शूट किए गए थे। उम्मत-उज़-ज़ोहरा 'बहू बेगम' अवध के नवाब शुजाउद्दौला की पत्नी थीं। यह मकबरा बहू बेगम ने ही बनवाया था। वर्तमान में यह ऐतिहासिक इमारत क्षरण के दौर से गुजर रही है। खंडहर में बदल रही है। अवैध कब्जे हो रहे हैं। कहने के लिए यह पुरातत्व विभाग के संरक्षण में है, लेकिन स्थिति ठीक नहीं है। कभी यह तत्कालीन फैजाबाद की शान थी। *-राजेंद्र कुमार पांडेय*

बदहाल हो रहा 'पूरब का ताजमहल'

बहू बेगम मकबरा का निर्माण

पूरब के ताज महल कहे जाने वाले बहू बेगम मकबरा का निर्माण अवध के तीसरे नवाब शुजाउद्दौला (जन्म 19 जनवरी 1732, निधन 26 जनवरी 1775) ने ईस्ट इंडिया कंपनी से 22-23 अक्टूबर 1764 को लड़ाई हारने, फैजाबाद को अपनी राजधानी बनाने और अकाल के दौर में लोगों को काम देने के लिए अपनी पत्नी उम्मत-उज-जोहरा (जिन्हें बाद में बहू बेगम के नाम से जाना गया) के लिए शुरू कराया था। यह गैर-मुस्लिम वास्तु कला का उत्कृष्ठ नमूना है। जानकार कहते हैं कि इसमें ईरान से आए कारीगर और सामानों के साथ देशी मजदूरों और सामान का प्रयोग किया गया। हालांकि नवाब इसे पूरा नहीं करा पाए। जिम्मेदारी उनके बेटे आसफुद्दौला के पास आई, लेकिन लखनऊ को राजधानी बनाने के बाद उसने इसे इसके हाल पर छोड़ दिया, तो बहू बेगम ने निर्माण को आगे बढ़ाया। निर्माण के दौरान ही उनकी भी मौत हो गई, लेकिन उन्होंने इसके लिए धनराशि की व्यवस्था पहले से कर रखी थी। इसी से उनके खास सिपहसालार दाराब अली खान ने 42 मीटर ऊंचे मकबरे का निर्माण पूरा कराया, जहां से पूरे शहर को देखा जा सकता है। शहर के मौलाना जफर अब्बास कुम्मी बताते हैं कि बहू बेगम मकबरे के साथ की इमारतें नवाबी शान-ओ-शौकत का बेजोड़ नमूना है। इसके निर्माण में चार सौ मजदूर आठ साल तक लगातार लगे रहे। नवाबी काल में पूरब के ताजमहल के साथ व्यवस्थित शहर बसाने के लिए कई निर्माण कराए गए। इनमें गुलाबबाड़ी के साथ चौक की ऐतिहासिक घंटाघर सहित इकदरें और तीन दरें है। चौक में ही सैकड़ों साल पुरानी मस्जिद हसन रजा खां भी है।

उत्तराखंड का रंगमंच
अपने ही रंगों की तलाश में

उत्तराखंड की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर के साथ रंगकर्म की स्थिति उतनी ही चुनौतीपूर्ण है। थियेटर की दुनिया में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर पहचान बना चुके वरिष्ठ अभिनेता एवं रंगकर्मी श्रीश डोभाल कहते हैं कि प्रदेश में रंगकर्म आज भी प्रोत्साहन और विजन के अभाव में पिछड़ा हुआ है। पेश हैं उनसे किए गए चुनिंदा सवालों के जवाब-

थियेटर से निकलता है फिल्मों का रास्ता

थियेटर सिर्फ अभिनय नहीं, बल्कि समाज का दर्पण है। फिल्मों की ओर जाने का रास्ता थियेटर से होकर ही निकलता है। यहां अनुशासन, गहराई और मनुष्य की आत्मा तक पहुंचने की शक्ति मिलती है। अगर उत्तराखंड इसे अपना ले, तो यहां से भी अगली पीढ़ी के निर्मल पांडे जन्म ले सकते हैं। आज जब मंच के परदे उठते हैं और रोशनी चेहरे पर पड़ती है, तो यह केवल एक नाटक की शुरुआत नहीं होती, बल्कि एक सपने का जीवित होना होता है। हमारे जैसे कलाकार उस सपने को जीते हैं और याद दिलाते हैं कि उत्तराखंड का रंगमंच अभी अपने असली रंगों की तलाश में है।

हरीश उप्रेती करन
हल्द्वानी

थियेटर के विकास में सरकार को गंभीर होना होगा

राज्य सरकार को रंगकर्म को लेकर गंभीर होना चाहिए। रंगकर्मियों के लिए कम से कम एक पुरस्कार तो होना ही चाहिए, ताकि कलाकारों का मनोबल बढ़े। अच्छे ऑडिटोरियम हों और वे आसानी से उपलब्ध भी कराए जाएं, तभी मंच पर नई पीढ़ी आएगी। अगर सरकार और समाज थोड़ी और गंभीरता दिखाए तो उत्तराखंड का रंगमंच भी नई ऊंचाइयों को छू सकता है।

रंगऋषि श्रीष डोभाल का परिचय

15 भाषाओं में नाटकों का निर्देशन, कन्नड़ में आठ नाटकों का मंचन, 35 से अधिक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय निर्देशकों के साथ काम और छह नाटकों का अंतर्राष्ट्रीय समारोहों में सफल मंचन, श्रीश डोभाल का यह सफर, उन्हें सच्चा रंगऋषि बनाता है। राजस्थान के राज्यपाल द्वारा प्रदान किया गया गोल्डन अचीवर्स अवॉर्ड उनकी उपलब्धियों में चार चांद लगाता है।

रक्त अभिषेक नाटक में रंगकर्मी श्रीश डोभाल

नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा (एनएसडी) से 1985 में स्नातक रहे श्रीश डोभाल ने प्रकाश झा की परिणति समेत नेशनल अवॉर्ड जीत चुकीं तीन फिल्मों के अलावा आसमां कैसे-कैसे और खिलती कलियां जैसे दो दर्जन से अधिक टीवी धारावाहिकों के अलावा कई टेलीफिल्मों में अभिनय किया है। हाल ही में उन्हें रंगमंच में उल्लेखनीय योगदान के लिए बलराज साहनी नेशनल अवॉर्ड से सम्मानित किया गया। वह राजकुमार राव अभिनीत 'बधाई दो' फिल्म में भी नजर आ चुके हैं। उनकी गढ़वाली फिल्म 'रैबार' 19 सितंबर को देश के प्रमुख शहरों और अमेरिका में रिलीज हुई है।

फिल्म और थियेटर में जमीन-आसमान का अंतर

फिल्म में गलती सुधारने का मौका होता है, थियेटर में नहीं। यहां दर्शक सामने होते हैं, उनकी सांसें आपके संवाद के साथ चलती हैं। एक चूक और पूरा अभिनय बेअसर। यही इसे कठिन भी बनाता है और खूबसूरत भी।

थियेटर से जीवन की आर्थिकी नहीं चलती

उत्तराखंड में कॉमर्शियल थियेटर का कोई ढांचा नहीं है। कलाकार अगर मंच से जुड़ा रहना चाहता है, तो उसे दूसरी आजीविका का सहारा लेना ही पड़ता है, जबकि महाराष्ट्र, गोवा या बंगाल में यही थियेटर जीवन जीने का साधन है।

चंबा की रामलीला में कभी बंदर तो कभी राक्षस बने

मेरे रंगमंच की शुरुआत चंबा की रामलीला से हुई, जहां कभी बंदर तो कभी रावण की सेना में राक्षस बन जाता था। उच्च शिक्षा के लिए देहरादून आया तो जागृति संस्था से जुड़ा और वहीं से रंगमंच की ओर झुकाव बढ़ा। 1981 में एनएसडी में चयनित होने के बाद खुद को पूरी तरह थियेटर को समर्पित कर दिया।

नवाब काल में चौक ही बाजार हुआ करती थी। शहर फैजाबाद के चौक इलाके की पहचान चारों ओर बने दरों (मेहराबदार दरवाजे) से भी होती है। इन्हीं दरों के बीच शहर का महत्वपूर्ण बाजार बसता था। इसे त्रिपोलिया कहा जाता था, जहां दुकानें होती थीं। अब इसे घंटाघर के नाम से जाना जाता है। यहां मौजूद दुकानों में अब भी कई सैकड़ों साल पुरानी हैं। इन दरों पर यूरोपियन शैली के बेलबूटे उकेरे गए हैं। यह दरें एक प्रकार से इंट्री गेट थे। बाजार को वास्तु और ज्योतिषीय गणना के हिसाब से अर्ध चंद्राकार बनाया गया है। दरों को बनाए जाने का मकसद रायल बाजार को सुरक्षा और भव्यता देना था। शाही परिवार से या फिर दूसरे लोग बाजार में दाखिले के लिए इसी गेट से अंदर जा सकते थे। उनकी जांच पड़ताल की जा सकती थी। दरों की नक्काशी भी अद्भुत थी। लखौरी ईंटों और चूना सुर्खी से बने इन दरों पर उकेरे गए बेलबूटे की नक्काशी आकर्षण का केंद्र थी। दरों के दोनों किनारों पर दो बड़ी मछलियों की तस्वीर उकेरी गई है। यह शाही चिह्न था। इनकी भी अलग एक कहानी है। स्वतंत्रता के बाद सरकार ने इसी से राज चिह्न लिए जाने की बात कही जाती है। दरों की नक्काशी और मछलियों की अपनी सांस्कृतिक पहचान है। अब तो इनका क्षरण हो रहा है, लेकिन किसी समय में यह शहर की शोभा थे। पिछले कुछ दिनों से पूर्वी तीनदरें की मरम्मत के साथ सजाया, संवारा और संरक्षित किया जा रहा है। वहां लगाए गए मजदूर बताते हैं कि इसे उसी पद्धति से बनाया जा रहा जैसे यह पहले बना था। उम्मीद है कि इसका आकर्षण फिर वापस लौटेगा।

शहर के बीचों-बीच स्थित घंटाघर

शहर के बीचों-बीच स्थित घंटाघर शहर की एक पहचान है। कभी घंटाघर के समय की आवाज पर शहर सोता और जागता था। घंटाघर को बलरामपुर स्टेट के राजा ने जार्ज फिफ्थ के भारत आने पर खुशनूदी में लगवाया था। इसकी तकनीक अद्भुत थी। इसे लंदन से मंगवाकर स्थापित किया गया था। कभी यह घड़ी पानी की लहरों से चलती थी। इसकी आवाज पूरे शहर को सुनाई पड़ती थी। बाद में यह अपनी आभा खोता चला गया।

नगर पालिका फैजाबाद के पूर्व चेयरमैन विजय गुप्ता बताते हैं कि घड़ी के चलने के लिए घंटाघर के नीचे एक कुंआ है। यहां से घिर्री और महीन तार से ऊपर की सुई व घंटे को जोड़ा गया था। कुएं के पानी में एक बार लहर उत्पन्न करने के बाद यह लगातार चलती और समय बताती रहती थी, लेकिन बाद में खराब हो गई। उन्होंने दो बार इसकी मरम्मत कराई। बरेली के कारीगर से इसे ठीक कराया गया। पहली बार कुएं के पानी से चली, लेकिन घिर्री और तार न मिलने के कारण दोबारा, उन्होंने इस पर इलेक्ट्रॉनिक घड़ी लगवाई। साल भर चलने के बाद यह भी बंद हो गई। बीच में इसकी मरम्मत की जिम्मेदारी अयोध्या विकास प्राधिकरण ने भी ली थी, लेकिन बाद में वापस कर दिया। इस समय इसकी जिम्मेदारी नगर निगम के पास है, लेकिन शहर की शान घंटाघर की घड़ी बंद पड़ी है।

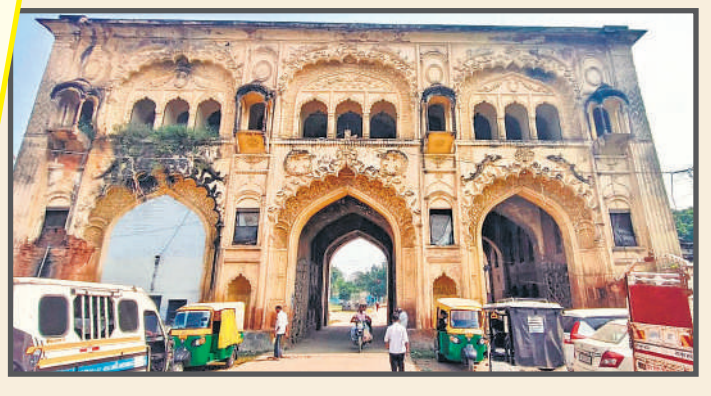

खोता जा रहा है आकर्षण

नवाबी काल की इमारतें अब अवैध कब्जों और रखरखाव के अभाव में बर्बाद हो रही हैं। इनका आकर्षण खोता जा रहा है। चाहे वह गुलाबबाड़ी की दरें हों या फिर बहू बेगम के मकबरे का दर। बहू बेगम मकबरे के दरें में कहीं दफ्तर तो कहीं स्कूल चल रहे हैं। चौक के दरे तो जगह-जगह रगड़ से टूट गए। अवैध कब्जे और गंदगी, अव्यवस्था से यह अपने हाल पर आंसू बहा रहे हैं। मरम्मत और रंगरोगन के अभाव में इनकी आभा जाती रही।

बाजार	सेंसेक्स ↓	निफ्टी ↓
बंद हुआ	84,628.16	25,936.20
गिरावट	150.68	29.85
प्रतिशत में	0.18	0.11

सोना 1,21,800 प्रति 10 ग्राम

चांदी 1,45,000 प्रति किलो

अमृत विचार

बरेली, बुधवार, 29 अक्टूबर 2025

www.amritvichar.com

बिजनेस ब्रीफ

छठ पर 50 हजार करोड़ रुपये का कारोबार

नई दिल्ली। कन्फेडरेशन ऑफ़ ऑल इंडिया ट्रेडर्स (कैट) के राष्ट्रीय महामंत्री एवं सांसद प्रवीन खंडेलवाल ने मंगलवार को छठ महापर्व पर देशभर में 50 हजार करोड़ रुपये से ज्यादा कारोबार होने का दावा किया। खंडेलवाल ने कहा कि देश भर में संपन्न हुए छठ महापर्व ने जहां देश की प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता का दर्शन कराया, वहीं बड़े स्तर पर आर्थिक प्रभाव भी दिखाई दिया। प्रधानमंत्री के स्वदेशी वस्तुओं को बेचने एवं ख़रीदने के आह्वान और जीएसटी की दरों में कटौती के साथ लोगों की आस्था और विश्वास का अद्भुत संगम इस बार छठ पर्व पर दिखाई दिया।

कार्स24 ने पेश की 30 दिन की रिटर्न गारंटी

नई दिल्ली। देश की अग्रणी ऑटोटेक कंपनी कार्स24 ने पुरानी कारों के व्यवसाय में जवाबदेही को नए सिरे से परिभाषित करते हुए 30-दिन की वापसी की घोषणा की है। कंपनी ने मंगलवार को बताया कि यदि कार्स24 से खरीदी गई कार खरीदार की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतरती है तो वे 30 दिन या 999 किमी के भीतर उसे वापस कर सकते हैं। देश में पहली बार इस तरह का कोई ऑफर शुरू किया गया है। कंपनी ने कहा है कि कार खरीदना परिवारों के लिए बड़े वित्तीय फैसलों में से एक होता है और लोग यह आश्वासन चाहते हैं कि वे जो गाड़ी चला रहे हैं वह वास्तव में भरोसेमंद है, न केवल पहले दिन बल्कि बाद में भी।

एमसीएक्स में तकनीकी खराबी से 4 घंटे देर से खुला बाजार, जांच शुरू

अनिश्चितता के बीच आपदा बहाली साइट पर स्थानांतरित करना पड़ा कामकाज

मुंबई, एजेंसी

मल्टी-कमोडिटी एक्सचेंज (एमसीएक्स) में मंगलवार को तकनीकी खराबी के कारण कामकाज बाधित रहा। इसके चलते एक्सचेंज में चार घंटे से ज्यादा देरी से कारोबार शुरू हो सका और कामकाज को आपदा बहाली साइट पर स्थानांतरित करना पड़ा।

मल्टी कमोडिटी एक्सचेंज (एमसीएक्स) ने कहा कि उसकी सभी कारोबारी प्रणालियां अब सामान्य रूप से काम कर रही हैं और इस मामले की जांच प्राथमिकता के आधार पर शुरू कर दी गई है। एमसीएक्स ने शेयर बाजार को बताया, एक्सचेंज में एक तकनीकी खराबी के कारण मंगलवार को कारोबार शुरू होने में देरी हुई। कामकाज को आपदा बहाली (डीआर) साइट पर स्थानांतरित कर दिया गया और कारोबार दोपहर 1.25 बजे शुरू हुआ। कमोडिटी एक्सचेंज ने आगे कहा कि सभी कारोबारी प्रणालियां अब सामान्य रूप से काम कर रही हैं। एमसीएक्स ने बताया कि इस मामले की जांच प्राथमिकता के आधार पर शुरू कर दी गई है। एमसीएक्स ने बताया, हम कारण की पहचान करने और जरूरी सुधारात्मक उपाय लागू करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। हमारे निष्कर्षों और की गई कार्रवाई के बारे में हम समय से सूचना देंगे। इससे पहले, तकनीकी खराबी के कारण एमसीएक्स पर व्यापारिक गतिविधियां चार घंटे से ज्यादा समय तक बाधित रहीं, जिससे सत्र की शुरुआत में कई बार देरी हुई और बाजार सहभागियों में अनिश्चितता पैदा हो गई।

चार बार घोषित किया समय, शुरू नहीं हुआ बाजार

एक्सचेंज ने शुरुआत में सुबह नौ बजे से शुरू होने वाले सत्र को सुबह 9:30 बजे, फिर 10:30 बजे, 11:49 और 12:35 बजे के लिए पुनर्निर्धारित किया था, और फिर दोपहर 1:20 से 1:24 बजे के बीच एक विशेष सत्र की घोषणा की, जिसके बाद दोपहर 1:25 बजे से सामान्य कारोबार शुरू हुआ। इस व्यवधान ने सोना, चांदी, कच्चा तेल और तांबा, जस्ता तथा एल्युमीनियम जैसी आधार धातुओं का कारोबार प्रभावित हुआ। बाजार खुलने के बाद इनकी कीमत में एकाएक गिरावट आई। एमसीएक्स के शेयर के भाव भी गिर गए।

सोना 4,100 रुपये गिरकर 1,21,800 पर, चांदी 6,250 रुपये टूटी

नई दिल्ली। अमेरिका-चीन व्यापार तनाव कम से सुरक्षित निवेश के विकल्प के रूप में मांग कम होने के कारण मंगलवार को राष्ट्रीय राजधानी के सर्राफा बाजार में सोने की कीमतें 4,100 रुपये गिरकर 1,21,800 रुपये प्रति 10 ग्राम रह गईं और वैश्विक बाजारों में 4,000 डॉलर प्रति औंस से नीचे आ गईं। अखिल भारतीय सर्राफा संघ के अनुसार, सोमवार को सोने की कीमत 1,25,900 रुपये प्रति 10 ग्राम पर बंद हुई थी। स्थानीय सर्राफा बाजार में, 99.5 प्रतिशत शुद्धता वाला सोना भी 4,100 रुपये गिरकर सभी करों सहित 1,21,200 रुपये प्रति 10 ग्राम रह गया, जो पिछले बंद भाव 1,25,300 रुपये प्रति 10 ग्राम पर था। एचडीएफसी सिक्योरिटीज के वरिष्ठ विश्लेषक (जिंस) सौमिल गांधी ने कहा, मंगलवार को सोने में और गिरावट आई और सुरक्षित निवेश मांग में कमी से यह और बढ़ गई। बिकवाली तेज होने से सोने की कीमतें तीन सप्ताह के निचले स्तर पर आ गईं। इस गिरावट का कारण तकनीकी बिक्री है। चांदी की कीमतों में भी मंगलवार को 6,250 रुपये की भारी गिरावट दर्ज की गई और यह सभी करों सहित 1,45,000 रुपये किलोग्राम रह गई। संघ के अनुसार, चांदी की कीमत सोमवार को 1,51,250 रुपये किलोग्राम पर बंद हुई थी। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में हाजिर सोना दबाव में रहा और 94.36 डॉलर या 2.37 प्रतिशत की गिरावट के साथ 3,887.03 डॉलर प्रति औंस रह गया। पिछले सत्र में, यह 132.02 डॉलर या 3.21 प्रतिशत की गिरावट के साथ 4,000 डॉलर के स्तर से नीचे बंद हुआ था।

- **चीन-अमेरिका में व्यापार तनाव कम होने का असर**

शेयर बाजार में मुनाफावसूली, सेंसेक्स 151 अंक फिसला

मुंबई। एशियाई बाजारों में कमजोरी के बीच मंगलवार को आईटी, टिकाऊ उपभोक्ता सामान और रियल्टी शेयरों में मुनाफावसूली से स्थानीय शेयर बाजार नुकसान के साथ बंद हुए। सेंसेक्स 151 अंक टूट गया जबकि निफ्टी को 30 अंक का नुकसान हुआ।

बीएसई का 30 शेयरों वाला मानक सूचकांक सेंसेक्स उतार-चढ़ाव भरे कारोबार में 150.68 अंक यानी 0.18 प्रतिशत की गिरावट के साथ 84,628.16 अंक पर बंद हुआ। मजबूती के साथ सत्र की शुरुआत करने वाला सेंसेक्स कारोबार के दौरान एक समय 559.45 अंक तक टूटकर 84,219.39 अंक पर आ गया था।

एनएसई का 50 शेयरों वाला मानक सूचकांक निफ्टी 29.85 अंक यानी 0.11 प्रतिशत की गिरावट के साथ 25,936.20 अंक पर बंद हुआ। सेंसेक्स की कंपनियों में ट्रेंट, आईसीआईसीआई बैंक, टेक महिंद्रा, बजाज फिनसर्व, महिंद्रा एंड महिंद्रा, पावर ग्रिड, टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज और बजाज फाइनेंस के शेयरों में प्रमुख रूप से गिरावट रही। टाटा स्टील, लार्सन एंड टुब्रो, भारतीय स्टेट बैंक, कोटक महिंद्रा बैंक के शेयर चढ़कर बंद हुए।

- **एशियाई बाजारों में कमजोरी का असर, निफ्टी भी 30 अंक गिरा**

अमेजन 14,000 कॉरपोरेट नौकरियों में करेगी कटौती

सिएटल। ऑनलाइन खुदरा कंपनी अमेजन कृत्रिम मेधा (एआई) पर खर्च बढ़ाने के कारण करीब 14,000 कॉरपोरेट नौकरियों में कटौती करेगी।

अमेजन में 'पीपल एक्सपीरियंस एंड टेक्नोलॉजी' की वरिष्ठ उपाध्यक्ष बेथ गैलेटी ने मंगलवार को कर्मचारियों को भेजे संदेश में कहा, यह छंटनी नौकरशाही को कम करने एवं संसाधनों को स्थानांतरित करने के माध्यम से कामकाज को और भी मजबूत करने की दिशा में कदम है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि हम अपने सबसे बड़े दांव पर निवेश कर रहे हैं जो हमारे ग्राहकों की वर्तमान एवं भविष्य की जरूरतों के लिए सबसे अधिक मायने रखता है।

देश का औद्योगिक उत्पादन सितंबर में चार प्रतिशत बढ़ा

नई दिल्ली, एजेंसी

देश का औद्योगिक उत्पादन (आईआईपी) विनिर्माण क्षेत्र के अच्छे प्रदर्शन के दम पर सितंबर में चार प्रतिशत बढ़ा है। मंगलवार को इस संबंध में आधिकारिक आंकड़े जारी किए गए हैं। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आईआईपी) के संदर्भ में मापा गया औद्योगिक उत्पादन सितंबर, 2024 में 3.2 प्रतिशत बढ़ा था।

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) ने अगस्त, 2025 के लिए औद्योगिक उत्पादन के वृद्धि के आंकड़ों को चार प्रतिशत के अस्थाई अनुमान से संशोधित कर 4.1 प्रतिशत कर दिया है। एनएसओ के नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, विनिर्माण क्षेत्र का उत्पादन सितंबर 2025 में 4.8 प्रतिशत बढ़ा जबकि सितंबर 2024 में यह चार प्रतिशत बढ़ा था। खनन उत्पादन में 0.4 प्रतिशत की गिरावट आई जबकि एक साल पहले इसमें 0.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई थी। बिजली उत्पादन में सितंबर में 3.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि एक साल पहले इसी अवधि में इसमें 0.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी।

वित्त वर्ष 2025-26 की अप्रैल-सितंबर अवधि (पहली छमाही) के दौरान औद्योगिक उत्पादन में तीन प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि 2024-25 की पहली छमाही में 4.1 प्रतिशत रही थी। विनिर्माण क्षेत्र में 23 उद्योग समूहों में से 13 ने सितंबर, 2024 की तुलना में सितंबर, 2025 में सकारात्मक वृद्धि दर्ज की। उपयोग-आधारित वर्गीकरण के अनुसार, पूंजीगत वस्तु खंड में सितंबर, 2025 में 4.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो एक वर्ष पहले की समान अवधि में 3.5 प्रतिशत थी।

- **सितंबर 2024 में हुई थी 3.2 प्रतिशत की वृद्धि**

अगले बजट में अपेक्षित कर बदलावों पर उद्योग जगत से सुझाव मांगे

नई दिल्ली। वित्त मंत्रालय ने एक फरवरी, 2026 को पेश होने वाले वित्त वर्ष 2026-27 के आम बजट में अपेक्षित कर बदलावों और कर अनुपालन में आसानी पर उद्योग जगत से सुझाव मांगे हैं। आम बजट से पहले व्यापार और उद्योग संघों को भेजे गए एक पारंपरिक संदेश में राजस्व विभाग की कर अनुसंधान इकाई ने उनसे 10 नवंबर तक अपने सुझाव भेजने को कहा है। ये सुझाव शुल्क संरचना, दरों में बदलाव और प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष करों के आधार को व्यापक बनाने, और अनुपालन को आसान बनाने से संबंधित हो सकते हैं।

नोएल टाटा समेत तीन ने मेहली मिस्त्री की ट्रस्टी के रूप में पुनर्नियुक्ति के खिलाफ किया मतदान

नई दिल्ली। टाटा ट्रस्ट्स के चेयरमैन नोएल टाटा और उनके करीबी माने जाने वाले दो अन्य प्रभावशाली न्यासियों ने मेहली मिस्त्री की ट्रस्टी के रूप में पुनर्नियुक्ति के खिलाफ मतदान किया है। इससे टाटा समूह की होल्डिंग कंपनी को नियंत्रित करने वाली परोपकारी इकाई में दरार और गहरी हो गई।

टाटा समूह के संरक्षक रतन टाटा का पिछले साल निधन होने के बाद नोएल टाटा को टाटा ट्रस्ट्स का प्रमुख नियुक्त किया गया था। मेहली मिस्त्री को दिवंगत रतन टाटा के करीबी माना जाता है। मामले से अवगत लोगों ने बताया कि टीवीएस मोटर कंपनी के मानद चेयरमैन वेणु श्रीनिवासन और पूर्व रक्षा सचिव विजय सिंह ने मंगलवार को मिस्त्री की न्यासी (ट्रस्टी) के रूप में पुनः नियुक्त किए जाने के खिलाफ मतदान किया। मिस्त्री का तीन साल का कार्यकाल समाप्त होने के बाद यह मतदान हो रहा था।

- **रतन टाटा के करीबी माने जाते हैं मेहली, खत्म हो चुका है कार्यकाल**

उन्होंने बताया कि हालांकि मिस्त्री के करीबी तीन अन्य न्यासी सिटीबैंक इंडिया के पूर्व सीईओ प्रमित झावेरी, मुंबई के वकील डेरियस खंबाटा और पुणे के समाजसेवी जहांगीर एच. सी. जहांगीर ने उनकी पुनर्नियुक्ति का समर्थन किया। यह विभाजन हाल ही में आम सहमति से संचालित दृष्टिकोण से एक स्पष्ट बदलाव का प्रतीक है।

आईओसी रूसी तेल खरीदना जारी रखेगी क्योंकि प्रतिबंध तेल पर नहीं बल्कि कुछ कंपनियों पर

नई दिल्ली, एजेंसी

इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन (आईओसी) और अन्य भारतीय तेल कंपनियां रूस से कच्चे तेल की खरीद पूरी तरह बंद नहीं करेंगी क्योंकि हालिया प्रतिबंध केवल विशिष्ट रूसी आपूर्तिकर्ता के लिए हैं न कि तेल पर। यह ऐसी स्थिति है जो गैर-प्रतिबंधित संस्थाओं के माध्यम से प्रवाह जारी रखने की संभावना को खोलती है।

अधिकारियों ने बताया कि अब तक चार रूसी तेल कंपनियों पर प्रतिबंध लगाए जा चुके हैं, लेकिन भारत को सबसे बड़ी आपूर्तिकर्ता कंपनी रोसनेफ्ट जो लगभग 45 प्रतिशत तेल प्रवाह का प्रबंधन करती है, वह वास्तविक उत्पादक नहीं बल्कि एक 'एग्रीगेटर' है। रूस के क्षेत्रों से कच्चे तेल का एकत्रीकरण अन्य गैर-प्रतिबंधित संस्थाओं द्वारा किया जा सकता है, जिससे आपूर्ति जारी रह सकती है। अमेरिका के पिछले सप्ताह रूस के दो शीर्ष कच्चे तेल निर्यातकों पर प्रतिबंध लगाए जाने के बाद भारतीय रिफाइनरियों ने रूसी तेल के लिए कोई नया ऑर्डर नहीं दिया है। वे बदले हुए परिदृश्य का आकलन कर रहे हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी भी अंतरराष्ट्रीय प्रतिबद्धता में कोई त्रुटि न हो।

- **गैर प्रतिबंधित संस्थाओं के जरिए जारी रखा जा सकता है प्रवाह**

आईओसी के निदेशक (वित्त) अनुज जैन ने कहा, जब तक हम प्रतिबंधों का पालन कर रहे हैं, हम रूसी कच्चे तेल की खरीद बिल्कुल बंद नहीं करेंगे। रूसी कच्चे तेल पर प्रतिबंध नहीं है। प्रतिबंध संस्थाओं और आपूर्ति श्रृंखलाओं पर लगे हैं।

राष्ट्रीय

तेजस्वी प्रण : हर परिवार में सरकारी नौकरी, वक्फ कानून पर रोक का वादा

महागठबंधन ने जारी किया घोषणापत्र, कहा- पुरानी पेंशन स्कीम भी बहाल करेंगे

पटना, एजेंसी

पटना में चुनावी घोषणा पत्र जारी करते तेजस्वी यादव और महागठबंधन के नेता।

महागठबंधन ने मंगलवार को बिहार विधानसभा चुनाव के लिए 'तेजस्वी प्रण' नाम से अपना संयुक्त घोषणापत्र जारी किया, जिसमें वादा किया गया कि उसकी सरकार बनने के 20 दिन के भीतर एक विधेयक लाकर हर परिवार के एक सदस्य को सरकारी नौकरी देने की प्रक्रिया शुरू कर दी जाएगी।

महागठबंधन ने इसके अलावा संसद द्वारा पारित वक्फ संशोधन अधिनियम पर बिहार में रोक लगाने, पुरानी पेंशन योजना बहाल करने, केंद्र सरकार द्वारा तैयार नई शिक्षा नीति के 'दुष्प्रभावों' की समीक्षा करने, आरक्षण की सीमा 50 प्रतिशत से अधिक बढ़ाने के लिए विधानसभा द्वारा पारित कानून को संविधान की नौवीं अनुसूची में शामिल करने की केंद्र सरकार से अनुशंसा करने तथा कई अन्य वादे किए हैं।

विपक्षी गठबंधन की तरफ से राजद नेता तेजस्वी यादव, कांग्रेस नेता पवन खेड़ा, विकासशील इंसान पार्टी के नेता मुकेश सहनी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) लिबरेशन के महासचिव दीपांकर भट्टाचार्य और कई अन्य नेताओं की मौजूदगी में चुनावी घोषणा पत्र जारी किया गया। इस मौके पर तेजस्वी ने कहा, हमने जनता के सामने हमेशा अपना 'विजन' रखा है और आज 'संकल्प पत्र' बिहार के सामने रख रहे हैं। हमने प्रण लिया है कि बिहार को नंबर-एक बनाएंगे। आरोप लगाया कि भाजपा के लोगों और भ्रष्ट अधिकारियों ने मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को पुतला बनाकर रखा है। वह नीतीश कुमार के प्रति पूरी सहानुभूति रखते हैं।

महागठबंधन ने घोषणापत्र में वादा किया है कि सरकार बनने के 20 दिन के भीतर ही बिहार के हर परिवार के एक सदस्य को सरकारी नौकरी देने के लिए विधेयक लाया जाएगा तथा 20 महीने की रूपरेखा के कार्यान्वयन पर काम शुरू हो जाएगा। यह वादा भी किया है कि सरकार पांच साल के कार्यकाल में सवा करोड़ रोजगार का सृजन करेगी। विपक्षी गठबंधन का कहना है कि अगर सरकार बनी तो दलितों, अनुसूचित जनजाति, अतिपिछड़े, पिछड़े वर्ग के भूमिहीन लोगों को शहरी क्षेत्र में तीन डिसमिल तथा ग्रामीण क्षेत्र में पांच डिसमिल आवासीय भूमि उपलब्ध कराई जाएगी।

शराबबंदी कानून से ताड़ी और महुआ को बाहर करेंगे

पटना। महागठबंधन ने घोषणापत्र में वादा किया है कि बिहार में लागू शराबबंदी कानून की समीक्षा की जाएगी और सुसंगत नीति बनाई जाएगी। इस कानून के तहत जेल में बंद दलितों और अन्य गरीबों को तत्काल राहत दी जाएगी। महागठबंधन ने यह भी कहा कि ताड़ी और महुआ आधारित पारंपरिक रोजगार को शराबबंदी कानून से मुक्त किया जाएगा। इस चुनावी राज्य में बिहार मद्यनिषेध और उत्पाद अधिनियम एक अप्रैल 2016 को लागू हुआ था। नीतीश कुमार द्वारा नवंबर 2015 के विधानसभा चुनाव में महागठबंधन की तरफ से इस कानून का वादा किया गया था।

पूर्व अग्निवीरों की निजी सुरक्षा एजेंसियों में भर्ती सुनिश्चित कराएं राज्य : केंद्र

नई दिल्ली। केंद्र ने सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों से कहा है कि वे पूर्व अग्निवीरों की निजी सुरक्षा एजेंसियों और प्रशिक्षण संस्थानों में भर्ती सुनिश्चित करें, क्योंकि उनके पास सशस्त्र बलों में काम का अनुभव है।

अधिकारियों ने बताया कि केंद्रीय गृह मंत्रालय ने सशस्त्र बलों में अपना कार्यकाल पूरा करने वाले अग्निवीरों के आगे के कैरियर को दिशा देने के लिए सभी राज्यों और केंद्र-शासित प्रदेशों को पत्र भेजा है। जून 2022 में केंद्र ने अग्निपथ भर्ती शुरू की थी, जिसके तहत तीनों सेनाओं में साढ़े 17 से 21 साल की आयु के युवाओं की चार वर्षों के लिए भर्ती का प्रावधान है। इनमें 25 प्रतिशत युवाओं को 15 वर्ष सेवा में बनाए रखा जाना है। अग्निवीरों का पहला बैच अगले साल सेवाकाल पूरा करेगा। पत्र में कहा गया है कि मंत्रालय के पुलिस दो प्रभाग को एक प्रणाली तैयार करने का निर्देश दिया गया है, जिसके तहत सरकारी विभागों, एजेंसियों, बैंकों द्वारा आउटसोर्स की गई सुरक्षा प्रदाता एजेंसियों में अग्निवीरों का समायोजन सुनिश्चित किया जा सके।

मानसिक स्वास्थ्य देखभाल के कानून के क्रियान्वयन पर एनएचआरसी रखेगा नजर

नई दिल्ली, एजेंसी

- **सुप्रीम कोर्ट ने याचिका को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को भेजा**

सुप्रीम कोर्ट ने मानसिक बीमारियों से ग्रस्त व्यक्तियों के अधिकारों और आवश्यकताओं की सुरक्षा के लिए 2017 के एक कानून के क्रियान्वयन के लिए दायर जनहित याचिका मंगलवार को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) को हस्तांतरित कर दी और उसे मामले की निगरानी करने को कहा।

न्यायमूर्ति पीएस नरसिम्हा और न्यायमूर्ति आर महादेवन की पीठ ने कहा कि आयोग को अधिवक्ता गौरव कुमार बंसल की 2018 में दायर याचिका पर गौर करना चाहिए। कोर्ट ने केंद्र के हलफनामे पर गौर किया और कहा कि मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017 को लागू करने के लिए वैधानिक प्राधिकरण गठित किए गए हैं। उसने यह भी कहा कि याचिकाकर्ता ने कई अन्य मांग भी की हैं। इनकी निगरानी भी एनएचआरसी करेगा। सुप्रीम कोर्ट ने तीन जनवरी, 2019 को केंद्र, सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को उस याचिका पर नोटिस जारी किया था जिसमें दावा किया गया था कि अधिनियम के प्रावधानों को लागू न करना नागरिकों के जीवन और स्वतंत्रता का घोर उल्लंघन है।

याचिका में किया गया था बदायूं की दरगाह का जिक्र

जनहित याचिका में कहा गया है कि मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम 2017 के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए यूपी के बदायूं में बड़े सरकार की दरगाह के मानसिक आश्रय स्थल में मानसिक बीमारियों से ग्रस्त व्यक्तियों को जंजीरों से बांध दिया गया है। अदालत ने ऐसे रोगियों की तस्वीरों पर गौर किया और इसे बहुत चिंता का विषय बताया था।

गलत तरह से गिरफ्तारी और कैद रखने के लिए मुआवजे की याचिका पर होगी सुप्रीम सुनवाई

नई दिल्ली। सुप्रीम कोर्ट बलात्कार और हत्या के एक मामले में बरी किए जाने से पहले 12 साल तक जेल में रहे एक व्यक्ति की उस याचिका पर सुनवाई के लिए सहमत हो गया जिसमें उसकी गलत तरीके से गिरफ्तारी, अभियोजन और दोषसिद्धि के लिए मुआवजे का अनुरोध किया गया है। न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और न्यायमूर्ति संदीप मेहता की पीठ ने सोमवार को कहा, नोटिस जारी करें जिसका जवाब 24 नवंबर को दिया जाए। हम अटॉर्नी जनरल या सॉलिसिटर जनरल से अनुरोध करेंगे कि वे इस मामले में अदालत की सहायता करें। पीठ इसी तरह के मुद्दे को उठाने वाली तीन अलग-अलग याचिकाओं पर सुनवाई कर रही थी। एक मामले में, याचिकाकर्ता को मार्च 2019 में महाराष्ट्र के ठाणे की एक अधीनस्थ अदालत ने मृत्युदंड दिए जाने का फैसला सुनाया था और नवंबर 2021 में मुंबई उच्च न्यायालय ने उसे सुनाई गई मौत की सजा बरकरार रखी। शीर्ष अदालत ने इस साल मई में त्रुटिपूर्ण और भ्रष्ट जांच का हवाला देते हुए याचिकाकर्ता को आरोपों से बरी कर दिया।

बाबरी मस्जिद से जुड़ी पोस्ट पर नहीं रद्द होगा केस

नई दिल्ली। सुप्रीम कोर्ट ने सोशल मीडिया पर बाबरी मस्जिद से जुड़े पोस्ट के आरोप में विधि स्नातक के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामले को रद्द करने से इन्कार कर दिया है। इस पोस्ट में कहा गया था कि बाबरी मस्जिद एक दिन फिर से बनाई जाएगी। न्यायमूर्ति सूर्यकांत और न्यायमूर्ति जॉयमाल्या बागची की पीठ ने कहा कि उसने पोस्ट देखी है और याचिकाकर्ता मोहम्मद फैय्याज मंसूरी के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं करना चाहती।

प्रशांत किशोर का पश्चिम बंगाल में टीएमसी मुख्यालय के पते पर भी वोट, चुनाव आयोग ने दिया नोटिस

पटना/कोलकाता। जन सुराज पार्टी के संस्थापक प्रशांत किशोर मंगलवार को उस समय विवादों में घिर गए जब यह सामने आया कि वह अपने गृह राज्य बिहार के साथ ही पड़ोसी राज्य पश्चिम बंगाल में भी मतदाता के रूप में पंजीकृत हैं। उन्हें चुनाव आयोग ने नोटिस जारी किया गया है।

पश्चिम बंगाल में एक निर्वाचन अधिकारी ने बताया कि आधिकारिक रिकॉर्ड के अनुसार पश्चिम बंगाल में मतदाता के रूप में पंजीकृत किशोर का पता 121, कालीघाट रोड के रूप में दर्ज है, जो कोलकाता के भवानीपुर विधानसभा क्षेत्र में तृणमूल कांग्रेस मुख्यालय का पता है। भवानीपुर विधानसभा क्षेत्र पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री और तृणमूल प्रमुख ममता बनर्जी का निर्वाचन क्षेत्र है। अधिकारी ने कहा, उनका मतदान केंद्र बी रानीशंकरी लेन स्थित सेंट हेलेन स्कूल के रूप में सूचीबद्ध है। पश्चिम बंगाल में 2021 के विधानसभा चुनावों के दौरान किशोर ने टीएमसी के लिए राजनीतिक सलाहकार के रूप में काम किया था। निर्वाचन अधिकारी ने बताया कि किशोर का नाम बिहार में रोहतास जिले के सासाराम संसदीय क्षेत्र के अंतर्गत करगहर विधानसभा क्षेत्र में पंजीकृत है। उनका मतदान केंद्र मध्य विद्यालय, कोनार है।

देश के पांच महानगरों में धंस रही है करीब 900 वर्ग किलोमीटर भूमि

नई दिल्ली, एजेंसी

नई दिल्ली और चेन्नई सहित भारत के पांच महानगरों में लगभग 900 वर्ग किलोमीटर भूमिः धंस रही है और इससे 19 लाख लोगों को प्रति वर्ष चार मिलीमीटर से अधिक की भू धंसाव दर का सामना करना पड़ सकता है। एक अध्ययन में यह आकलन किया गया है।

अमेरिका के वर्जीनिया पॉलिटेक्निक इंस्टीट्यूट और स्टेट यूनिवर्सिटी के अनुसंधानकर्ताओं ने 2015-23 के दौरान एकत्रित उपग्रह चित्रों का विश्लेषण किया और पाया कि 2,400 से अधिक इमारतों पर पहले से ही संरचनात्मक क्षति का खतरा मंडरा रहा है। अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि भूमि धंसने से बाढ़ और भूकंप का खतरा बढ़ सकता है। उन्होंने बताया कि जब किसी शहर के नीचे की जमीन असमान रूप से धंसती है, तो इससे नींव कमज़ोर हो सकती है, बिजली की लाइनें क्षतिग्रस्त हो सकती हैं और ढांचा कमजोर हो सकता है।

- **उपग्रह चित्रों के विश्लेषण के आधार पर दावा, पांचों शहरों में 25 हजार इमारतें खतरे में**

'नेचर सस्टेनेबिलिटी' पत्रिका में प्रकाशित अनुसंधान पत्र के मुताबिक अगर भूमि में धंसाव की यह दर जारी रही, तो अगले 50 वर्षों में 23,500 से ज्यादा इमारतों को बहुत ज्यादा संरचनात्मक क्षति का सामना करना पड़ सकता है। अध्ययन में दिल्ली और चेन्नई के अलावा मुंबई, कोलकाता और बेंगलुरु की इमारतों का अध्ययन किया गया।

भवनों का भार और अत्यधिक जलदोहन कारण

वर्जीनिया पॉलिटेक्निक इंस्टीट्यूट एंड स्टेट यूनिवर्सिटी के स्नातक छात्र और अनुसंधान पपत्र के प्रमुख लेखक नितेशनिर्मल सदाशिवम ने बताया कि अध्ययन में शामिल शहरों में भूमि धंसाव के प्रमुख कारकों में अत्यधिक भूजल का दोहन शामिल है तथा घनी आबादी वाले क्षेत्रों में भवनों का भार भी भूमि धंसाव का कारण बन रहा है। उन्होंने कहा, वर्तमान धंसाव दर और भविष्य की स्थितियों का सटीक विश्लेषण इंगित करता है कि दिल्ली-एनसीआर में भवनों को नुकसान पहुंचने का खतरा सबसे अधिक है।

- आठ करोड़ आबादी वाले पांचों महानगरों में करीब 13 लाख भवनों के अध्ययन किया गया। देश की जनसंख्या 2024 तक 0.92% की दर से बढ़ने का अनुमान है, जिससे कई शहरों में पानी की गंभीर कमी हो सकती है।
- नई दिल्ली में सबसे अधिक दर 51 मिमी प्रति वर्ष भू धंसाव देखी गई। इसके बाद चेन्नई में 31.7 मिमी प्रति वर्ष, मुंबई में 26 मिमी प्रति वर्ष, कोलकाता में सबसे अधिक 16.4 मिमी प्रति वर्ष और बेंगलुरु में यह दर 6.7 मिमी प्रति वर्ष देखी गई।

रक्षा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाएंगे भारत-यूएई

नई दिल्ली, एजेंसी

- यूएई के कमांडर मेजर जनरल सईद ने की द्विपक्षीय बैठकें

भारत और संयुक्त अरब अमीरात ने रक्षा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने, सैन्य संबंधों को मजबूत बनाने और क्षेत्रीय शांति एवं सुरक्षा के लिए साझा प्रतिबद्धता को दोहराया है। भारत यात्रा पर आए संयुक्त अरब अमीरात सेना के कमांडर मेजर जनरल यूसुफ़ मायुफ़ सईद अल हल्लामी की यहां दो दिन तक विभिन्न स्तर पर हुई बैठकों में दोनों पक्षों ने इस बारे में सहमति व्यक्त की।

मंगलवार को यहां एक आधिकारिक बयान में कहा गया है कि मेजर जनरल अल हल्लामी की यात्रा को दोनों देशों की सेनाओं के बीच दीर्घकालिक संबंधों को मज़बूत बनाने में महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जा रहा है। दो दिन की इस यात्रा के दौरान दोनों पक्षों के वरिष्ठ अधिकारियों के बीच महत्वपूर्ण बैठकें हुईं जिससे रणनीतिक और रक्षा हितों के क्षेत्रों में द्विपक्षीय सैन्य सहयोग, आदान-प्रदान और सहभागिता बढ़ाने की नींव और मज़बूत हुई।

यात्रा के दौरान मेजर अल हल्लामी ने अपने भारतीय समकक्ष सेना प्रमुख जनरल उपेंद्र द्विवेदी के साथ कई विषयों पर उपयोगी चर्चा कीं। ये बातचीत दोनों सेनाओं के बीच सहयोग बढ़ाने और उसे मजबूत करने के तरीकों पर केंद्रित रही। इस यात्रा के कई परिणामों से दोनों देशों के बीच संबंधों और अधिक मजबूत हुए हैं। संयुक्त अरब अमीरात सेना के कमांडर को ऑपरेशन सिंदूर पर विस्तृत जानकारी दी गई और उन्हें महानिदेशक सूचना प्रणाली और सेना डिज़ाइन ब्यूरो द्वारा भारत की रक्षा क्षमताओं और भारतीय सेना के लिए एआई रोडमैप के बारे में भी जानकारी दी गई।

इससे पहले मेजर जनरल अल हल्लामी ने राष्ट्रीय युद्ध स्मारक पर पुष्पांजलि अर्पित की। रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन का भी दौरा किया और रक्षा अनुसंधान एवं विकास विभाग के सचिव और डीआरडीओ के अध्यक्ष समीर वी. कामत से मुलाकात की। उन्होंने भारतीय रक्षा उद्योग के प्रतिनिधियों के साथ भी बातचीत की और ड्रोन और काउंटर ड्रोन सिस्टम, विस्फोटक, मिसाइल सिस्टम, आर्टिलरी सिस्टम और टैंकों के लिए प्रतिक्रियाशील कवच पर जानकारी ली।

विमान यात्रियों की सुरक्षा पर सवाल

इमरजेंसी लैंडिंग के बढ़ते मामले

अहमदाबाद में एयर इंडिया विमान हादसे के बाद देश में विमानों की इमरजेंसी लैंडिंग की घटनाएं बढ़ गई हैं। इस हादसे में 241 लोगों की मौत हो गई थी, हाल के दिनों में इमरजेंसी लैंडिंग कराने की कई घटनाएं हुईं। विमानों को अपने गंतव्य से बीच रास्ते ही लौटना पड़ा और इमरजेंसी लैंडिंग करनी पड़ी जिससे यात्रियों की जान सांसत में रही। जिससे विमानन क्षेत्र में सुरक्षा को लेकर सवाल उठने लगे हैं। ऐसे में विमानन कंपनियों को अपनी कार्यप्रणाली में सुधार करके यात्रियों का भरोसा जीतना होगा। आइए जानते हैं विमानों को क्यों करनी पड़ती है इमरजेंसी लैंडिंग और इन घटनाओं को रोकने के लिए नियामक संस्था डीजीसीए और सरकार ने क्या उपाय किए।

डीजीसीए के नियम

- विमान की जांच : विमान की नियमित जांच करनी होती है।
- पायलट की ट्रेनिंग : पायलटों को इमरजेंसी लैंडिंग के लिए ट्रेनिंग देनी होती है।
- सुरक्षा प्रोटोकॉल : विमान में सुरक्षा प्रोटोकॉल का पालन करना होता है।

नियमों का पालन करना जरूरी

इमरजेंसी लैंडिंग की घटनाएं विमानन क्षेत्र में एक बड़ा खतरा हैं। इन घटनाओं को कम करने के लिए विमान की नियमित जांच, पायलट की ट्रेनिंग, सुरक्षा प्रोटोकॉल का पालन और नई तकनीक का उपयोग करना होता है। डीजीसीए के नियमों का पालन करना भी जरूरी है।

इमरजेंसी लैंडिंग क्यों करनी पड़ती है?

- मौसम की खराबी : खराब मौसम के कारण विमान को इमरजेंसी लैंडिंग करनी पड़ती है।
- चिकित्सा आपातकाल : विमान में किसी यात्री को चिकित्सा आपातकाल होने पर इमरजेंसी लैंडिंग करनी पड़ती है।
- सुरक्षा खतरा : विमान में सुरक्षा खतरा होने पर इमरजेंसी लैंडिंग करनी पड़ती है।
- तकनीकी खराबी : विमान में तकनीकी खराबी होने पर इमरजेंसी लैंडिंग करनी पड़ती है।

कुछ प्रमुख घटनाएं

- एयर इंडिया की फ्लाइट एआई-379 को थाईलैंड के फुकेट इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर इमरजेंसी लैंडिंग करानी पड़ी। विमान में बम होने की सूचना मिली थी।
- एयर इंडिया की फ्लाइट एआई-117 को बर्मिंघम में इमरजेंसी लैंडिंग करानी पड़ी। रैम एयर टर्बाइन के सक्रिय होने के बाद विमान लैंड हुआ।
- 25 अक्टूबर को एयर इंडिया की फ्लाइट एआई-469 ने नागपुर में इमरजेंसी लैंडिंग की, जिसमें 170 यात्री सवार थे। यह एक संदिग्ध बर्ड स्ट्राइक के कारण हुई थी।
- 22 अक्टूबर को इंडिगो की फ्लाइट 6ई-6961 ने वाराणसी में इमरजेंसी लैंडिंग की, जिसमें 166 यात्री सवार थे। यह मध्य-वायु ईंधन रिसाव के कारण हुई थी।
- हाल के दिनों में स्पाइसजेट की एक फ्लाइट ने दिल्ली में इमरजेंसी लैंडिंग की, जिसमें एक तकनीकी खराबी के कारण फ्लाइट को वापस लौटना पड़ा।
- 11 अक्टूबर को एयर इंडिया एक्सप्रेस की फ्लाइट ने तिरुचिरापल्ली में इमरजेंसी लैंडिंग की। यह हाइड्रोलिक फेलियर के कारण हुई थी।

वर्ल्ड ब्रीफ

लेबनान में इजराइली ड्रोन को मार गिराया

बेरूत। लेबनान में संयुक्त राष्ट्र शांति मिशन ने एक इजरायली ड्रोन को मार गिराने का दावा किया है। बीबीसी की रिपोर्ट के अनुसार इजरायली सेना ने कहा कि ड्रोन नियमित खुफिया जानकारी इकट्ठा करने की गतिविधि कर रहा था। प्रवक्ता लेफ्टिनेंट कर्नल नदाव शोशानी ने 'एक्स' पर पोस्ट किया, प्रारंभिक जांच से पता चलता है कि पास में तैनात यूनिफिल बलों ने जानबूझकर ड्रोन पर गोलीबारी की और उसे गिरा दिया।

अमेरिका में शटडाउन खत्म करने का दबाव

वाशिंगटन। अमेरिका में संघीय सरकार के दूसरे सबसे लंबे 'शटडाउन' को समाप्त करने का दबाव अब बढ़ता जा रहा है क्योंकि लाखों अमेरिकी खाद्य सहायता खोने, सरकारी कर्मचारियों को वेतन न मिलने और हवाई अड्डों पर बढ़ती देरी जैसी कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। देश के सबसे बड़े संघीय कर्मचारी संघ 'अमेरिकन फेडरेशन ऑफ गवर्नमेंट एम्प्लॉइज' के अध्यक्ष एवरेट केली ने कांग्रेस से तुरंत वित्त पोषण विधेयक पारित करने की अपील की ताकि कर्मचारियों को पूरा वेतन दिया जा सके।

एफएटीएफ सूची से द. अफ्रीका बाहर निकला

जोहानिसबर्ग। दक्षिण अफ्रीका को करीब तीन साल बाद वित्तीय कार्रवाई कार्य बल (एफएटीएफ) की संदिग्ध (ग्रे) सूची से बाहर निकलने में सफलता मिली है। वैश्विक धन शोधन और आतंकवादी वित्तपोषण निगरानी संस्था ने पिछले सप्ताह पेरिस में अपनी तीन दिवसीय पूर्ण बैठक के समापन के बाद इस निर्णय की घोषणा की। एफएटीएफ की संदिग्ध सूची में शामिल देशों पर कड़ी निगरानी रखी जाती है और ऐसे देशों को धन शोधन, आतंकवादी वित्तपोषण आदि का मुकाबला करने के लिए रणनीतिक कमियों को दूर करना होता है।

सिडनी : हवाई अड्डे से 128 किग्रा कोकीन जब्त

सिडनी। सिडनी हवाई अड्डे पर 128 किलोग्राम कोकीन पाए जाने के बाद पुलिस ने दो लोगों को गिरफ्तार किया है। न्यू साउथ वेल्स राज्य पुलिस ने मंगलवार को कहा कि ये गिरफ्तारियां एक स्ट्राइक फोर्स द्वारा की गई जिसका गठन जुलाई में सिडनी के भीतरी-पश्चिमी उपनगरों में एक घर में हुयी गोलीबारी की जांच के लिए किया गया था। समूह ने शनिवार को सिडनी हवाई अड्डे पर आई एक खेप की पहचान की जिसमें 128 किलोग्राम कोकीन थी।

पूर्वी एशिया में शांति, स्थिरता व आर्थिक समृद्धि को देंगे बढ़ावा

कुआलालंपुर घोषणा पत्र में आसियान के सदस्य देशों ने व्यक्त की वचनबद्धता

कुआलालंपुर, एजेंसी

पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन के सदस्य देशों ने क्षेत्र में मतभेदों और विवादों का निपटारा अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार शांतिपूर्ण तरीकों से करने तथा शांति, स्थिरता और आर्थिक समृद्धि को बढ़ावा देने के प्रति वचनबद्धता व्यक्त करते हुए मंगलवार को यहां कुआलालंपुर घोषणा पत्र को आम सहमति से मंजूरी दी। घोषणा पत्र में अंतर्राष्ट्रीय कानूनों पर आधारित बहुपक्षवाद को शांतिपूर्ण और समृद्ध विश्व का आधार बताया गया है। विदेश मंत्री डा. एस जयशंकर ने 20 वें पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया।

घोषणा पत्र में कहा गया है कि पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय कानून और उसे बढ़ावा देने में संवाद तथा सम्मेलन की भूमिका बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है। इसमें कहा गया है कि हम आपसी समझ, सम्मान, विश्वास और मित्रता को बढ़ाने के महत्व को रेखांकित करते हैं साथ ही अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार शांतिपूर्ण तरीकों से मतभेदों और विवादों का निपटारा करने और क्षेत्र में शांति, स्थिरता और समृद्धि को बनाए रखने, बढ़ावा देने और बनाए रखने के साझा हित को भी रेखांकित करते हैं। सदस्य देशों ने कहा है कि हम संयुक्त राष्ट्र चार्टर सहित अंतर्राष्ट्रीय कानून पर आधारित बहुपक्षवाद के प्रति पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन की दृढ़ प्रतिबद्धता की पुनः पुष्टि करते हैं जो शांतिपूर्ण और समृद्ध विश्व का अनिवार्य आधार है। विदेश मंत्री जयशंकर ने सोमवार को 20वें पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में भारत का राष्ट्रीय वक्तव्य दिया। इससे पहले, लक्सन के साथ अपनी बैठक के दौरान, जयशंकर ने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की ओर से उन्हें हार्दिक शुभकामनाएं दीं। विदेश मंत्री ने 'एक्स' पर एक अन्य पोस्ट में कहा कि हमारे द्विपक्षीय सहयोग को आगे बढ़ाने और मुक्त एवं खुले हिंद-प्रशांत क्षेत्र के लिए उनकी (लक्सन की) प्रतिबद्धता का स्वागत है। जयशंकर ने अपने मलेशियाई समकक्ष हसन के साथ अपनी बैठक को गर्मजोशी से पूर्ण बताया और कहा कि दोनों विदेश मंत्रियों ने द्विपक्षीय सहयोग में प्रगति पर चर्चा की। विदेश मंत्री ने 'एक्स' पर एक पोस्ट में कहा कि उन्होंने म्यांमा की स्थिति पर भी चर्चा की। विदेश मंत्री ने कहा कि उन्होंने हसन को आसियान और पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलनों की सफल मेजबानी के लिए शुभकामनाएं भी दीं। रविवार को, जयशंकर ने मलेशिया के प्रधानमंत्री अनवर इब्राहिम के साथ वार्ता की थी। जयशंकर ने एक सोशल मीडिया पोस्ट में कहा कि हमारे द्विपक्षीय सहयोग और लोगों के बीच संबंधों को मजबूत करने के उनके (इब्राहिम के) विचारों का मैं सम्मान करता हूं। मलेशिया आसियान के वर्तमान अध्यक्ष के रूप में कुआलालंपुर में समूह के वार्षिक शिखर सम्मेलन और संबंधित बैठकों की मेजबानी कर रहा है।

आसियान शिखर सम्मेलन के समापन पर अध्यक्षता हस्तांतरण के दौरान फिलीपींस के राष्ट्रपति मार्कोस को हथौड़ा सौंपते मलेशिया के प्रधानमंत्री अनवर इब्राहिम।

अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के पालन पर भी जोर

घोषणा पत्र में यह भी कहा गया है कि पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन अंतर्राष्ट्रीय कानून को बढ़ावा देने और उसे कायम रखने के साथ-साथ पारस्परिक रूप से लाभकारी संबंधों के सिद्धांतों (बाली सिद्धांत) पर 2011 के पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन घोषणापत्र में निर्धारित सिद्धांतों को भी बढ़ावा देता रहेगा। सदस्य देशों ने कहा है कि पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन रचनात्मक, स्पष्ट तथा स्वतंत्र संवाद और विचार-विमर्श के साथ-साथ व्यावहारिक सहयोग के माध्यम के रूप में अपनी भूमिका को बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है जिससे कि पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन की प्रक्रिया समय के साथ सकारात्मक और उपयोगी बनी रहे और आसियान तथा क्षेत्र के हितों को फायदा पहुंचे।

आर्थिक सहयोग बढ़ाएंगे सदस्य देश

घोषणा पत्र में आसियान की केन्द्रीय भूमिका पर जोर देते हुए कहा गया है कि आर्थिक चुनौतियों के विरुद्ध क्षेत्रीय लचीलापन सुनिश्चित करने और क्षेत्र में विकास के अंतर को कम करने के लिए पारस्परिक हित के क्षेत्रों में भागीदार देशों के बीच आर्थिक सहयोग बढ़ाने की प्रतिबद्धता व्यक्त की गई है। सदस्य देशों ने सम्मेलन को सुदृढ़ बनाने के लिए भी अनेक कदम उठाने पर सहमति व्यक्त की।

भारतीय ने विमान में दो किशोरों को मारा चाकू

न्यूयॉर्क। शिकागो से जर्मनी जा रही एक उड़ान में 28 वर्षीय एक भारतीय ने कांटे वाले चम्मच से दो किशोरों पर वार किया और एक सह-यात्री को थप्पड़ मारा। मैसाचुसेट्स जिला के अमेरिकी अटॉर्नी कार्यालय ने सोमवार को बताया कि यह घटना शनिवार को लुफ्थांसा की एक उड़ान में हुई, जिसे घटना के बाद बोस्टन लोगान अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा ले जाना पड़ा। शिकायत के अनुसार, प्रणीत कुमार उसिरिपल्ली ने 17 वर्षीय एक किशोर यात्री के कंधे पर धातु के कांटा (फोर्क) से वार किया तथा फिर 17 वर्षीय एक और यात्री के सिर के पिछले हिस्से पर वार किया, जिससे उसके सिर में चोट आई। उसिरिपल्ली को 25 अक्टूबर को गिरफ्तार किया गया था और बाद में बोस्टन में संघीय अदालत में पेश किया जाएगा।

पाकिस्तान और अफगानिस्तान के बीच वार्ता जारी

इस्लामाबाद। पाकिस्तान और पड़ोसी अफगानिस्तान के बीच सीमा पार सैन्य और अन्य मुद्दों पर अपने विवाद को सुलझाने के लिए तुर्किये में वार्ता अब भी जारी है लेकिन वे अभी तक किसी नतीजे पर नहीं पहुंचे हैं। वार्ता शनिवार को शुरू हुई और सोमवार तक जारी रही, लेकिन कोई अंतिम समझौता नहीं हो सका। अधिकारियों के हवाले से 'डॉन' ने खबर दी कि अंतिम समझौता अभी नहीं हुआ है। बंद कमरे में हुई बातचीत से परिचित सूत्रों ने बताया कि हालांकि दोनों पक्षों के बीच अधिकांश बिंदुओं पर आपसी सहमति बन गई है लेकिन अफगान क्षेत्र से सक्रिय आतंकवादी समूहों के खिलाफ ठोस कार्रवाई मुख्य मुद्दा बना हुआ है। एक सूत्र के हवाले से कहा गया कि हमें उम्मीद थी कि हम जल्द ही अफगानिस्तान के साथ एक पारस्परिक दस्तावेज पर हस्ताक्षर कर सकेंगे जिसके बाद एक संयुक्त बयान जारी किया जाएगा लेकिन यह अब भी हमारी पहुंच से बाहर है। सोमवार की सुबह वार्ता काफी सकारात्मक रही। इसमें भाग लेने वाले अधिकारियों ने दोनों प्रतिनिधिमंडलों की ओर से उत्साहजनक प्रगति का जिक्र किया।

केन्या में छोटा विमान क्रैश, 11 लोगों की मौत

नैरोबी, एजेंसी

- तटीय क्षेत्र क्वाले में हादसा, मृतकों में अधिकांश विदेशी पर्यटक

केन्या के तटीय क्षेत्र क्वाले में मंगलवार तड़के एक छोटे विमान के दुर्घटनाग्रस्त हो जाने से उसमें सवार 11 लोगों की मौत हो गई। अधिकारियों ने बताया कि मृतकों में अधिकांश विदेशी पर्यटक शामिल हैं। अधिकारियों के मुताबिक, विमान 'मसाई मारा राष्ट्रीय अभयारण्य' जाते समय हादसे का शिकार हुआ। यह अभयारण्य अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय पर्यटन स्थल है।

विमानन कंपनी 'मोम्बासा एयर सफारी' ने एक बयान में कहा कि विमान में सवार जिन 11 लोगों की मौत हो गई, उनमें हंगरी के आठ व्यक्ति और दो जर्मन नागरिकों के अलावा केन्या निवासी एक पायलट शामिल है। बयान के अनुसार, दुर्घटना डायनी हवाई पट्टी से लगभग 40 किलोमीटर दूर एक पहाड़ी वन क्षेत्र में हुई। विमानन कंपनी ने इस बात की पुष्टि नहीं की कि विमान ने डायनी हवाई पट्टी से किस समय उड़ान भरी थी। उसने कहा कि उड़ान के समय पायलट संपर्क करने में विफल रहा और हवाई अड्डे के नियंत्रण टावर ने विमान का पता लगने से 30 मिनट पहले तक उससे संपर्क करने की कोशिश की थी।

एजेंसियों ने शुरू की हादसे की जांच

क्वाले काउंटी के आयुक्त स्टीफन ओरिंडे ने बताया कि जांच एजेंसियां स्थानीय समयानुसार सुबह साढ़े पांच बजे हुई दुर्घटना के कारणों की जांच कर रही हैं। उस समय तटीय केन्या में भारी बारिश हो रही थी। इसके पहले, केन्या के नागरिक उड्डयन प्राधिकरण ने कहा था कि विमान में 12 लोग सवार थे। डायनी से समुद्र तट के पश्चिम में स्थित मासाई मारा राष्ट्रीय अभयारण्य तक विमान से पहुंचने में दो घंटे का समय लगता है। यह अभयारण्य बड़ी संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करता है, क्योंकि यहां तंजानिया के सेरेन्गेटी से हर साल बड़ी संख्या में 'वाइल्डबीस्ट' प्रवास के लिए पहुंचते हैं। हिंद महासागर के किनारे केन्या के सफेद रेत वाले समुद्र तट दुनिया भर के पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

तुर्किये में भूकंप से इमारतें ढहीं, 22 घायल

अंकारा, एजेंसी

- रिक्टर स्केल पर 6.1 रही तीव्रता, जमीन से 5.99 किमी गहराई

पश्चिमी तुर्किये में सोमवार को 6.1 तीव्रता का भूकंप आने से कम से कम तीन इमारतें ढह गईं। अधिकारियों ने बताया कि जो इमारतें ढही हैं, वे पूर्व में आए एक भूकंप के कारण पहले ही क्षतिग्रस्त थीं। आपदा एवं आपातकालीन प्रबंधन एजेंसी (एएफएडी) के अनुसार, स्थानीय समयानुसार रात 10 बजकर 48 मिनट पर आए 6.1 तीव्रता के इस भूकंप का केंद्र बालिकेसिर प्रांत के सिंदिरगी शहर में जमीन से 5.99 किलोमीटर की गहराई में था। भूकंप के बाद आए कई झटके इस्तांबुल और आसपास के बर्सा, मनीसा और इजमिर प्रांतों में महसूस किए गए। देश के गृह मंत्री अली येरलिकाया ने बताया कि सिंदिरगी में कम से कम तीन खाली इमारतें और दो मंजिला एक दुकान ढह गई। ये इमारतें पहले आए भूकंप में क्षतिग्रस्त हो चुकी थीं। बालिकेसिर के गवर्नर इस्माइल उस्ताओग्लू ने बताया कि भूकंप के कारण 22 लोग घायल हो गए।

पूर्वी नेपाल में आया हल्का भूकंप

काठमांडू। पूर्वी नेपाल के कोशी प्रांत के संखुवासभा जिले में मंगलवार को 4.3 तीव्रता का भूकंप आया। अधिकारियों ने बताया कि इससे किसी भी तरह के नुकसान की तत्काल कोई खबर नहीं मिली है। राष्ट्रीय भूकंप निगरानी एवं अनुसंधान केंद्र के अनुसार भूकंप काठमांडू से 225 किलोमीटर पूर्व में तिब्बत सीमा के पास किमाथांगका क्षेत्र के आसपास सुबह 7:32 बजे दर्ज किया गया।

ट्रंप ने अमेरिका को बताया जापान का सबसे मजबूत सहयोगी

तोक्यो, एजेंसी

- जापान की नई प्रधानमंत्री साने ताकाइची की ट्रंप ने की प्रशंसा

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने मंगलवार से अपनी व्यस्त एशिया यात्रा की शुरुआत में जापान की प्रधानमंत्री साने ताकाइची से मुलाकात की और दोनों देशों को सबसे मजबूत स्तर पर सहयोगी करार दिया। वह जापानी प्रधानमंत्री को अमेरिकी विमानवाहक पोत पर भी ले गए जहां उन्होंने अमेरिकी सैनिकों से बातचीत की।

ट्रंप एशिया में अमेरिका के सबसे मजबूत सहयोगियों में शामिल जापान की यात्रा कर रहे हैं, फिर भी उनकी यात्रा के दौरान कई बातों को लेकर अनिश्चितता की स्थिति है। कुछ ही दिन पहले देश की पहली महिला प्रधानमंत्री बनीं साने ताकाइची को अपने देश के आर्थिक हितों की रक्षा करते हुए ट्रंप के साथ अपने रिश्ते मजबूत करने होंगे।

ट्रंप एक व्यापार समझौते के तहत 550 अरब अमेरिकी डॉलर का जापानी निवेश हासिल करने की कोशिश कर रहे हैं। ट्रंप ने मंगलवार को ताकाइची मुलाकात की और उनसे हाथ मिलाया। अमेरिकी राष्ट्रपति ने ताकाइची की तारीफ करते हुए कहा कि उन्होंने बहुत मजबूती से हाथ मिलाया। ताकाइची ने बताया कि जापान अगले साल अमेरिका की 250वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में वाशिंगटन को चेरी के 250 पेड़ देगा और चार जुलाई के इस समारोह के लिए अकिता प्रांत से आतिशबाजी भी करेगा।

नोबेल के लिए ट्रंप को नामित करेंगी ताकाइची

वाशिंगटन। व्हाइट हाउस का कहना है कि जापान की नई प्रधानमंत्री सनाई ताकाइची ने अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को बताया है कि वह उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार के लिए नामित कर रही हैं। ट्रंप को प्रभावित करने की चाहत रखने वाले विदेशी नेताओं के बीच ऐसा करना एक आम बात हो गई है, और हाल के महीनों में कई नेताओं ने उनके नामांकन का समर्थन किया है - या कम से कम ऐसा करने का वादा किया है। ट्रंप की इस समय जारी एशिया यात्रा में सोमवार को कंबोडियाई प्रधानमंत्री हुन मानेट ने भी उन्हें नामांकित किया।

आज का भविष्यफल

-पं.डॉ. ज्ञानेन्द्र शर्मा

आज की ग्रह स्थिति : 29 अक्टूबर, बुधवार 2025 संवत-2082, शक संवत 1947 मास-कार्तिक, पक्ष-शुक्ल पक्ष, सप्तमी 09 .23 तक तत्पश्चात अष्टमी।

आज का पंचांग

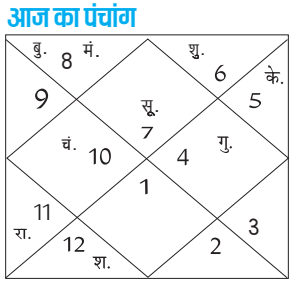

दिशाशूल- उत्तर, ऋतु- हेमंत।
चन्द्रबल- मेष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, मकर, मीन।
ताराबल- भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती।
नक्षत्र- उत्तराषाढ़ा 17 .29 तक तत्पश्चात श्रवण।

मेष — आज आपके साहस और आत्मविश्वास में वृद्धि होगी। किसी बड़ी समस्या से आपको छुटकारा मिल सकता है। अधीनस्थ कर्मचारी आपसे अत्यंत प्रसन्न रहेंगे। आपकी आर्थिक स्थिति सबल रहेगी। विदेश से नौकरी के अवसर मिलने के योग बन रहे हैं।

वृष — आज आपनी वाणी में अत्यंत मिठास रहेगी। अध्यात्मिक विषयों में आप रुचि लेंगे। दूर के रिश्तेदारों से मुलाकात हो सकती है। कार्यक्षेत्र में आपको बड़ा पद दिया जा सकता है। नए प्रोजेक्ट्स को लेकर आप अत्यधिक सक्रिय रहने वाले हैं।

मिथुन — आज भाग्य का साथ न मिलने से आपके काम प्रभावित हो सकते हैं। यात्रा के दौरान बड़ी परेशानियां खड़ी हो सकती हैं। शरीर में थकावट महसूस होगी। लेन-देन में त्रुटि होने के कारण आर्थिक नुकसान हो सकता है।

कर्क — आज व्यवसाय में बड़े अनुबंध हो सकते हैं। धन कमाने के नए स्रोत निर्मित हो सकते हैं। अविवाहित लड़कियों का विवाह तय हो सकता है। अपनी कार्यप्रणाली में अपेक्षित सुधार कर लें। विद्यार्थियों को उच्च शिक्षण संस्थानों में प्रवेश मिल सकता है।

सिंह — आज प्रेमी जन के साथ पर्यटन की योजना बना सकते हैं। सुबह काम का तनाव रहेगा, लेकिन शाम तक आप काफी शांत मूड में आ जायेंगे। बीमार लोगों के स्वास्थ्य में सुधार होगा। पारिवारिक कार्यों को लेकर भागदौड़ करनी पड़ सकती है।

कन्या — आज दिन काफी अच्छा रहेगा। व्यापार के नए विचार आपके मन में पूरे दिन आते रहेंगे। दर्शन और साहित्य के प्रति आप अत्यंत आकर्षित रहेंगे। भविष्य को लेकर अत्यधिक जागरूक रहेंगे। सरकारी नौकरी कर रहे लोगों पर काम का दबाव कम होगा।

तुला — आज आपका मन अत्यंत प्रसन्न रहने वाला है। नए ज्ञान को सीखने का प्रयास करेंगे। धन की कमी के कारण आपके काम रुक सकते हैं। विद्वान लोगों का सानिध्य प्राप्त होगा। कार्यक्षेत्र में अपनी छवि को लेकर चिंतित रहेंगे।

वृश्चिक — आज आपकी कोई इच्छा पूरी हो सकती है। सामाजिक कार्यों में आप भाग लेंगे। आपका स्वास्थ्य बेहतर रहेगा। दिखावे की प्रवृत्ति से आपको बचना चाहिए। नए काम की शुरुआत करने के लिए दिन अत्यंत शुभ है। कारोबार को लेकर यात्रा कर सकते हैं।

धनु — आज आप लोगों की सहायता करने के लिए उधार दे सकते हैं। गुप्त शत्रु आपका अहित करने का प्रयास करेंगे। आपके कार्यों से परिजन नाराज हो सकते हैं, लेकिन किंतु आपको उनसे झगड़ने के बजाय उन्हें अपनी बातें मनानी चाहिए।

मकर — आज किसी मांगलिक समारोह में सम्मिलित होने की संभावना है। छात्रों का पढ़ाई में प्रदर्शन बहुत शानदार रहेगा। वैचारिक तनाव होने की संभावना है। अजनबियों पर अधिक विश्वास न करें। जीवनसाथी आपके व्यवहार से प्रसन्न रहेगा।

कुंभ — आज व्यापार को लेकर बड़ी योजना बनाने से बचें। इष्ट मित्रों का सहयोग प्राप्त होगा। बढ़ते खर्चों को नियंत्रित करने के लिए आपको प्रयास करना चाहिए। आपको कार्यक्षेत्र में अनुशासनहीन व्यवहार से बचना चाहिए।

मीन — आज किसी मित्र के साथ गंभीर विषय पर चर्चा कर सकते हैं। परिवार में प्रसन्नता का वातावरण रहेगा। इंटरव्यू आदि में सफलता मिलने के योग बन रहे हैं। अपनी प्रतिष्ठा के कारण आप अत्यंत लोकप्रिय रहेंगे। बच्चों के साथ अच्छा समय बिताएंगे।

सुडोकू-144

सुडोकू एक तरह का तर्क वाला खेल है, जो एक वर्ग पहेली की तरह होता है। जब आप इस खेल को खेलना सीख जाते हैं तो यह बहुत ही सरलता से खेला जा सकता है। सुडोकू खेल में बॉक्स में 1 नंबर से 9 नंबर तक आने वाले अंक दिए हैं। इसमें कुछ बॉक्स खाली हैं, जिन्हें आपको भरना है। कोई भी अंक दोबारा नहीं आना चाहिए। एक सीधी लाइन और एक खड़ी लाइन तथा बॉक्स में नंबर रिपीट नहीं होना चाहिए।

	1				2	3		
4					1			
6						1		
	8			5				
	2	6						
	3			4				
		1	6					
		7	9					
							4	

सुडोकू - 143 का हल

5	7	1	4	3	9	2	8	6
3	6	9	7	2	8	4	1	5
2	4	8	5	6	1	7	3	9
4	8	3	9	1	7	6	5	2
1	9	5	2	8	6	3	7	4
6	2	7	3	5	4	8	9	1
7	1	4	6	9	3	5	2	8
8	5	6	1	7	2	9	4	3
9	3	2	8	4	5	1	6	7

रोहित ने एक और शतक लगाया जबकि कोहली ने भी रन बनाए। मैं उनके आगे की रणनीति का इंतजार कर रहा हूं। अगर आप क्रिकेट के प्रशंसक हैं तो इन खिलाड़ियों का जश्न मनाने का यही सही समय है।

-एबी डिविलियर्स
पूर्व कप्तान, दक्षिण अफ्रीका

स्टेडियम

बरेली, बुधवार 29 अक्टूबर 2025

अमृत विचार

www.amritvichar.com

हाईलाइट

भारत की महिला टीम को कजाकिस्तान ने बराबरी पर रोका

नई दिल्ली : भारत की अंडर-20 महिला टीम ने मंगलवार को कजाकिस्तान के शिमकेंट में बीआईआईके स्पोर्ट्स कॉम्प्लेक्स में दूसरे और अंतिम मैत्री मैच में कजाकिस्तान अंडर-19 के खिलाफ 1-1 से ड्रॉ खेला। दोनों गोल दूसरे हाफ में किए गए। एडेलिया बेक्कोझिना ने 47वें मिनट में मेज़बान टीम को बढ़त दिलाई, जबकि पूजा ने 55वें मिनट में इस दौरे का अपना दूसरा गोल करके स्कोर बराबर कर दिया। भारतीय टीम ने अगले साल होने वाले अंडर-20 महिला एशिया कप की तैयारी के सिलसिले में यह दौरा किया था जिसमें उसने दो मैत्री मैच खेले। भारत ने शनिवार को पहला मैत्री मैच 3-2 से जीता था।

डब्ल्यूटीटी फाइनल्स के लिए दीया-मानुष ने किया क्वालीफाई

नई दिल्ली : दीया चितले और मानुष शाह की जोड़ी ने मिश्रित युगल वर्ग में डब्ल्यूटीटी फाइनल्स के लिए क्वालीफाई कर लिया और ऐसा करने वाले पहले भारतीय टेबल टेनिस खिलाड़ी बने। डब्ल्यूटीटी फाइनल्स हांगकांग 2025 का आयोजन 10 से 14 दिसंबर तक किया जाएगा। इस प्रतियोगिता के साथ वैश्विक डब्ल्यूटीटी सीरीज का समापन होगा। इसमें सिर्फ शीर्ष रैंकिंग वाले खिलाड़ी हिस्सा लेंगे। पुरुष और महिला एकल में शीर्ष 16 जबकि युगल वर्ग में शीर्ष आठ टीम हिस्सा लेंगी। टूर्नामेंट की कुल इनामी राशि 13 लाख डॉलर होगी। दीया और मानुष ने पूरे साल प्रदर्शन में निरंतरता की बदौलत फाइनल्स में जगह बनाई। इस जोड़ी ने डब्ल्यूटीटी स्टार कंटेंडर ब्राजील 2025 में मिश्रित युगल में रजत पदक भी जीता।

एशियाई इनडोर और रिले के लिए भारत ने लगाई बोली

नई दिल्ली : भारत ने आगामी वर्षों में महाद्वीपीय और वैश्विक प्रतियोगिताओं के आयोजन के अपने प्रयासों के तहत 2028 एशियाई इनडोर एथलेटिक्स चैंपियनशिप और 2026 एशियाई रिले की मेजबानी के लिए बोलियां पेश की हैं। भारत अगर इन प्रतियोगिताओं की मेजबानी हासिल करने में सफल रहा तो यह पहली बार होगा जब देश इन दो महाद्वीपीय प्रतियोगिताओं की मेजबानी करेगा।

कर्नाटक क्रिकेट संघ के चुनाव 30 नवंबर को

बेंगलुरु : कर्नाटक राज्य क्रिकेट संघ (केएससीए) के चुनाव 30 नवंबर को होंगे। संघ के मुख्य कार्यकारी अधिकारी शुभेंदु घोष ने मंगलवार को यहां यह घोषणा की। रघुराम भट्ट की अगुवाई वाली समिति का कार्यकाल 30 सितंबर को खत्म हो गया था और चुनाव की तारीख की घोषणा में देरी से राज्य के क्रिकेट जगत में भ्रम की स्थिति पैदा हो गई थी। केएससीए के सीईओ घोष ने ईमेल के जरिए बताया कि 14 अक्टूबर 2025 को हुई हमारी बैठक में तय किया गया था और 25 अक्टूबर 2025 को हुई बैठक में दोहराया गया था, केएससीए के चुनाव रविवार, 30 नवंबर 2025 को होंगे। भारत के पूर्व तेज गेंदबाज वेंकटेश प्रसाद एक पैनल की अगुवाई कर रहे हैं जिसमें बीसीसीआई और केएससीए के पूर्व अधिकारी विनय मृत्युंजय जैसे अनुभवी प्रशासक शामिल हैं।

नई ऊर्जा और रणनीति के साथ खेलेगा भारत

पांच टी-20 मैचों की श्रृंखला : कप्तान सूर्यकुमार यादव के प्रदर्शन पर रहेंगी नजरें

कैनबरा, एजेंसी

पिछले कुछ समय से रन बनाने के लिए जूझ रहे भारतीय कप्तान सूर्यकुमार यादव ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ बुधवार को यहां होने वाले पहले टी-20 अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेट मैच में फॉर्म में लौटने की कोशिश करेंगे। दोनों टीम ने अपने गत 10 टी-20 अंतर्राष्ट्रीय मैचों में से आठ जीते हैं और एक-एक मैच हारे हैं, इसलिए मुकाबला बराबरी का होने की उम्मीद है। भारत का एक मैच टाई रहा, जबकि ऑस्ट्रेलिया का एक मैच बारिश की भेंट चढ़ गया था।

सूर्यकुमार का रन नहीं बना पाना टीम के लिए चिंता का विषय हो सकता है लेकिन अन्य खिलाड़ियों ने अब तक अच्छा प्रदर्शन किया है और वे ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ भी बेहतर खेल दिखाने को प्रतिबद्ध होंगे। सूर्यकुमार के कप्तान बनने के बाद भारतीय टीम ने निर्भीक क्रिकेट खेलने को प्राथमिकता दी है। यही वजह है कि उनकी कप्तानी में भारत ने अब तक जो 29 मैच खेले हैं उनमें से 23 में जीत मिली है। किसी भी कीमत पर आक्रामकता बनाए रखना और सूर्या के नेतृत्व कौशल के दम पर भारत ने सभी द्विपक्षीय श्रृंखलाओं में जीत हासिल की है और वह हाल में एशिया कप जीतने में भी सफल रहा था। ऑस्ट्रेलिया श्रृंखला अगले साल की शुरू होने वाले टी-20 विश्व कप के लिए भारत की वास्तविक तैयारी की शुरुआत है, जिसमें उसे 15 मैच खेलने हैं। लेकिन यह कहा जा सकता है कि इस श्रृंखला के परिणाम का कोई बड़ा प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि दक्षिण अफ्रीका और न्यूजीलैंड के खिलाफ अगले 10 मैच घरेलू परिस्थितियों में खेले जाएंगे। अच्छी बात यह है कि विश्व कप भी इसी तरह की परिस्थितियों में आयोजित होगा।

मुख्य कोच गौतम गंभीर ने सूर्या का खुलकर समर्थन किया और उनका मानना है कि कप्तान का लगातार कम स्कोर पर आउट होना चिंता का विषय नहीं है। सूर्यकुमार हालांकि बड़ी पारी खेलने के लिए बेताब होंगे। सूर्यकुमार ने 2023 में 18 पारियों में 156 के स्ट्राइक रेट से 733 रन बनाए थे, जिसमें दो शतक और पांच अर्धशतक थे। उन्होंने 2024 में 151 के स्ट्राइक रेट से 450 से थोड़ा कम रन बनाए, लेकिन 2025 में अब तक सूर्या 10 पारियों में 11 रन प्रति मैच की औसत से 100 रन ही बना पाए हैं। उनका स्ट्राइक रेट 105 से अधिक है, जिससे यह पता चलता है कि उन्हें रन बनाने में संघर्ष करना पड़ा है। एशिया कप में शानदार प्रदर्शन करने वाले सलामी बल्लेबाज अभिषेक शर्मा के लिए ऑस्ट्रेलियाई पिचों पर अतिरिक्त उछाल से निपटना नई चुनौती होगी और इसलिए कप्तान का योगदान और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। मनुका ओवल की पिच पर उछाल होने से सूर्या को अधिकतम लाभ हासिल करने का मौका मिलेगा, लेकिन जोश हेजलवुड उनके लिए परेशानी खड़ी कर सकते हैं। भारतीय गेंदबाजी आक्रमण की बात करें तो जसप्रीत बुमराह की मौजूदगी और वरुण चक्रवर्ती की चतुराई महत्वपूर्ण कारक होंगे। वरुण, कुलदीप यादव और अक्षर पटेल के 12 ओवर तथा बुमराह और अर्शदीप के शुरुआती स्पेल ट्रेविस हेड और मिशेल मार्श के खिलाफ महत्वपूर्ण होंगे। सभी की निगाहें ऑस्ट्रेलिया के नए टी-20 स्टार मिशेल ओवेन पर होंगी, जिन्होंने पिछले साल पंजाब किंग्स के लिए मैच खेला था। ओवेन ने एडिलेड में भारत के खिलाफ वनडे मैच में शानदार प्रदर्शन किया था, लेकिन स्पिन गेंदबाजों के सामने उनकी परीक्षा होगी।

ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ पावरप्ले अहम, बुमराह साबित होंगे उपयोगी : सूर्यकुमार

कैनबरा। भारतीय कप्तान सूर्यकुमार यादव ने मंगलवार को कहा कि ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ शुरू हो रही पांच मैचों की टी-20 अंतर्राष्ट्रीय श्रृंखला में पावरप्ले के ओवर काफी महत्वपूर्ण होंगे और तेज गेंदबाज जसप्रीत बुमराह की मौजूदगी से टीम की संभावनाएं बढ़ जाएंगी। सूर्यकुमार ने कहा कि ऑस्ट्रेलिया की आक्रामक खेल शैली के सामने बुमराह का होना फायदेमंद रहा है। सूर्यकुमार ने कहा कि पावर प्ले में गेंदबाजी करना चुनौती होती है। हमने देखा है कि ऑस्ट्रेलिया ने वनडे श्रृंखला और टी-20 विश्व कप में किस तरह का खेल खेला है। आपने एशिया कप में देखा होगा कि उन्होंने (बुमराह ने) पावर प्ले में दो ओवर गेंदबाजी करने की जिम्मेदारी ली थी, इसलिए हमारे लिए यह अच्छी बात है कि वह जिम्मेदारी संभाल रहे हैं। ऑस्ट्रेलियाई टीम के खिलाफ निश्चित रूप से पावर प्ले में गेंदबाजी करना अच्छी चुनौती होगी। बुमराह ऑस्ट्रेलिया में खेलने के मामले में भारतीय टी-20 टीम में सबसे अनुभवी खिलाड़ी हैं।

सूर्यकुमार ने कहा कि उनका मुख्य तेज गेंदबाज जानता है कि इस तरह की श्रृंखला के लिए किस तरह से तैयारी करनी होती है। जिस तरह से उन्होंने (बुमराह ने) कई वर्षों से क्रिकेट खेला है, उन्होंने खुद को शीर्ष पर बनाए रखा है और वह जानते हैं कि एक अच्छी श्रृंखला के लिए कैसे तैयारी करनी है, वह जानते हैं कि यहां कैसे क्रिकेट खेलना है। मुझे लगता है कि उन्होंने सभी खिलाड़ियों में से इस देश का सबसे ज्यादा बार दौरा किया है, इसलिए सभी खिलाड़ियों ने उनसे बात की है। वह काफी मददगार हैं। उनका हमारी टीम में होना हमारे लिए अच्छी बात है। सूर्यकुमार ने संकेत दिया कि चोटिल होने के कारण तीसरे और अंतिम वनडे से बाहर हुए ऑलराउंडर नीतीश रेड्डी टी-20 सीरीज के लिए उपलब्ध हो सकते हैं। वह ठीक है। कल उसने थोड़ी दौड़ लगाई और नेट्स पर बल्लेबाजी भी की। आज वह ब्रेक लेना चाहता था क्योंकि यह वैकल्पिक अभ्यास था। भारतीय कप्तान कहा कि टीम ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ पांच मैचों की टी-20 श्रृंखला को अगले साल होने वाले विश्व कप की तैयारी के रूप में देखती है। टीम संयोजन में ज्यादा बदलाव नहीं है, क्योंकि कई बार जब हम दक्षिण अफ्रीका गए थे, तो हम एक तेज गेंदबाज़, एक ऑलराउंडर और तीन स्पिनरों के साथ खेले थे। यहां की परिस्थितियां भी वैसी ही हैं। यह विश्व कप की तैयारी है, लेकिन इसके साथ ही यह काफी चुनौतीपूर्ण है। उम्मीद है कि हमारे लिए यह श्रृंखला अच्छी साबित होगी।'' भारतीय कप्तान ने कहा कि खिलाड़ी क्षेत्ररक्षण पर भी कड़ी मेहनत कर रहे हैं।

भारत : सूर्यकुमार यादव (कप्तान), अभिषेक शर्मा, शुभमन गिल (उपकप्तान), तिलक वर्मा, नितीश कुमार रेड्डी, शिवम दुबे, अक्षर पटेल, जितेश शर्मा (विकेटकीपर), वरुण चक्रवर्ती, जसप्रीत बुमराह, अर्शदीप सिंह, कुलदीप यादव, हर्षित राणा, संजू सैमसन (विकेटकीपर), रिंकू सिंह, वाशिंगटन सुंदर।

ऑस्ट्रेलिया : मिशेल मार्श (कप्तान), सीन एबॉट, जेवियर बार्टलेट, महली बियर्डमैन, टिम डेविड, बेन ड्वार्शिस, नाथन एलिस, जोश हेज़लवुड, ग्लेन मैक्सवेल, ट्रैविस हेड, जोश इंगलिस, मैथ्यू कुहनेमन, मिशेल ओवेन, जोश फिलिप, तनवीर संघा, मैथ्यू शॉर्ट, मार्कस स्टोइनिस। **मैच दोपहर 1:45 बजे।**

टी-20 विश्व कप से पहले ऑस्ट्रेलिया अपना आक्रामक रवैया जारी रखेगा : मार्श

कैनबरा। ऑस्ट्रेलिया के कप्तान मिशेल मार्श जानते हैं कि अति आक्रामक बल्लेबाजी करने की रणनीति हमेशा कारगर साबित नहीं होती है। उन्होंने कहा कि उनकी टीम अगले साल होने वाले टी-20 विश्व कप की तैयारियों के तहत आक्रामक रवैया अपनाना जारी रखेगी। ऑस्ट्रेलिया अगले साल फरवरी-मार्च में भारत और श्रीलंका की मेजबानी में होने वाले विश्व कप की तैयारी के तहत बुधवार से भारत के खिलाफ पांच मैचों की टी-20 अंतर्राष्ट्रीय श्रृंखला खेलेगा।

ऑस्ट्रेलिया ने आखिरी बार 2021 में टी-20 विश्व कप जीता था जबकि भारत 2024 में चैंपियन बना था। मार्श ने मंगलवार को कहा कि गत दो विश्व कप में हम अपेक्षित सफलता हासिल नहीं कर पाए और मुझे लगता है कि हमने एक टीम के रूप में खुद को चुनौती देने की बात की थी, ताकि हम विश्व कप जीत सकें। बल्लेबाजी इकाई के रूप में हमने काफी आक्रामक खेल दिखाया है। कुछ वर्षों में कई टीमों ने टी-20 क्रिकेट में इसी तरह का रवैया अपना है। अगर हम भारत में होने वाले विश्व कप की बात करें तो हम निश्चित तौर पर इसी तरह से खेलेंगे भले ही कुछ अवसरों पर हमें सफलता हासिल ना हो।

मार्श ने कहा कि भारतीय टीम बहुत अच्छी है और हम उसका सम्मान करते हैं। मुझे लगता है कि यह श्रृंखला काफी रोमांचक होगी। यह दो अच्छी टीमों के बीच मुकाबला है और इसलिए मैं इस चुनौती का बेसब्री से इंतजार कर रहा हूं। भारत के सलामी बल्लेबाज अभिषेक शर्मा शानदार फॉर्म में हैं। उन्होंने भारत की एशिया कप जीत के दौरान 44.85 की औसत और 200 की स्ट्राइक रेट से 314 रन बनाए। मार्श ने अभिषेक के बारे में कहा कि वह उनके लिए लय तय करते हैं। कुछ समय से वह आईपीएल में हैदराबाद की तरफ से शानदार प्रदर्शन कर रहे हैं। वह हमारे सामने अच्छी चुनौती पेश करेंगे।

अय्यर आईसीयू से बाहर, हालत स्थिर

नई दिल्ली, एजेंसी

भारत की वनडे टीम के उप कप्तान श्रेयस अय्यर को सिडनी के अस्पताल की गहन चिकित्सा इकाई (आईसीयू) से बाहर स्थानांतरित कर दिया गया है और उनकी हालत स्थिर है, जिससे उनके स्वास्थ्य को लेकर चिंता कम हो गई है। उन्हें तिल्ली की चोट (स्प्लीनिक रप्चर) और पसली में चोट के कारण भर्ती किया गया था।

ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ सिडनी में खेले गए तीसरे वनडे मैच के दौरान हर्षित राणा की गेंद पर एलेक्स कैरी का मुश्किल कैच लेने की कोशिश में अय्यर को बाईं पसली के निचले हिस्से में चोट लगी थी। शुरुआत में वह फिजियो की मदद से मैदान से बाहर चले गए, लेकिन बाद में उनकी हालत बिगड़ गई, जिससे उन्हें अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। परीक्षणों से पता चला कि तिल्ली में चोट लगने से आंतरिक रक्तस्राव हुआ था, जिसके बाद उन्हें आईसीयू में भर्ती कराया गया।

बीसीसीआई प्रगति पर रखेगी नजर

बीसीसीआई ने कहा कि अय्यर की हालत स्थिर है और वह अब भी निगरानी में है। मंगलवार 28 अक्टूबर को दोबारा किए गए स्कैन में काफी सुधार दिखा और श्रेयस ठीक हो रहा है। बीसीसीआई की मेडिकल टीम सिडनी और भारत के विशेषज्ञों से सलाह करके उसकी प्रगति पर नजर रखेगी। भारत के टी-20 कप्तान सूर्यकुमार यादव ने कहा कि ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ श्रृंखला के पहले मैच से पूर्व अय्यर की सेहत में सुधार के बारे में जानकर उन्हें खुशी हुई। देखिए, हम डॉक्टर नहीं हैं।

निकहत की नजरें विश्व मुक्केबाजी में अधिक अंक लेने पर

नई दिल्ली। दो बार की स्वर्ण पदक विजेता निकहत जरीन ने तीसरा विश्व चैंपियनशिप पदक चूकने की निराशा को पीछे छोड़ दिया है। अब उनका ध्यान आगामी विश्व मुक्केबाजी कप फाइनल में शीर्ष पुरस्कार जीतकर अधिकतम अंक जुटाने पर है। यह प्रतियोगिता 14 से 21 नवंबर तक ग्रेटर नोएडा में आयोजित की जाएगी।

फ्लाईवेट और लाइट फ्लाईवेट श्रेणियों में निकहत ने 2022 में इस्तांबुल और 2023 में नई दिल्ली में विश्व चैंपियनशिप के स्वर्ण पदक जीते थे। वह 2025 में लिवरपूल में क्वार्टर फाइनल में तुर्की की दो बार की ओलंपिक रजत पदक विजेता बुसे नाज काकिरोग्लू से हार गई थीं। निकहत ने विश्व मुक्केबाजी कप फाइनल्स के लोगो के अनावरण से जुड़े कार्यक्रम के इतर कहा कि मैं ये नहीं कहूंगी कि वहां (विश्व चैंपियनशिप) मेरा अभियान निराशाजनक था। एक साल के ब्रेक के बाद वापसी करते हुए दो मुकाबले जीतना वह भी एक मजबूत मुक्केबाज के खिलाफ आसान नहीं होता है।

वनडे रैंकिंग: मंधाना ने हासिल की करिअर बेस्ट रेटिंग

दुबई, एजेंसी

- दूसरे स्थान पर काबिज गार्डनर ने इंग्लैंड के खिलाफ नाबाद शतक के बाद छह स्थानों की लगाई छलांग
- दक्षिण अफ्रीकी कप्तान लॉरा वोल्वार्ड्ट भी अच्छी पारी की बदौलत दो स्थानों के सुधार के साथ शीर्ष तीन में पहुंचीं

भारत की अनुभवी सलामी बल्लेबाज स्मृति मंधाना ने घरेलू विश्व कप में शानदार प्रदर्शन के दम पर मंगलवार को करिअर की सर्वश्रेष्ठ रेटिंग हासिल करने के साथ महिला वनडे क्रिकेट में शीर्ष बल्लेबाज के रूप में अपनी स्थिति मजबूत कर ली। बायें हाथ की इस 29 साल की बल्लेबाज ने पिछले दो मैचों में न्यूजीलैंड के खिलाफ 109 और बांग्लादेश के खिलाफ नाबाद 34 रन बनाए हैं।

इन पारियों के बाद उनके 828 रेटिंग अंक हो गए, जो दूसरे स्थान पर मौजूद ऑस्ट्रेलिया की ऐश गार्डनर (731) से 97 अंक अधिक हैं। गार्डनर ने इंग्लैंड के खिलाफ अपने नाबाद शतक के बाद छह स्थानों की छलांग लगाई। मंधाना को इससे पहले सितंबर 2025 के लिए 'आईसीसी-महीने का सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी' चुना गया था। दक्षिण अफ्रीका की कप्तान लॉरा वोल्वार्ड्ट भी 90 और 31 रनों की पारी की बदौलत दो स्थानों के सुधार के साथ शीर्ष तीन में पहुंच गईं। इंग्लैंड की एमी जोन्स चार पायदान चढ़कर नौवें (656) स्थान पर पहुंच गई, जबकि एनाबेल सदरलैंड ने शीर्ष 40 में सबसे बड़ी छलांग लगाई और 16 स्थान के सुधार के साथ 16वें (613) स्थान पर पहुंच गईं। चोट से विश्व कप के बाकी मैचों से बाहर हुई भारतीय सलामी बल्लेबाज प्रतिका रावल 564 की रेटिंग के साथ शीर्ष 30 (27वें स्थान) में पहुंच गईं। इस विश्व कप में स्पिन की अहम भूमिका रही है और कई गेंदबाजों ने शानदार प्रदर्शन के बूते अपनी रैंकिंग में सुधार किया है। इंग्लैंड की सोफी एकलेस्टोन महिला वनडे गेंदबाजी रैंकिंग (747) में शीर्ष पर बनी हुई हैं। एकलेस्टोन को ऑस्ट्रेलिया की लेग स्पिनर अलाना किंग से कड़ी टक्कर मिल रही है। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ सात विकेट लिए थे। किंग ने करियर की सर्वोच्च रेटिंग 698 के साथ पांच स्थान की छलांग लगाई।

पाकिस्तान की नशरा संधू दक्षिण अफ्रीका की बायें हाथ की स्पिनर नॉनकुलुलेको म्लाबा (610) के साथ संयुक्त रूप से 10वें स्थान पर रहीं, जबकि तेज गेंदबाज मारिजन काप और सदरलैंड भी एक-एक स्थान के सुधार के साथ क्रमशः चौथे और सातवें स्थान पर पहुंच गईं। बायें हाथ की एक और स्पिनर लिंसे स्मिथ रैंकिंग में 24 स्थानों का सुधार करने में सफल रही। वह 444 रेटिंग के साथ 36वें स्थान पर पहुंच गयी है। गार्डनर ने विश्व कप में प्रदर्शन से हरफनमौला खिलाड़ियों की सूची में अपना पहला स्थान (रेटिंग 503) पक्का कर दिया है। इस सूची में वेस्टइंडीज की हेली मैथ्यूज को पछाड़कर काप दूसरे स्थान पर पहुंच गई है।

रणजी ट्रॉफी | ग्रीनपार्क स्टेडियम में चौथे दिन बारिश के कारण मैच रुका, ओडिशा के खिलाफ मैच ड्रा घोषित

यूपी की जीत में बारिश बनी रोड़ा, बढ़त के आधार पर मिले तीन अंक

कार्यालय संवाददाता, कानपुर

अमृत विचार। रणजी ट्रॉफी मुकाबले में ओडिशा के खिलाफ यूपी टीम की जीत में बारिश बाधा बनी। यूपी ने चौथे दिन मंगलवार को पहले सत्र में छह विकेट पर 140 रन बनाकर पारी घोषित की। जवाब में ओडिशा ने दूसरी पारी में 44 ओवर में तीन विकेट पर 151 रन बना लिए थे। इसके बाद बारिश के कारण खेल नहीं हो सका और रोकना पड़ा। मैच ड्रा घोषित किया गया। पहली पारी में मिली 166 रनों की बढ़त के आधार पर यूपी को इस मुकाबले में तीन अंक मिले। ओडिशा को एक अंक से ही संतोष करना पड़ा।

ग्रीनपार्क स्टेडियम में तीसरे दिन सोमवार को जहां बूंदाबांदी के कारण केवल 42 ओवर का ही खेल हो सका था, वहीं मंगलवार को कुल 46 ओवर ही फेंके जा सके। सोमवार को 128 ओवर में छह विकेट पर 380 रनों से आगे खेलते हुए यूपी ने अपनी पहली पारी 130 ओवर में छह विकेट पर 409 रन बनाकर घोषित की। विप्रज निगम 28 गेंदों में 31 और शिवम छह गेंदों में 12 रन बनाकर नाबाद रहे। ओडिशा से संबित ने तीन, बादल और सुमित को एक-एक सफलता मिली। पहली पारी में 166 रनों से पिछड़ चुकी ओडिशा की टीम ने इस बार संभलकर शुरुआत की, हालांकि 7.5 ओवर में 43 रनों के स्कोर पर शिवम मावी ने 23 रन पर आशीर्वाद को और 11.2 ओवर में 55 से स्कोर पर संदीप पटनायक को पांच रन पर आउट कर टीम को लगातार दो सफलता दिलाई। इसके बाद कुणाल त्यागी ने कप्तान शुभ्रांशु सेनापती को 11 रन पर अपना शिकार बनाया। हालांकि दूसरी तरफ डटे ओपनर स्वास्तिक सामल ने गोविंदा पोद्दार के साथ मिलकर खेल रोके जाने तक 72 रनों की साझेदारी करते हुए टीम को 44 ओवर में 151 रनों के स्कोर तक पहुंचाया। स्वास्तिक ने 113 गेंदों में आठ चौके व एक छक्के की मदद से नाबाद 71 और गोविंदा 72 गेंदों में 38 रन बनाकर नाबाद लौटे। बारिश के कारण मैच नहीं हो सका और ड्रा रहा। यूपी टीम से शिवम मावी ने दो और कुणाल त्यागी ने एक विकेट झटका।

विकेट लेने के बाद जश्न मनाते यूपी के खिलाड़ी। अमृत विचार

बंगाल ने गुजरात को 141 रनों से हराया

कोलकाता। मोहम्मद शमी के पांच विकेट की बदौलत बंगाल ने मंगलवार को रणजी ट्रॉफी ग्रुप सी मैच में गुजरात को 141 रन से हराया। शमी ने इसके साथ ही राष्ट्रीय टीम में जगह बनाने की अपनी दावेदारी मजबूत की। शमी ने घरेलू प्रतियोगिता में अब तक दो मैच में 68 ओवर में 15 विकेट चटकाकर अपनी फॉर्म और फिटनेस का अच्छा नजारा पेश किया है। शमी ने दूसरी पारी में 38 रन पर पांच विकेट चटकाए, जिससे गुजरात की टीम 327 रन के लक्ष्य का पीछा करते हुए दूसरी पारी में 185 रन पर ढेर हो गई। शमी ने मैच में आठ विकेट चटकाए। पहली पारी में छह विकेट चटकाने वाले बाएं हाथ के स्पिनर शहबाज अहमद को मैन ऑफ द मैच चुना गया। रामनगर में उत्तराखंड ने रेलवे के पहली पारी में 333 रन के जवाब में 398 रन बनाकर 65 रन की बढ़त और तीन अंक हासिल किए। रेलवे को एक अंक मिला। उत्तराखंड की की ओर से युवराज चौधरी ने 92 रन बनाए जबकि भूपेन लालवानी ने 78 रन की पारी खेली।

द. अफ्रीका को पेश करनी होगी कड़ी चुनौती

गुवाहाटी, एजेंसी

गुवाहाटी में प्रशिक्षण सत्र के दौरान द. अफ्रीका की क्रिकेटर।

लीग चरण में जीत हासिल कर सेमीफाइनल में पहुंचने वाली दक्षिण अफ्रीका की टीम को महिला वनडे विश्व कप के अंतिम चार के मुकाबले में अगर चार बार के चैंपियन इंग्लैंड के सामने कड़ी चुनौती पेश करनी है तो उसके बल्लेबाजों को अच्छा प्रदर्शन करना होगा। अफ्रीका को लीग चरण में जिन दो मैच में हार मिली थी, उनमें उसके बल्लेबाज नाकाम रहे।

पहले मैच में 69 रन पर आउट होने के बाद निराश अफ्रीकी टीम ने अच्छी वापसी की तथा न्यूजीलैंड, भारत, बांग्लादेश, श्रीलंका और पाकिस्तान पर जीत दर्ज करके सेमीफाइनल में पहुंचने में सफल रही। स्पिनरों के सामने उसके बल्लेबाजों का संघर्ष ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ अंतिम लीग खेल में फिर से सामने आया, जिसने उन्हें 24 ओवरों में सिर्फ 97 रन पर ढेर कर दिया। इंग्लैंड एक बार फिर उसकी इस कमजोरी का फायदा उठाने की कोशिश करेगा और अफ्रीकी बल्लेबाजों को रोकने के लिए न केवल अपनी ऑलराउंड ताकत पर बल्कि स्पिन तिकड़ी सोफी एक्लेस्टोन, लिंसे स्मिथ और चार्ली डीन पर भी निर्भर करेगा। तेज गेंदबाज लॉरेन बेल को शुरू में दबाव बनाना होगा, जबकि एलिस कैप्सी अच्छी लय में हैं। उन्होंने टूर्नामेंट में अब तक पांच विकेट लिए हैं। इंग्लैंड के लिए हालांकि स्टार स्पिनर एक्लेस्टोन की चोट चिंता का विषय बनी हुई है। वह न्यूजीलैंड के खिलाफ खेले गए मैच में चोटिल हो गई है। इंग्लैंड को उम्मीद है कि वह अफ्रीका के खिलाफ मैच तक पूरी तरह फिट हो जाएगी।

इंग्लैंड : नैट स्कवर-ब्रंट (कप्तान), एम अर्लट, टैमी ब्यूमोंट, लॉरेन बेल, एलिस कैप्सी, चार्ली डीन, सोफिया डंकले, सोफी एक्लेस्टोन, लॉरेन फाइलर, सारा ग्लेन, एमी जोन्स, हीथर नाइट, एम्मा लैम्ब, लिन्सी स्मिथ, डैनी व्याट-हॉज।

दक्षिण अफ्रीका : लौरा वोल्वार्ड्ट (कप्तान), एनेके बॉश, तज़मिन ब्रिट्स, नादिन डी क्लार्क, एनेरी डर्कसन, सिनालो जाफ्ता, मारिज़ान काप अयाबोंगा खाका, मसाबाता क्लास, सुने लुस, करबो मेसो, नॉनकुलुलेको म्लाबा, तुमी सेखुखुने, नोंडुमिसो टंगारियोन। **– मैच दोपहर 3 बजे।**